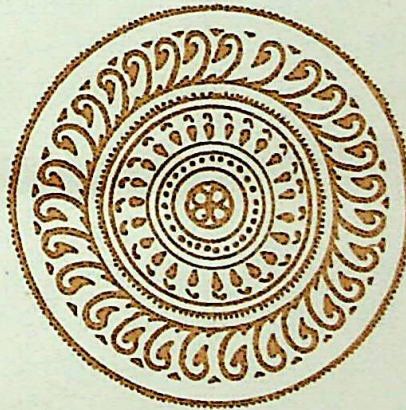


Hindi

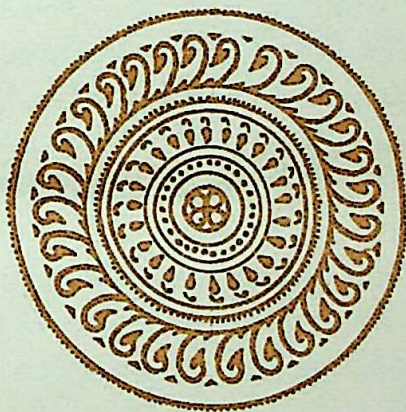
2001

माँ आनन्दमयी

अ मृत वा र्ता



अमृत वार्ता



SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

* Branch Ashrams *

1. AGARPARA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P. O. Kamarhati ,
Calcutta-700058 (Tel : 033-5531208)
2. AGARTALA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Palace Compound, P.O. Agartala-799001. West Tripura
3. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Patal Devi,
P.O. Almora-263602, (Tel : 05962-33120)
4. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Dhaul-China,
Almora-263881, (Tel : 05962-62013)
5. BHIMPURA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Bhimpura,
P.O. Chandod, Baroda-391105, (Tel : 02663-833208)
6. BHOPAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P. O. Bairagarh,
Bhopal-462030, M.P. (Tel : 0755-521227)
7. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Kishenpur,
P.O. Rajpur, Dehradun-248009 (Phone : 0135-734271)
8. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalyanvan, 176, Rajpur Road, P.O. Rajpur,
Dehradun-248009, (Phone : 0135-734471)
9. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram.
P.O. Raipur Ordnance Factory, Dehradun-248010
10. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
47/A Jakhan, P.O. Rajpur, Dehradun,
11. JAMSHEDPUR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Near Bhatia Park, Kadma, Jamshedpur-831005, Bihar
12. KANKHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Kankhal,
Hardwar-249408, (Tel : 0133-416575)
13. KEDARNATH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Near Himlok,
P.O. Kedarnath, Chamoli-246445,
14. NAIMISHARANYA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Puran Mandir,
P.O. Naimisharanya, Sitapur-261402, U.P.

माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता

श्रीश्री माँ आनन्दमयी के दिव्यजीवन
तथा
दिव्यवाणी की वाहिका त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष-५

जनवरी, २००१

सं.-१

सम्पादक मण्डली

- ❖ डा. श्रीनारायण मिश्र
- ❖ डा. राममोहन पाण्डे
- ❖ डा. वीथिका मुखर्जी
- ❖ डा. गायत्री शर्मा
- ❖ ब्रह्मचारिणी गुणीता



कार्यकारी सम्पादक
श्री पानु ब्रह्मचारी



वार्षिक चंदा (डाकव्यय सहित)

भारत में - ६० रुपये

विदेशों में - १२ डॉलर/या ४५० रुपये

एक प्रति - २०/- रुपये

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा—हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है। वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है। इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख, किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलियों का भी पत्रिका में स्वागत है।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकर्षित कर सकते हैं जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये। लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें। मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है। सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C". नाम पर भेजें।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"

माता आनन्दमयी आश्रम

भदौनी, वाराणसी - २२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :-

सम्पूर्ण पृष्ठ - २०००/- पूरे वर्ष के लिये

आधा पृष्ठ - १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदौनी, वाराणसी-२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमछा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित।
सम्पादक-श्री पानु ब्रह्मचारी।

विषय-सूची

१.	मातृवाणी	१
२.	नयी सदी का जागृति मन्त्र	३
३.	'गा उठा विश्वमानव'	३
४.	श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग —स्व. अमूल्य कुमार दत्तगुप्त	५
५.	तान्त्रिक संस्कृति —म. म. गोपीनाथ कविराज	८
६.	श्री श्री माँ के काशी आश्रम का सूत्रपात —स्वामी नारायणानन्द तीर्थ	१३
७.	श्री श्री माँ के साथ —रेणुका मुखर्जी	१७
८.	माँ आनन्दमयी—एक संस्मरण —मोहन लाल आर्य	२१
९.	श्री राघेजू विहरति —प्रेमानन्द गिरि	२३
१०.	आनन्दमयी — स्मृति —चित्रा घोष	२७
११.	प्रयागराज पूर्ण कुम्भ की झलकियाँ	३०
१२.	आश्रम संवाद	३४
१३.	श्रद्धाजलि	३८

"हरि कथा ही कथा, और सब वृथा व्यथा"

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

अमेरिका के पेन्सिलवेनिया राज्य में स्थायी रूप से पंजीकृत संस्था माँ आनन्दमयी सेवा समिति (Mass, INC) के स्वयं सेवकों की ओर से परमाराध्या श्री श्री माँ के सभी भक्तजनों को सप्रेम "जय माँ" ।

इस संस्था का उद्देश्य श्री श्री माँ की जीवन लीला रहस्य की सेवा, धार्मिक कार्य, सत्संग एवं जनसेवा सहित सनातन धर्म तथा श्रीमद् भागवत् धर्म युक्त प्रक्रिया है ।

अमेरिका सरकार द्वारा इस समिति के लिये सम्पूर्ण कर मुक्ति (Tax - exemption) प्राप्त है । जिसका नम्बर है 23-2967597 जो IRS Code 501 (C) (3) के अनुसार कार्यों के लिये है ।

अमेरिका एवं आस-पास के देशों में स्थायी रूप से निवास करने वाले मातृभक्तों से विनती है कि "माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता" (त्रैमासिक पत्रिका) जो चार भाषाओं (हिन्दी, बंगला, गुजराती एवं अंग्रेजी) में श्री श्री माँ की दिव्य जीवन लीला सम्बन्धी गाथा एवं अमूल्य वाणी के संकलन के रूप में प्रकाशित होती है MASS, INC से प्राप्त कर सकते हैं । पत्रिका का वार्षिक चन्दा 12/- बाहर डॉलर मात्र है ।

अन्य विस्तृत जानकारी के लिये निम्नलिखित पते पर कृपया सम्पर्क कीजिये :-

Mahadev R. Patel
President, Ma Anandamayee Seva Samiti, INC
212, Moore Road
Wallingford, PA 19086-6843
Tel : 610-876-6862 Fax : 610-876-1351
email : devpatel @ netscape. net.

जय माँ



मातृ-वाणी

यदि अन्तर जानना हो तो बाहर को छोड़ने से काम न चलेगा, इसीलिये उन्होंने संसार के चित्र में भीतर (अन्तर) की छवि अंकित कर रखी है। इस जगत् को जाग्रत् का आभास भी कहा जाता है। जगत् के क्षणिक आनन्द में मुग्ध न होकर अन्तर्यामी की शरण लेने की चेष्टा करो।

*

*

*

आकर्षण में भी अनन्तरूप, विषय में भी अनन्त रूप। भगवान् का भी अनन्तरूप एक बीज में अनन्त बीज, अनन्तगति, अनन्तस्थिति एक बीज में वृक्ष, वृक्ष में अनन्तबीज, एक वृक्ष में सैकड़ों बीज। अन्त नहीं कर सकते। एक और आनन्त। आनन्त में एक। रूप भी अनन्त है इसलिये भगवान् का नाम रूप अनन्त है।

*

*

*

भगवान् की कृपा जो है। एक के सिवाय और स्थान है नहीं, वर्षा बरसती है। पात्र को उल्टा रखा है तो सीधा रखो। बाह्य मुख रहो तो बह जायेगा। अन्तर मुख अन्तरजामी भगवान् हर वक्त बरसने के लिये। पात्र सीधा रखो।

*

*

*

अपने में अपना जाता है। किसको समर्पण करें। अपने को। दुनिया है — जैसे मोह हो जाता है। जैसे बच्चा है — हर वक्त माँ की दृष्टि में रहता है। अज्ञान है ना तब मोह कहा जाता। दुनिया के बीच में जैसे बच्चा छोटा है — ऐसा हो तो आराम मिलता है। (बच्चा जैसे अपनी माँ पर निर्भर रहता है माँ खुद उसकी देखभाल करती है, उसी प्रकार भगवान् पर निर्भर रहने से अपने को सुख मिलता है।)

*

*

*

समर्पण किसको करना गुरु को, इष्ट को, आत्मसमर्पण। अपना गुरु और अपना इष्ट, इष्ट तो अपना इसलिये अपने में रहता है।

*

*

*

अज्ञान कहाँ। आवरण कहाँ। परदा कहाँ। आवरण मेरा आवरण मैं ही इसका कारण यह है मैं मैं करते हो, एक बात मैं कौन है— खबर लो— क्या है आवरण ? परदा पर द्वार।

*

*

*

नाम करते-करते नाम में अनुराग—जैसे पत्थर खोदते-खोदते पानी निकल आता और घिसते-घिसते आग निकलती है । जब तक अनुराग ना हो — समझो हमारा नाम अभी तक हुआ नहीं ।

*

*

*

समझाने का क्या - एक समझ निकाल दे, और दूसरी समझ निकल आती है, 'मैं' जो है । मेरी ही समझ है । और किसी की समझ नहीं है । दुनिया में डाक्टर जो हैं । ज्यादा पढ़कर "डाक्टर" (उपाधि) जो मिलता है . दुनिया की दृष्टि से अनुत्तीर्ण (fail) नहीं होते हैं । परमार्थ की डॉक्टरी अलग है । मन को डॉक्टर करना ।

*

*

*

आँख खोलकर जो होता है, आँख बन्द करके भी वही होता है । ध्यान करने की बात ही नहीं । मैं किसी का ध्यान नहीं करता, दूसरा - दो है जहाँ । दो रहने से तो अन्धेरा, दुःख है । दो है कहाँ ?

*

*

*

तुम्हारा थोड़ी देर के लिये आँख रहा । इसी तरीके से उसकी तरफ तुम्हारा आँख रह गया । तो वह लौटा नहीं वह तो हर वक्त मौजूद है । आँख खोलने से भी आँख बन्द करने से भी । दृष्टि की स्थिति अनुसार । जिस समय जैसी दृष्टि होती है वैसा ही दर्शन, वह चश्मा लग जाता है । यह टूटी-फूटी आँख है, चश्मा लगाना है क्यों — जैसे चश्मा टूट जाता है । आँख में देखने में भूल हो जाती है । कोई-कोई चश्मा होता है । आँख कहाँ - जो कभी बदलता नहीं । संयम इसी आँख के लिये । इसी तरह चक्षु बदलने की बात है ना ।

*

*

*

तुम ही है, सचमुच तुम्हारा ही अनन्तरूप उन को प्राप्त करने के लिये, हर एक रूप में जो है । भगवान ही है । आत्मा - वह प्रकट होने के लिये । उनके सिवाय और है ही नहीं । शरीर तो यही कहेगा ।

*

*

*

भगवान् को पाना अपने को पाना । जन्म की बात नहीं । उसी समय अपने को पाना माने मुक्ति ।



"नयी सदी का जागृति मन्त्र"

"तुम जो स्वराज - स्वराज कहते हो, पहले अपने को तैयार करो उसके बाद तो स्वराज पाओगे । नैतिक जीवन को आधार बना कर धर्म-जीवन गठित करो; कर्म-जगत् में उसे अग्रगण्य करो । इस प्रकार महा शक्ति संचित होने से तुम्हारी स्वाधीनता में कौन ह. . दे सकता है? अपने ऊपर स्वयं शासन नहीं कर सकते तो विराट् परतन्त्र किस तरह चलाओगे? अपने मन के राजा हो सकने पर विश्व का राज्य स्वयं ही हाथ में आएगा । धर्म के ऊपर ही संसार का सत्य प्रतिष्ठित है और धर्म ही संसार का जीवन है ।

दुर्बलता ही मनुष्य का प्रधान पाप है । अकारण ही जिससे देह की शक्ति का अपव्यय न हो, उस ओर ध्यान रखना उचित है । देह का खाद्य है परिमित आहार और विहार और मन का खाद्य शुद्ध भाव और भगवत् चिन्ता है । देह और मन के कल कारखानों को ठीक तरह चलाने से इसके चालक रूपी आत्मा का सन्धान मिलना सहज हो जाता है ।

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

"गा उठा विश्वमानव"

—ब्र. गुणीता

- अ— अक्षर-अक्षर गुरुजनों का करो पालन ।
- आ— आनन्दमयी मैया का यही सिखावन ॥
- इ— इतनी विनती सुन लो माँ मेरी ।
- ई— ईप्सित कामना कर दो पूरी ॥
- उ— उत्सव आदि होते परम सुन्दर ।
- ऊ— ऊँच-नीच का भेद मूलकर जन प्रसाद पाते निरन्तर ॥
- ए— एक ही है सब, दो का प्रश्न नहीं जहाँ ।
- ऐ— ऐक्य मन्त्र का श्रवण, मनन, निदिध्यासन हैं वहाँ ॥
- ओ— ओ माँ मेरी जन सेवा है पूजा तेरी ।
- औ— और दे सद्भावना भरी भक्ति तेरी ॥
- अं— अंगुली पकड़ कर तर जाऊँ भवसागर ।
- अः— अः, अः का सुख शब्द करूँ निरन्तर ॥
- ऋ— ऋषि मुनि सब तुझको ध्यावें ।
- ऌ— ऌकार, आकार सब तेरा ही यश गावें ।
- क— कन्या है वह विश्वविमोहिनी ।
- ख— खेओरा ग्राम की जन-मन-नन्दिनी ॥
- ग— गर्जित हुआ रव हरि कथा का ।

- घ- घोषित हुआ स्वर विश्वमाता का ॥
 ङ- अंग-अंग की अनुपम द्युति ।
 च- चराचर में फैली विश्व ज्योति ॥
 छ- छायावितान माँ की ममता का ।
 ज- जर्जर हुआ तन, जग-जड़ता का ॥
 झ- झर-झर झरती प्रेम करुणा ।
 ञ- चञ्चल मन की शान्त कल्पना ॥
 ट- टल गयी कितनी होनी ।
 ठ- ठहर गयी कितनी अनहोनी ॥
 ड- डगर-डगर पर माँ की वाणी ।
 ढ- ढलती गयी जीवन-जवानी ॥
 ण- अशरण शरण वन्दित चरणों में ।
 त- तन-मन-धन अर्पित करने ।
 थ- थिरक-थिरक आये नर-नारी ।
 द- दया प्रेम के भीने स्वर में ।
 ध- धन्य धन्य के ऊँचे रव में ॥
 न- नव चेतना थिरक उठी जन-जन में ।
 प- पतित पावन विश्वोद्धारण की धुन सुन ।
 फ- फुँफकार उठी विषय-रस-भीनी विषधर नागिन ।
 ब- बढ़ी पिपास ज्ञान की ।
 भ- भव बन्धन के त्राण की ॥
 म- माता ने जो मन्त्र सुनाया ।
 य- युग युग ने उसे ही गाया ॥
 र- रमना के रमते मैदान में ।
 ल- लौ उठी भव ज्वाला की ॥
 व- वत्स, करते जाओ यत्न ।
 श- शान्त होगा स्वयं सफल प्रयत्न ॥
 ष- ज्योतिष राय ने यह मन्त्र पाया ।
 स- साकार निराकार उनको ही गाया ॥
 ह- हारे सभी विद्या अभिमानी ।
 क्ष- क्षत्री धन्वी, कुल अभिमानी ।
 त्र- त्राहि-त्राहि की सुन आकुल वार्ता ।
 ज्ञ- ज्ञान ज्योति जगायी माता ने विश्वपरित्राता ने ।

गा उठा विश्व मानव

ज्योति से ज्योति जगाओ माँ,

ज्योति से ज्योति जगाओ ।

श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग

—स्व. अमूल्य कुमार दत्त गुप्त

आज माता जी के बातचीत करने का भाव देखते हुए मैंने प्रश्न किया ।

मैं— "माता जी, आपने कब से गृहस्थों के घर में रहना छोड़ा ?

माताजी— जब ज्योतिष और भोलानाथ जी को लेकर रायपुर गयी थी, तभी ख्याल हुआ था कि देवालय, धर्मशाला, गोशाला, घर परित्यक्त मकान (अर्थात् जिस घर में कोई रहता नहीं है) इत्यादि में रहा जायगा । यह ख्याल ही चल रहा है ।

मैं— एक ख्याल जब इतने दिनों तक चल रहा है तब अवश्य ही इसका कोई कारण है इसके पहले की घटना जो देखने में आ रही है, वह है आपके केशों का काटा जाना ।

माताजी— (हँसकर) गृहस्थों के घर जाऊँगी नहीं अतः केशों को काटा गया था । इस प्रकार का संकल्प लिया गया था ऐसी बात नहीं है । ठीक से देखभाल न होने के कारण केशों ने जटा का रूप ले लिया था इसलिये काट दिया गया ।

मैं— काफी समय पूर्व आप एक दिन के अन्तराल में आहार करती थीं ।

यह भी क्या आपके ख्याल के लिये या यह ख्याल वर्तमान समय के गृहस्थों के घर न जाने के ख्याल के समान है ।

माताजी— नहीं, उन दिनों एक दिन छोड़कर जो भोजन लिया जाता था उसका एक उद्देश्य था । इसबार सोलन में इस उद्देश्य को प्रकाशित किया गया था । अभी जो गृहस्थों के घर जाना नहीं हो रहा है वह केवल ख्याल के लिये एवं वह ख्याल अभी भी चल रहा है ।

मैं— किस उद्देश्य से आप एक दिन बाद एक दिन आहार करती थीं ?

माताजी— ज्योतिष की जब काफी अस्वस्थता की हालत चल रही थी उन दिनों एक दिन निरञ्जन ने आकर कहा, "माँ, ज्योतिष के गले से बहुत खून आ रहा है । इतना खून आता है कि सामने रखा बरतन भर जाता है । इधर ज्योतिष की दाल-चावल खाने की बड़ी इच्छा है । पर चिकित्सक एवं उनके घर के लोग किसी तरह उन्हें दाल-भात खाने नहीं देते । ज्योतिष यदि मर जाय तो बहुत ही दुःख रहेगा कि मृत्यु से पूर्व उसे सामान्य दालभात भी खिलाया नहीं जा सका ।" निरञ्जन ने बड़े ही व्यथित हृदय से यह सब बातें कहीं । वे लोग बाल्यकाल से मित्र थे । जो भी हो इन सब बातों को सुनकर एक दिन दोपहर को भोलानाथ जी और मैं "शाहबाग से ज्योतिष को देखने गये । ज्योतिष के लिये प्रायः ही फूल इत्यादि ले जाया जाता था । जिस तरह फूल ले जाती थी, उस दिन उसी तरह दालभात हाथ में ले गयी । ज्योतिष की पत्नी तब ज्योतिष के पास ही बैठी थी । उसने हम लोगों को आते देख कर सोचा, कि हम लोग कुछ देर ज्योतिष के पास रहेंगे ।

अतः वह अपने काम से अन्यत्र चली गयीं । ज्योतिष मच्छरदानी लगा कर लेटे हुए थे, उसी हालत में हाथों में लाया हुआ दाल भात उन्हें खिला दिया गया । उसने भी खूब तृप्ति से खाया । किसी को भी इस बात का पता नहीं चला । ज्योतिष की पत्नी की उपस्थिति में यह खिलाया नहीं जा सकता था । ऐसी बात नहीं थी । कारण जब ख्याल हुआ था तब उसी के सामने ही ज्योतिष को खिला देती । इसके बाद जो हुआ था वह तो तुम लोग जानते ही हो, हमलोग हरिद्वार चले गये । ज्योतिष की हालत जब खूब खराब हुई वह तार द्वारा हमलोगों को सोलन में सूचित किया था एवं उस समय जो देखा गया था वह सब बातें तो तुमलोगों को कही गयी हैं । इसके बाद ज्योतिष धीरे-धीरे स्वस्थ हुआ एवं अपनी नौकरी पर जाने लगा । बाद में पेन्शन लेकर वह इस शरीर के साथ रहने लगा ।

इस समय हमलोग एकबार मसूरी में थे । भोलानाथ जी साधन करने उत्तरकाशी चले गये थे । ज्योतिष और मैं मसूरी में धर्मशाला में रहने लगे । एक दिन ज्योतिष को पेट की गड़बड़ी हो गयी उससे वह इतनी कमजोरी महसूस करने लगा कि उसके लिये चलना फिरना या बातें करना असम्भव था । ऐसी हालत थी कि उस समय उसे एवं इस शरीर को देखने वाला कोई नहीं था । ज्योतिष अपने कमरे में लेटा था । उसे देखकर ऐसा लगता था मानों एक मुर्दा पड़ा हुआ है । यह शरीर धर्मशाला के दूसरे कमरे में था । ज्योतिष की हालत देखकर इस शरीर को ख्याल हुआ कि, ज्योतिष के यक्ष्मारोग के समय जितना दालभात खिलाया गया था उसी के कारण उसका जीवन इतने दिन चला । अभी उसका फल समाप्त हो रहा है इसीलिये ज्योतिष की यह हालत । इसीलिए उस वक्त ख्याल हुआ कि यह शरीर एक दिन के अन्तराल पर भोजन लेगा ।

मैं— उससे ज्योतिषबाबू का क्या हुआ ?

पटलदादा— क्यों ? एकदिन माताजी भोग ग्रहण करती थीं, जिस दिन माताजी नहीं खाती थीं, उसदिन का भोजन ज्योतिष के उद्देश्य से दिया जाता था ।

माताजी— समझे ना ।

मैं— हाँ माँ, अब समझ में आया ।

माताजी— ज्योतिष को ठीक रखने के लिये एक दिन के अन्तराल में भोजन शुरू किया गया । कुछ वर्ष ऐसे ही चला, इसके बाद ज्योतिष ने अचानक चावल लेना छोड़ दिया उसने चावल लेना क्यों छोड़ा यह बता रही हूँ ।

ज्योतिष को एक बार छह महीनों के लिये सोलन में रखा गया था । योगी भाई (सोलन के राजा) के कोई सन्तान नहीं है इसलिये बहुतों को उनके लिये दुःख करते उसने देखा था । यह सब देखकर उसके मन में संकल्प का उदय हुआ कि योगीभाई को एक पुत्र सन्तान हो इसके लिये वह प्रयास करेगा । इसी उद्देश्य से उसने चावल लेना छोड़ दिया था । मुझे इस सम्बन्ध में उसने कुछ नहीं बताया था । इस शरीर को अध्यात्म सम्बन्धी जिज्ञासाओं के सिवाय और कुछ कहना उसे पसन्द नहीं था । रोग, मुकदमा, परीक्षा में पास होना इत्यादि चर्चा जब शरीर के सामने होती थी

तो वह कहता था, "यह सब बातें माँ के पास क्यों ? यह तो हमलोग ही बता सकते हैं, हाँ, आध्यात्म के सम्बन्ध में कोई जानकारी लेनी हो तो केवल वही माँ से पूछ सकते हो ! एक बार एक लड़का इस शरीर से पूछने आया था कि वह परीक्षा में पास होगा या नहीं । ज्योतिष ने उसे एक तरफ ले जाकर कहा, "यह सब बातें माँ से क्यों पूछते हो, मैं ही तुमको बता देता हूँ तुम दूसरी श्रेणी में पास होओगे । यदि आध्यात्म सम्बन्धी कोई जिज्ञासा हो तो वह माँ से पूछ सकते हो ।" हम लोग जब नैनीताल में थे तब उक्त लड़के ने आकर ज्योतिष की खोज की । वह ज्योतिष को क्यों ढूँढ़ रहा है यह पूछने पर उसने बताया, 'उन्होंने मुझे कहा था मैं दूसरी श्रेणी में पास होऊँगा । वैसा ही हुआ है ।' उनको यही बताने आया था ।" जब उसे कहा गया कि ज्योतिष अब इस दुनिया में नहीं हैं तब वह अत्यन्त दुखित होकर चला गया ।

ज्योतिष की इस प्रकार कुछ-कुछ शक्तियाँ थीं, तुमलोग भी जानते हो कि एकबार तारापीठ में वह अपने संकल्प बल से देहत्याग करने लगा था । रायपुर में उसने मुझे कहा था, उसे क्रमधारा से जड़ समाधि, सविकल्प समाधि एवं निर्विकल्प समाधि नहीं होगी । उसका कारण पूछने पर उसने कहा था, वह कोई भी समाधि अपनी इच्छा से ला सकता है । मैंने जब उससे कहा "अच्छा, दिखाओ तो तुम समाधि कैसे ला सकते हो ? तब वह स्थिर होकर बैठ गये मैंने देखा, वह क्रमशः स्तब्ध होकर गहरी समाधि में डूबता जा रहा है । यह देख भोलानाथ जी के समय जैसे मस्तकस्पर्श कर उनकी समाधि भंग की थी । ज्योतिष के समय भी वैसे ही किया गया ।

**"साथी एकमात्र भगवान । साधुओं ने 'उनका' संग किया है,
जानकर उसका (साधुओं का) संग करना उचित है" ।**

- श्री श्री माँ

तान्त्रिक संस्कृति

—म.म. गोपीनाथ कविराज

यह अत्यन्त आनन्द का विषय है कि वर्तमान युग में हम लोगों का ध्यान अपनी प्राचीन संस्कृति के स्वरूप के अनुसन्धान में क्रमशः सचेत एवं आकृष्ट होता जा रहा है । वेद तथा लुप्तप्राय वैदिक साहित्य के पुनरुद्धार के लिए प्रतीच्य एवं भारतीय विद्वानों ने जो सुदीर्घ कालव्यापी अक्लान्त परिश्रम किया, उससे हम सब लोग परिचित हैं । तत्कालीन भारतीय शासन की ओर से पुरातत्त्व विभाग की जब से स्थापना हुई, तब से यहाँ के प्राचीन इतिहास के विभिन्न क्षेत्रों में—विशेषतः स्थापत्य, भास्कर्य, मुद्रा, शिलालेख प्रभृति विषयों में—बहुत से भूले हुए तथ्यों का उद्घाटन हुआ है । इस तन्त्र-सम्मेलन के शुभायोजन (८,९,१०,११ मार्च १९६५) से भी—जिसकी पृष्ठभूमि में प्रादेशिक एवं केन्द्रीय प्रशासन तथा वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय के अधिकारी वर्ग का महान योगदान रहा है—सूचित हो रहा है कि देश के सौभाग्य से लुप्तप्राय तान्त्रिक-संस्कृति सम्बन्धी अन्वेषण-कार्य भी क्रमशः सफल होगा । यह एक विचित्र संयोग है कि आधुनिक युग में विस्मृतप्राय वैदिक वाङ्मय के पुनरुद्धार की दिशा में जिस प्रकार मोक्षमूलर प्रभृति प्रतीच्य मनीषियों का प्राथमिक उद्यम रहा है, ठीक उसी प्रकार विस्मृतप्राय तान्त्रिक वाङ्मय की ओर सबसे पहले दृष्टि आकृष्ट करने का श्रेय भी प्रतीच्य मनीषियों को ही प्राप्त है । इस विषय में सर जान उडरफ उपनाम आर्थर एवलेन को हम लोगों को नहीं भूलना चाहिए । यद्यपि विभिन्न स्थानों से आंशिक एवं विकीर्ण रूप में तान्त्रिक ग्रन्थों का प्रकाशन-कार्य हो रहा है, किन्तु किसी प्रतिष्ठान ने अब तक सामूहिक रूप से इस महनीय कार्य में हाथ नहीं लगाया । प्रसन्नता की बात है कि इस समय वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय इस कार्य में उत्साह दिखा रहा है ।

यह कार्य काशी की परम्परा के अनुरूप है । भारतीय आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रायः सभी प्रकार के साधनों का एक विशिष्ट स्थान काशी रहा है । बुद्धदेव के समय से ही, मैं समझता हूँ उनके भी पहले से विद्या के केन्द्र रूप में काशी की प्रसिद्धि थी । विदेशों से आये पर्यटकों के विवरण से भी यह बात सिद्ध होती है । ऐतिहासिक गवेषणा के प्रभाव से इस विषय में विशेष ज्ञान की प्राप्ति हो सकेगी । मध्ययुग से वर्तमान समय तक दृष्टि देने पर प्रतीत होगा कि इस समय में भी बुहसंख्यक विशिष्ट तान्त्रिक साधक और ग्रन्थकार काशी में आविर्भूत हुए थे । उदाहरणस्वरूप कई साधकों के नाम नीचे दिये जा रहे हैं—

(१) सरस्वती तीर्थ—ये परमहंस परिव्राजकाचार्य थे और दक्षिण से आये हुए प्रकाण्ड विद्वान् थे । ये वेदान्त, मीमांसा, सांख्य, साहित्य तथा व्याकरण के छात्रों को पढ़ाया करते थे । इनका मुख्य ग्रन्थ शङ्कराचार्य कृत प्रपञ्चसार तन्त्र की टीका थी ।

(२) राघवभट्ट—इनके पिता नासिक से काशी आकर बस गये । राघवभट्ट जन्म से ही काशी में थे । इन्होंने शारदातिलक की टीका पदार्थादर्श लिखी थी जो सर्वत्र प्रसिद्ध है । इस टीका की रचना काशी में हुई थी । रचनाकाल १४९४ ई. है ।

(३) सर्वानन्द परमहंस—पूर्वबङ्ग के बहुत उच्चकोटि के सिद्ध पुरुष थे । इन्होंने दसों महाविद्याओं का एक साथ साक्षात्कार किया था । यह भी प्रायः चार सौ वर्ष पहले की बात है । इनका अन्तिम समय काशी में ही बीता । किसी-किसी के मत से ये राजगुरु मठ में रहते थे । इनकी अलौकिक शक्तियाँ बहुत थीं । सर्वोल्लासतन्त्र इनके द्वारा संकलित है ।

(४) विद्यानन्दनाथ—ये दक्षिण भारत के निवासी थे । कांची से भी दक्षिण में इनका घर था । ये सर्वशास्त्र के पण्डित थे, किन्तु तन्त्रशास्त्र में विशेष अनुराग था । ये तीर्थयात्रा के प्रसंग से जलन्धर नामक सिद्धपीठ में गये थे । वहाँ सुन्दराचार्य या सच्चिदानन्दनाथ नामक एक सिद्ध पुरुष से मिले थे, उनसे दीक्षा लेकर स्वयं विद्यानन्दनाथ दीक्षित नाम धारण किया और गुरु के आदेश से काशी में आकर रहने लगे । काशी रहते हुए इन्होंने तन्त्रशास्त्र के अनेक विशिष्ट ग्रन्थों का प्रणयन किया । ये भी प्रायः चार सौ वर्ष पहले के आचार्य होंगे ।

(५) महीधर—ये अहिच्छत्र से आये थे और काशी में अन्तिम समय तक रहे । इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ नौकाटीकासहित मन्त्रमहोदधि है । रचनाकाल १५८८ ईसवीय है ।

(६) नीलकण्ठ चतुर्दर—ये प्रतिष्ठान (पैठान) के थे, किन्तु आजीवन काशी में रहे । महाभारत के टीकाकार के रूप में इनकी विशेष प्रसिद्धि है । इन्होंने तन्त्रशास्त्र शिवताण्डव की टीका लिखी जिस टीका नाम अनूपाराम है । रचनाकाल १६८० ईसवीय माना जाता है ।

(७) प्रेमनिधि पन्त—ये कूर्माचल से काशी आये हुए थे । ये भी जीवनान्त तक काशी में ही रहे । इन्होंने बहुत से तान्त्रिक ग्रन्थों का निर्माण किया जिनमें शिवताण्डव की टीका मल्लादर्श का नाम लिया जा सकता है । शारदातिलक तथा तन्त्रराज पर भी इन्होंने टीका लिखी थी । ये करीब २५० वर्ष पहले रहा करते थे ।

(८) भास्कर राय—ये दक्षिण देश के थे, किन्तु दीर्घकाल तक काशी में रहे । सिद्धपुरुष के रूप में इनकी ख्याति थी । इन्होंने ललितासहस्र की टीका, सेतुबन्ध, वरिवर पोरडस्थ आदि अनेक ग्रन्थ लिखे थे । १९२९ ईसवीय के आसपास इनका समय जानना चाहिए ।

(९) शङ्करानन्दनाथ—इनका पूर्व नाम शंभु भट्ट था, ये अद्वितीय मीमांसक खण्डदेव के शिष्य थे और मीमांसा शास्त्र में ग्रन्थ लिखे । ये श्री विद्या के उपासक थे । इनका सुन्दरीमहोदय नामक ग्रन्थ प्रसिद्ध है । १७०७ ई. इनका समय माना जाता है ।

(१०) माधवानन्दनाथ—ये सौभाग्यकल्पद्रुम के रचयिता हैं । यह ग्रन्थ परमानन्द-तन्त्र के आधार पर लिखा गया है । ये भी काशी रहे । इनका समय आज से १५० वर्ष पूर्व माना जाता है ।

(११) क्षेमानन्द—माधवानन्द के शिष्य क्षेमानन्द प्रसिद्ध तान्त्रिक विद्वान् थे । इन्होंने सौभाग्यकल्पलतिका का निर्माण किया था ।

(१२) सुभगानन्दनाथ— नामक एक प्रसिद्ध तान्त्रिक आचार्य काशी में रहते थे । ये केरल देश के थे, पूर्वनाम श्रीकण्ठ था । ये काशी में तन्त्र तथा वेद दोनों के अध्यापक थे । ये माधवानन्दजी के ही समसामयिक माने जाते हैं ।

(१३) काशीनाथ भट्ट— इनका भी नाम उल्लेख योग्य है । इन्होंने छोटे-छोटे अनेक तान्त्रिक ग्रन्थ लिखे थे । ये अधिक प्राचीन नहीं, अपितु १०० वर्ष पहले के हैं ।

इस प्रकार की गौरवशाली परम्पराओं के मध्य काशी में इस सांस्कृतिक परम्परा का उज्जीवित होना स्वाभाविक होना चाहिए ।

वर्तमान समय में हम लोग जिस भारतीय संस्कृति से परिचित हैं, वह काल-प्रभाव से चाहे कितनी भी विकृत एवं संकुचित क्यों न प्रतीयमान हो रही हो; किन्तु यह सत्य है कि वह एक विशाल गौरवमय प्राचीन संस्कृति की उत्तराधिकारिणी है । इस प्राचीनतम संस्कृति का आदिरूप किस प्रकार का था, इसका इस समय अनुमान करना तो संभव नहीं है, क्योंकि इस सम्बन्ध में हम लोग जो कुछ जानते हैं, वह प्रायः ऐतिहासिक युग से ही सम्बन्धित है, फिर भी इस सम्बन्ध में कुछ आभास-ज्ञान हम लोगों को अवश्य है; क्योंकि पण्डितों के द्वारा निरन्तर हुई गवेषणाओं के फलस्वरूप अनेकानेक अन्धकारावृत क्षेत्र में आलोक का संचार होने लगा है ।

इस विशाल भारतीय संस्कृति का विश्लेषण करने पर प्रतीत होगा कि इसके विभिन्न अंश हैं, और अङ्ग प्रत्यङ्ग रूप में विभिन्न विभाग हैं । इसमें सन्देह नहीं कि इसमें वैदिक साधना ही प्रधान है, किन्तु इसका भी ध्यान रखना चाहिए कि भिन्न भिन्न समयों में इस धारा में भी नये नये विवर्तन हो चुके हैं । धर्म-शास्त्र, नीतिशास्त्र, इतिहास-पुराणादि के आलोचन से तथा भारतीय समाज के आन्तरिक जीवन का परिचय मिलने से उपर्युक्त तथ्य का स्पष्टतया ज्ञान होगा । वैदिकधारा का प्राधान्य होने पर भी, इसमें सन्देह नहीं है कि इसमें विभिन्न धाराओं का संमिश्रण है । इन सब धाराओं के भीतर यदि व्यापक दृष्टि से देखा जाय तो ज्ञात होगा कि तन्त्र की धारा ही प्रथम एवं प्रधान है । इस धारा की भी बहुत सी दिशाएँ हैं, जिनमें एक वैदिकधारा के अनुकूल थी । अगली पीढ़ियों के गवेषक-गण इस तथ्य का निरूपण करेंगे कि वैदिकधारा की जो उपासना की दिशा है, वह अविभाज्य रूप से बहुत अंशों में तान्त्रिकधारा से मिली हुई है, और बहुत से तान्त्रिक विषय अति प्राचीन समय से परम्पराक्रम से चले आ रहे थे । मैं समझता हूँ उपनिषद् आदि में जिन विद्याओं का परिचय मिलता है यथा—संवर्ग, उद्गीथ, उपकोशल, भूमा, दहर, पर्यङ्क आदि ये सभी गुप्त विद्याएँ इसी के अन्तर्गत हैं । मैं समझता हूँ वेद के रहस्य अंश में भी इन सब रहस्य विद्याओं के परिज्ञान का आभास मिलता है । यहां तक कहा जा सकता है कि वैदिक क्रिया-काण्ड भी अध्यात्म-विद्या का ही बाह्य रूप है, जो निम्न अधिकारियों के लिए उपयोगी माना जाता था । यदि इन सब अध्यात्म-विद्याओं का रहस्य-ज्ञान कभी हो जाय, तो पता चलेगा कि मूलभूत वैदिक तथा तान्त्रिक या आगमिक ज्ञानों में विशेष भेद नहीं रहा ।

यहाँ प्रसंगतः एक बात का उल्लेख आवश्यक है कि साधारण दृष्टि से संभव है यह समझ में न आवे, फिर भी यह सत्य है कि वेद और तन्त्र का निगूढ़ रूप एक ही प्रकार का है । दोनों ही

अक्षरात्मक हैं, अर्थात् शब्दात्मक ज्ञान-विशेष हैं । ये शब्द लौकिक नहीं दिव्य हैं, और अपौरुषेय हैं । मन्त्रदर्शीगण इसे ही प्राप्त कर सर्वज्ञत्व-लाभ किया करते थे; वे अन्त में आत्मसाक्षात्कार के द्वारा अपना जीवन सफल करते थे । पुराकल्प में लिखा है—

यां सूक्ष्मां विद्याम् अतीन्द्रियां वाचम् ऋषयः साक्षात्कृतधर्माणः मन्त्रदृशः पश्यन्ति ताम् असाक्षात्कृतधर्मभ्यः प्रतिवेदयिष्यमाणा बिल्मं समामनन्ति, स्वप्रवृत्तमिव दृष्टश्रुतानुभूतम् आचिख्यासन्ते ।

निरुक्त प्रभृति ग्रन्थों के आलोचन से यह प्रतीत होता है कि ऋषिगण साक्षात्कृतधर्मा थे और वे उन सामान्य लोगों को उपदेश द्वारा मन्त्र-दान करते थे, जो असाक्षात्कृतधर्मा थे । साक्षात्कृतधर्मा होने के कारण ऋषिगण वस्तुतः शक्तिशाली थे, अतः वे किसी से उपदेश-श्रवण करके ऋषित्व-लाभ नहीं करते थे; प्रत्युत वे स्वयं वेदार्थ-दर्शन करते थे । इसी अभिप्राय से उन्हें मन्त्रद्रष्टा कहा जाता है । मन्त्रार्थ-ज्ञान का मुख्य उपाय है प्रतिभान, इसे ही प्रातिभ या अनौपदेशिक ज्ञान कहते हैं । इसी के विषय में कहा जाता है—

गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं शिष्यास्तु छिन्नसंशयाः ।

गुरु शब्द से यहाँ अन्तर्गुरु या अन्तर्यामी समझना चाहिए । ऐसे उत्तम अधिकारियों को दृष्टर्षि भी कहा जाता है । शक्ति की मन्दता के कारण मध्यम अधिकारी इनसे अवर समझे जाते थे । इनका परिचय श्रुतर्षि नाम से मिलता है । उत्तम अधिकारी को दर्शन मिलता था उपदेश-निरपेक्ष होकर, और मध्यम अधिकारी को श्रवण-प्राप्त होता था उपदेश-सापेक्ष । प्रथम ज्ञान का नाम आर्षज्ञान और द्वितीय का नाम औपदेशिक ज्ञान है । मनुसंहिता में लिखा है—

आर्षं धर्मोपदेशं च वेदशास्त्राविरोधिना ।

यस्तर्केणानुसन्धत्ते स धर्मं वेद नेतरः ॥

किन्तु साधारण अधिकारी को जो ज्ञान होता है, वह सत् तर्क के द्वारा । सत्तर्क से अभिप्रेत है वेद शास्त्र के अविरोधी तर्क के द्वारा अनुसंधान । आगम शास्त्र (त्रि. र. तथा त्रिकदार्शनिक साहित्य) में सत्तर्क का विशेष रूप से मण्डन किया गया है । वैदिक साहित्य में भी यह लिखित मिलता है कि ऋषिगण जब अन्तर्हित होने लगे तो तर्क पर ही ज्ञान का भार दिया गया । सभी साधारण जिज्ञासु लोग अवर-कोटि में हैं, हम सभी इसी कोटि के हैं । इस प्रकार के लिए सत्तर्क ही अवलम्बनीय हैं ।

तन्त्र शास्त्रों के अनुसार तन्त्र का मूल आधार कोई पुस्तक नहीं है, वह अपौरुषेय ज्ञान विशेष है । ऐसे ज्ञान का नाम ही आगम है । यह ज्ञानात्मक आगम शब्दरूप में अवतरित होता है । तन्त्र-मत में परा-वाक् ही अखण्ड आगम है । पश्यन्ती अवस्था में यह स्वयं वेद्य रूप में प्रकाशित होता है और अपना प्रकाश अपने साथ रखता है । यही साक्षात्कार की अवस्था है, यहाँ द्वितीय या

अपर में ज्ञान-संचार करने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता । वही ज्ञान मध्यमा में अवतीर्ण हो कर शब्द का आकार धारण करता है । यह शब्द चित्तात्मक है । इसी भूमि में गुरु-शिष्य भाव का उदय होता है । फलतः ज्ञान एक आधार से अपर आधार में संचारित होता है । विभिन्न शास्त्रों एवं गुरु-परम्पराओं का प्राकट्य मध्यमा-भूमि में ही होता है । वैखरी में वह ज्ञान या शब्द जब स्थूल रूप धारण करता है, तब वह दूसरों की इन्द्रिय का विषय बनता है ।

उपर्युक्त संक्षिप्त विवेचन से प्रतीत होगा कि वेद और तन्त्रों की मौलिक दृष्टि एक ही है । यद्यपि वेद एक है किन्तु विभक्त होकर त्रयी या चतुर्विध होता है, अन्ततः वह अनन्त है । 'वेदा अनन्ताः' यह भी वेद की ही वाणी है । आगमों की स्थिति भी ठीक इसी प्रकार की है । अवश्य ही तन्त्र की एक और भी दिशा है जिससे उसका वैदिक आदर्शों से किसी किसी अंश में पार्थक्य प्रतीत होता है, और उस कारण से तान्त्रिक साधना का वैशिष्ट्य भी समझ में आता है । कुछ भी हो, ये सभी मिल कर भारतीय संस्कृति के अंगीभूत हो चुके हैं । जैसे बृहत् जलधारायें मिलकर नदी का रूप धारण करती हैं, और अन्त में महासमुद्र में विलीन हो जाती हैं; वैसे ही वैदिक तान्त्रिक आदि अन्यान्य सांस्कृतिक-धारायें भारतीय संस्कृति में आश्रय-लाभ करती हैं और उसे विशाल से विशालतम बनाती हैं ।

(क्रमशः)

"ज्ञान मार्ग का, 'मैं' और भक्ति मार्ग का 'तुम' एवं योग व कर्म मार्ग का 'मैं और तुम' इन तीनों में मूलतः कोई भेद नहीं है । परम तत्त्व मात्र एक है, सत्य भाव भी एक है ।"

— श्री श्री माँ

श्री श्री माँ के काशी आश्रम का सूत्रपात

—स्वामी नारायणानन्दतीर्थ

सनातन धर्मवलम्बी हिन्दुओं का प्रधान तीर्थ है, वाराणसी । इसके उत्तर में वरुणा नदी एवं दक्षिण में अस्सी है । इन दोनों नदियों के बीच के स्थान को वाराणसी कहते हैं । काशी के अधिदेवता या अधीश्वर स्वयं देवादिदेव महादेव हैं यह पवित्र स्थान पतितपावनी भागीरथी गंगा के पश्चिम तट पर अवस्थित है । इस पुण्य तीर्थ में जो कोई जीव देह त्याग करता है उसे पुनः मातृ गर्भ में आना नहीं पड़ता । मृत्यु के समय भगवान श्री शंकर जीव के दाहिने कान में श्री राम नाम रूप महामंत्र-दान और ज्ञानोपदेश देते हैं एवं शिव सुहागिनी महामाया अपने हाथों से अष्टपाश अर्थात् घृणा, आशंका, भय, लज्जा, निन्दा, कुल, मर्यादा और सम्पत्ति, जिसके द्वारा जीव बद्ध होकर संसार में परिभ्रमण कर रहा है उसको छिन्न कर देती हैं* मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान ने श्री रामचरित मानस में काशी के महत्व को वर्णित करते हुए कहा है—

"आकर चारि जीव जग अहहीं, काशी मरत परम पद लहहीं ।"

संसार में चार प्रकार के जीव हैं जैसे उद्भिज, स्वेदज, अण्डज और जरायुज इन चारों जातियों में से किसी जाति के जीव की मृत्यु काशी में होने से वे स्थान की महिमा से परम गति प्राप्त करते हैं । "मुक्ति जन्म महि जानि, ग्यान खानि अघ हानि कर, जहँ बस सम्भु भवानि, सो काशी सेइय कस न ॥

जहाँ सर्वदा श्री शिव पार्वती निवास करते हैं उस काशी को मुक्ति की जन्मभूमि, ज्ञान की खान एवं पापों का विनाश करने वाली जानकर भी मनुष्य उस काशी में निवास क्यों नहीं करता ।

"काशी मरत मुक्त करत देव राम नाम" काशी क्षेत्र में मृत्यु के समय भगवान श्री - विश्वनाथ रामनाम प्रदान करके जीव को संसार बन्धन से मुक्त कर देते हैं । महर्षि श्रीकृष्ण द्वैपायन वेदव्यास ने अपने स्कन्दपुराण के अर्न्तगत काशी खण्ड में काशी का माहात्म्य अति विस्तार से वर्णित किया है । मुक्ति अभिलाषी हर व्यक्ति काशी में देह - त्याग की अभिलाषा से काशी वास करता है । दूसरी जगह साधन करके जो फल मिलता है, काशी में साधन करने से उसका दस गुण फल मिलता है । ऐसी काशी नगरी में माँ का आश्रम नहीं है । काशी आने पर माता जी पाण्डे धर्मशाला, हरिबंगाली धर्मशाला या मारवाड़ी धर्मशाला में ठहरती हैं । इन सब धर्मशालाओं में भी नियत समय से अधिक रहा नहीं जा सकता, इसीलिए काशी आकर माँ कभी बजरे पर भी रहती थीं । एक बार माताजी एक महीना बजरे में रहीं । उस समय काशी की सभी बड़ी नावें माँ के भक्तों के रहने

* घृणा शंका भयं लज्जा जुगुप्सा चेति पञ्चमी ।
कुलं शीलं च वित्तं च ह्यष्टपाशाः प्रकीर्तिताः ॥

के लिए किराये पर ली गई थीं । एक महीने में नौका का किराया सात सौ रुपये से भी अधिक देना पड़ा था ।

सन् 1942 में गर्मी के समय श्री श्री माँ देहरादून के रायपुर स्थित शिवालय में रहती थीं । एक दिन रात को नौ बजे मौन के बाद शहर के भक्त माँ को प्रणाम करके अपने अपने घरों को लौट गये । माँ अपने शयन कक्ष में विश्राम कर रही थीं । दीदी गुरुप्रिया देवी स्वामी परमानन्द जी, श्रीमान अभय, श्री अमलचन्द्र सेन की पत्नी श्रीमती प्रमीला सेन और मैं माँ के चरणों में बैठकर नानाविध तात्विक आलोचनाएं कर रहे थे । बातों बातों में प्रसंग चल पड़ा कि जो मुक्ति को नहीं मानते वे यदि देह त्याग करें तो उनकी मुक्ति होगी या नहीं । इस प्रश्न के उत्तर में वाद-विवಾದ करने के उपरान्त यह निश्चित हुआ कि यहाँ मुक्ति मानने न मानने की कोई बात ही नहीं है यहाँ की विशेषता है क्षेत्र माहात्म्य । कोई मोक्ष में विश्वास करे या न करे वह हिन्दू हो या अहिन्दू, स्थान के प्रभाव से उसे पुनः जन्म ग्रहण नहीं करना पड़ेगा । जानकर न जानकर आग में हाथ डालने से जैसे हाथ जल जाता है वैसे विश्वास करे या न करे काशी में मृत्यु होने से ही मुक्ति मिलती है ।

इस प्रसंग के उठते ही मैंने कहा माँ काशी ऐसा तीर्थ है तो वहाँ हम लोगों का एक आश्रम होना चाहिए । माँ आप काशी जाती हैं पर वहाँ आपके रहने की कोई व्यवस्था नहीं है । आपको धर्मशाला में रहना पड़ता है । वहाँ भी निर्धारित समय से अधिक रहने नहीं दिया जाता है, यह बड़े ही दुख की बात है । मेरी इन बातों पर बिस्तर पर लेटी हुई पैर पर पैर रखकर धीरे-धीरे हिलाती हुई माँ बोलीं तुम लोगों का साहस कम नहीं है । काशी में आश्रम बनाना चाहते हो तो इतना रुपया कहाँ से आयेगा ? काशी में आश्रम बनाना क्या इतना सरल है कि बात कहने से ही आश्रम बन जायेगा ।

मैं— तो तुम्हारा सबसे दरिद्र सन्तान हूँ । काशी में आश्रम होने पर मैं एक हजार रुपये दूँगा । दीदी काशी आश्रम के लिए आप कितना रुपया देंगी ? दीदी— मेरा पाँच हजार रुपये के पोस्टल कैश सर्टिफिकेट हैं । काशी में आश्रम होने से मैं वह पाँच हजार रुपये दूँगी ।

मैं - प्रमीलादीदी । माँ के काशी आश्रम के लिए मैं एक हजार रुपया दूँगा । दीदी पाँच हजार रुपये देंगी । आप कितना रुपया देंगी ? दस हजार रुपया तो अवश्य ही देंगी ।

श्रीमती सेन - आपके दादा श्री अमल चन्द्र सेन एजेन्ट हिन्दुस्तान लाइफ इन्शुरेन्स कम्पनी दिल्ली से बिना पूछे तो मैं कुछ नहीं कह सकती, पर अपनी तरफ से मैं एक हजार रुपया दे सकती हूँ । यह मैं कह सकती हूँ । आपके दादा कितना देंगे इस बारे में मैं कुछ नहीं कह सकती ।

मैं —माँ देखो पाँच मिनट में सात हजार रुपये कैसे आ गये । आपकी थोड़ी सी कृपा होने पर ही रुपये के लिये चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी । रुपयों का संग्रह हो ही जायेगा आपका आशीर्वाद और कृपादृष्टि चाहिए ।

रात को माँ के सामने यहीं तक बातचीत हुई । श्री महामाया देवी के पुत्र श्री हर्षनाथ मुखोपाध्याय ब्लड प्रेशर के रोगी थे । उनको रात को नींद नहीं आती थी । इसलिए वे काफी रात तक माँ के शयन गृह के सामने छत पर आम के पेड़ के नीचे टहलते रहते थे । माँ के साथ काशी

आश्रम के बारे में जो बातचीत हुई थी, वह उन्होंने सुनी थी। दूसरे दिन सुबह उन्होंने मुझसे कहा कल रात को माँ के कमरे में आप लोगों की क्या बातें हो रही थीं। बीच बीच में हजार हजार रुपये के संग्रह की बात मेरे कानों में आ रही थी। क्या बात है कहिए तो। "मैंने हर्षनाथ बाबू को सब बताया। यह भी कहा था कि काशी के आश्रम के लिए सात हजार रुपये की प्रतिश्रुति मिली है। मेरी बात सुनकर हर्षनाथ बाबू खुशी से एक हजार रुपया देने के लिए तैयार हो गये। मैंने उसी समय माँ से जाकर कहा "माँ" हर्ष बाबू काशी आश्रम के लिए एक हजार रुपये देने को राजी हो गये। देखो माँ कैसे देखते देखते आठ हजार रुपये इकट्ठे हो गये। आपका ख्याल होने से ही रुपया इकट्ठा हो ही जायेगा।" दूसरे दिन दीदी ने सोलन की रानी साहिबा को इस बारे में एक पत्र लिखा। दीदी के पत्र के उत्तर में उन्होंने तीन हजार रुपये का एक चेक भेज दिया। ग्यारह हजार रुपये को लेकर दीदी काशी आश्रम के लिए पैसा इकट्ठा करने कलकत्ता गयीं। श्री श्री माँ की कृपा से कलकत्ते से और ग्यारह हजार इकट्ठा कर दीदी प्रसन्नता से काशी लौटीं। श्री चिन्ताहरण समद्दार डा. गिरिन्द्रकृष्ण मित्रा, श्री सरोज कुमार दत्त आदि ने एक-एक हजार रुपये दिये थे। काशी आश्रम के लिए जिसने जो भी दान किया था दीदी ने उसे भी स्वीकार किया।

सन् 1942 में दुर्गापूजा के बाद श्री श्री माँ, गुरुप्रिया देवी, श्री स्वामी परमानन्द महाराज, ब्रह्मचारी कमलाकान्त और श्रीमान अभय को लेकर चाराणसी में अज्ञातवास के लिए आ रही थीं। मुझसे कहा गया था कि एक बड़ी नाव किराये पर लेकर उसे रामनगर के किले के सामने नगवा घाट पर रखें। माँ के आदेशानुसार यथास्थान बजरा रखकर माँ को रात के आठ बजे सीधा बनारस स्टेशन से नगवाघाट पर बजरे पर ले आया। माँ एवं उनके साथ के कोई भी बजरे से बाहर नहीं निकलते हैं। उनकी आवश्यक सामग्री मैं ही यथा समय बजरे पर पहुँचाया करता था। नगवा गाँव से ब्रह्मचारी कमलाकान्त अपनी गाय का दूध दुहकर लाता था।

एक दिन माता जी एक छोटी सी नाव में दीदी गुरुप्रिया एवं स्वामी परमानन्द जी को लेकर दशाश्वमेध की ओर घूमने निकलीं माँ की नाव जब वर्तमान आश्रम के सामने आयी तब वर्तमान आश्रम की जमीन को देखकर श्री श्री माँ ने पूछा 'यह जमीन किसकी है? जमीन का मालिक कौन है'? नाव के बूढ़े जहर माझी से पूछने पर उसने कहा कि यह जमीन लहरतारा के जमींदार राय शिव प्रसाद अग्रवाल की है। ऋण के कारण यह सरकार के कब्जे में है। यह जमीन बेची जायगी। श्री श्री माँ के प्रश्न से यह अनुमान किया जा सकता है कि इस जमीन पर श्री श्री माँ की दृष्टि पड़ी है। नहीं तो गंगा के तट पर इतनी जमीन के रहते हुए इसी की बात माँ ने क्यों पूछी? बाद में पता लगाकर देखा गया कि यह जमीन शिवप्रसाद अग्रवाल की है ऋण के लिये यह सरकार के अधीन है। स्व. राय शिव प्रसाद अग्रवाल के पुत्र श्री सत्यव्रत अग्रवाल ने जमीन के दाम से 3 हजार रुपया अधिक लेकर जमीन के कागजों पर हस्ताक्षर किया। उन्होंने कहा कि जमीन का 18 हजार रुपया सरकार ऋण परिशोध के लिए लेगी उसमें से उनको कुछ भी नहीं मिलेगा। उनको हजार रुपया न देने पर वे हस्ताक्षर नहीं करेंगे। बिना उनके हस्ताक्षर के कोर्ट में रजिस्ट्री नहीं हो सकेगी। जमीन जब खरीदनी ही है तब थोड़े से रुपयों के लिए आपत्ति नहीं करनी चाहिए। सन्

1944 के 12 दिसम्बर को जमीन की दलील, रजिस्ट्री हो गयी । श्री श्री माँ को तार द्वारा यह संवाद दिया गया । माँ ने पहले ही सूक्ष्म में देखा था कि इस जमीन में बहुत बड़ा यज्ञ एवं नाना विधि शुभ धर्म कार्य एवं देव देवियों की पूजा होगी । इसीलिए बहुत से ऋषि, मुनि, साधु और महात्मा इस भूमि पर आनन्द से नृत्य कर रहे हैं । यह स्थान काफी सालों से ऐसी ही पड़ी थी । मनुष्य का जैसे भाग्य परिवर्तन होता है वैसे भूमि का भी होता है । माँ के अधिकार में जमीन आने के बाद से ही सबसे पहले वासन्ती पूजा, धीरे-धीरे श्री सावित्री महायज्ञ, तुलादान, सहस्र चन्डीपाठ, विष्णु महायज्ञ, महारुद्राभिषेक, देवी भागवत पाठ, श्रीमद्भागवत सप्ताह आदि सदनुष्ठान एवं तेरह हजार ब्राह्मण भोजन व सहस्राधिक कुमारी सेवा हुई है । स्थायीभाव से इस आश्रम में श्री माँ अन्नपूर्णा, श्री काली, श्री नारायण, श्री शिव, श्री गणेश, श्री गोपाल, श्री अग्निदेवता नित्य पूजित और सेवित होते आ रहे हैं ।

"जिस प्रकार अर्थशून्य कोषागार का कोई माहात्म्य नहीं है उसी प्रकार धर्महीन मनुष्य जीवन का कोई मूल्य नहीं है ।"

-श्री श्री माँ

श्री श्री माँ के साथ

—रेणुका मुखर्जी

[श्री श्री माँ आनन्दमयी तीस के दशक के उत्तरार्द्ध में बाबा भोलानाथ, (पतिदेव श्री रमणी मोहन चक्रवर्ती) एवं भाईजी (ज्योतिष चन्द्र राय) के साथ उत्तराखण्ड की सुरम्य पताका देहरादून पधारीं। धीरे-धीरे श्री श्री माँ की दिव्य महिमा से आस-पास के अंचल प्रभावित होने लगे। अलमोड़ा बरेली आदि स्थानों में माँ का पदार्पण हुआ। जाति, धर्म की सीमा को तोड़ते हुये आनन्द-प्राप्ति की अभिलाषा से लोग श्री श्री माँ के चरणों में एकत्रित होने लगे। इन्हीं दिनों इलाहाबाद के सुप्रसिद्ध जिला जज श्री नीरजनाथ मुखोपाध्याय ने सपरिवार माँ के दर्शनों का सुअवसर प्राप्त किया, वर्ष था १९३७। यह परिवार बाबा भोलानाथ व भाई जी का भी विशेष स्नेहभाजन रहा। श्री नीरजनाथ मुखोपाध्याय जी की ज्येष्ठ कन्या श्रीमती रेणुका को दीर्घ समय तक श्री श्री माँ के साथ रहकर उनकी अनुपम लीला में योगदान करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इन दिनों की मधुर स्मृतियों को उन्होंने अपनी दैनन्दिनी में संकलित करके रखा है। आज मातृलीला के जिज्ञासु पाठकों के लिये वह अमूल्य निधि है। मूल भाषा बंगला है।]

श्री श्री माँ की शिक्षाप्रद लीला—माधुरी से अबंग—भाषाभाषी भी लाभ उठा सकें, इसी आशय से यह हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया जा रहा है।]

२ जून, १९३६, बरेली,—

हम चारों बहनें दोस्त जैसी थीं। हमारी उम्र, इस प्रकार थी—सिदू (१५) रेणू (१४) कणा (१३) बीथू (१२)। बड़ी ही खुशी में हमारे दिन बीतते थे। हम नैनीताल से लौट रहे थे, वहाँ की बातें हो रही थीं। एक दिन हमलोग बगीचे में टहल रहे थे, टहलना कब बन्द हो गया पता नहीं चला। अचानक एक समस्या ने मन में स्थान ले लिया पता ही नहीं चला। समस्या यह थी—भविष्य में हमारे भाग्य में क्या लिखा है कौन बता सकता है? हमने निश्चय किया कि आज से ठीक दस वर्ष बाद हम सब इसी जगह पर आयेंगी और अपना-अपना अनुभव सुनायेंगी, अभी भविष्य के बारे में जो कल्पना कर रहे हैं उसी प्रकार हुआ या नहीं इस विषय पर चर्चा होगी।

तब सोचा था दस साल बाद हमारी उम्र २४/२५ साल की हो जायगी, खूब बड़े हो जायेंगे, दुनिया में बहुत कुछ जानना व समझना होगा, स्वाधीन तो हो ही जायेंगे, अर्थात् घर से बाहर एक कदम रखने के लिये बहुतों की अनुमति नहीं लेनी पड़ेगी—इत्यादि। दस साल व्यतीत हो गये। वह सुदूर प्रत्याशित समय आज आकर उपस्थित हो गया। अचानक इतनी जल्दी वह आ जायगा ऐसा सोचा नहीं था। पर अब वह मैं कहाँ और कहाँ मेरा वह कल्पित भविष्य? आज जहाँ आकर खड़ी हूँ वह मेरी कल्पना से बाहर है।

२ जून १९४६, सोलन—

बीथू और मैं श्री श्री माँ के साथ सोलन में हैं। हम दोनों को ही दस वर्ष पहले की बात याद है। हम लोगों ने आपस में बात करके अपनी प्रतिश्रुति की बात माँ से कही। इस प्रतिश्रुति की हम रक्षा नहीं कर सके इसलिए हमारे मन में क्षोभ था।

श्री-श्री माँ ने इस बात को बचपना कहकर बहला नहीं दिया। श्री श्री माँ से कहने के बाद हमें लगा कि हम किसी भार से मुक्त हो गये। श्री श्री माँ ने कहा, "देखो एकजन तुम लोगों के बीच नहीं है, (१९४२ सन् में कणा की मृत्यु हो गयी थी) और एक जन अपने परिवार में वह भी दूर चली गयी है। (सिदू का विवाह सन् १९४२ में हुआ था) अब तुम लोग मन ही मन उनका स्मरण करके एकत्र हो जाओ। माँ ने और भी कुछ कुछ कहा था। कुछ क्रियायें भी बतायी थीं। हमलोग श्री श्री माँ की कृपा की बाढ़ में अवगाहन कर अपने ही बनाये हुए बन्धन से मुक्त हुए। तब ही शायद एकान्त में एक ही प्रार्थना की थी, "माँ मेरी रक्षा करो। केवल तुम्हें देखूँगी और तुम्हारी ही सेवा करूँगी। मुझे सदा सदा के लिये अपना लो।

प्रथम दर्शन—२ जून, १९३७, बरेली,

आश्रम में महारतन जी को सभी पहचानते हैं। उनके पति सरदार बलवन्त सिंह जसपाल उन दिनों बरेली में कमिश्नर के पद पर थे। महारतन जी व मेरी माताजी एक महिला क्लब की सदस्या थीं अतः आपस में परिचित थीं। एक दिन महारतन जी ने मेरी माताजी से कहा, "एक बंगाली माताजी रेलवे स्टेशन की धर्मशाला में आ रही हैं कुछ दिन ठहरेंगी। आपकी इच्छा हो तो दर्शनों के लिये आ सकती हैं।"

मेरी माताजी ने थोड़ा संकोच दिखाया। क्योंकि उन दिनों घर की गृहिणी का किसी धर्मशाला में एक अपरिचित "माताजी" के दर्शन के लिये जाना कोई सामान्य बात नहीं थी। पर उनके मन को मानों किसी ने बरबस खींच लिया था। पिताजी की आज्ञा लेकर मेरी माताजी हम चार भाई बहनों को लेकर धर्मशाले में पहुंचीं। मैं पन्द्रह की थी, बीथू तेरह, बिन्दू आठ और बाबू मात्र वर्ष भर का बालक था। धर्मशाला के हाल में दरी बिछी हुई थी उस पर एक कम्बल था कम्बल पर एक सफेद धोती तह ला कर बिछाई गयी थी। उस सामान्य आसन पर असामान्य प्रतिभा एवं महिमान्विता श्री श्री माँ विराजमान हैं। हमलोग पास जाकर खड़े हो गये। मेरी माताजी ने बाद में बताया था कि पहले किस तरह अभिवादन करेंगी यह समझ में नहीं आ रहा था। मन में नाना प्रकार के प्रश्नों का जमघट हो रहा था। "इनका ब्राह्मण शरीर है क्या? प्रणाम करूँ या नहीं? इत्यादि। पर श्री श्री माँ की आनन्दमयी भुवनेश्वरी मूर्ति के सामने श्रद्धा से मस्तक स्वतः ही झुक गया। मेरी माताजी ने नीचे होकर प्रणाम निवेदन किया। माताजी का अनुकरण हम सभी ने किया। श्री श्री माँ ने मधुर मुस्कराकर कुशल संवाद पूछा। महारतनजी-बिल्लोजी, मैं एवं मेरी माताजी श्री श्री माँ के पास बैठे। बीथू, बिन्दू, कमल और विमला (बिल्लोजी की बहनें) एवं और कुछ बच्चों को गैरिक वस्त्रधारी अति सुपुरुष संन्यासी अपने साथ ले गये कीर्तन करने के लिये।

कीर्तन की बड़ी धूम मची। ऐसा कीर्तन हमने पहले कभी नहीं सुना था। भोलानाथजी का परिचय मिला। बरेली में उनको सब "पिताजी" कहते थे। स्वामी अखण्डानन्दजी एवं दीदी के साथ भी परिचय हुआ। हमलोगों ने "भाई जी" को भी देखा वे सर्वदा थोड़ी दूर रहते थे। किसी कार्यवश वे माँ के पास आते तो घुटने टेक कर बैठते थे, जाते समय माँ की तरफ पीठ नहीं मुड़े इसका ध्यान रखकर चलते थे।

हमारे जीवन का एक अभिनव अध्याय प्रारम्भ हुआ। प्रतिदिन प्रातः काल से हमलोग इसी उत्कण्ठा में रहते थे कि कब धर्मशाला में जायेंगे। जाते ही हम श्री श्री माँ के पास बैठते थे, छोटे बच्चे पिताजी के भक्त हो गये, विशेषतः बिन्दु, उसकी आवाज बड़ी मीठी थी। वे प्रायः ही बिन्दु को कंधे पर उठा लेते थे एवं कीर्तन की अगुआई करने को कहते थे। पिताजी (बाबा भोलानाथ) की भाव भङ्गिमा इतनी आनन्ददायक थी कि उनके साधारण तौर से बातचीत न करने पर भी वह समझा जाता था। पिताजी "सच्चिदानन्द" कौड़ी खेलने बैठते थे – सब ही हॉल में ही होता था।

एक दिन की बात मुझे याद आती है। हमलोग जब धर्मशाला के कमरे में घुसे, तब श्री श्री माँ अपने उस सामान्य बिस्तर पर लेटी थीं। मेरे पास जाकर बैठते ही माँ ने कहा, "मेरी पीठ को जरा मल सकती हो?" माँ ने अपने आप ही दिखा दिया किस प्रकार करना चाहिये। माँ की असीम कृपा, समझने की उम्र मेरी नहीं थी, पर यह सेवा बहुत ही अच्छी लगी और इस सेवा का अवसर माँ ने जीवन में अनेक बार दिया है।

सन् १९४७ के मार्च के महीने में श्री श्री माँ शायद आखिरी बार ढाका गयी थीं। दूसरों के साथ मैं भी माँ के साथ थी। सब विशेष स्थान माँ ने अपने आप ही घुमा कर दिखाये – कितना अपूर्व आश्रम है। मानों सत्ययुग का एक ऋषि आश्रम हो। ढाका में उस समय सब ही एक अस्थिरता के परिवेश में थे। श्री श्री माँ प्रायः दिन भर सबसे बातचीत करती रहीं। रात में भी कुछ लोग बातचीत कर रहे थे। वीरेन्द्रचन्द्र, (उनके साथ आगरा रहते हुए हम लोगों का अच्छा परिचय था, पिताजी के मित्र) अमूल्यबाबू और कुछ लोग। मैं माताजी के पीछे बैठकर अपनी दैनन्दिनी में यह बातचीत संकलन करने का प्रयास कर रही थी। अचानक माताजी मेरे घुटनों का सहारा लेकर लेट गयीं। श्री श्री माँ के विश्राम का समय ही नहीं था। अतः माताजी थोड़ा सहारा लेकर लेटी रहें इसलिये मैं बिलकुल स्थिर हो गयी। मेरी बैठने की मुद्रा खूब सहज नहीं थी, पर श्री श्री माँ के दिव्य शरीर के भार का मुझे थोड़ा भी अहसास नहीं हुआ। इससे मैं स्वयं ही आश्चर्यचकित हो गयी। जब भोर होने को आयी तब सब माँ को प्रणाम निवेदन कर अपनी-अपनी जगह लौट गये। माँ भी उठ पड़ीं।

यह सब यादें ही अब जीवन-यात्रा की सहारा हैं। बरेली की बात पर लौट आया जाय। मेरे पिताजी धर्मशाला में नहीं जाते थे। उनका "साधु दर्शन का कोई आग्रह नहीं था। पर मेरी माताजी को रोकते नहीं थे। एक दिन बिन्दु को बहुत बुखार आया। मेरी माताजी उसको लेकर घर पर ही रहीं, चिकित्सक आयेंगे। शहर में टाइफाइड (Typhoid) की बीमारी फैली है। इसलिये पिताजी काफी चिन्तित हैं। अचानक खबर आयी कि हमारे पास ही श्रीमती दीक्षित के घर

श्री श्री माँ पधारी हैं, मेरी माताजी एवं उनके पीछ-पीछे हम सब दौड़-दौड़ कर श्रीमती दीक्षित के बैंगले पर पहुँचे । श्री श्री माँ ने मुसकान भरी दृष्टि डालते हुए मेरी माताजी से पूछा, "तुमलोग पास ही रहते हो क्या ? मेरी माताजी ने इशारे से हमारा बैंगला दिखा दिया । श्री श्री माँ तब श्रीमती दीक्षित के घर से रवाना हो रही थीं । वे चलते-चलते बगीचे के फाटक से हमारे मकान के सामने आकर खड़ी हो गयीं साथ में काफी लोग थे । चिकित्सक आये हैं मेरे पिताजी उनसे बातचीत कर रहे हैं । श्री श्री माँ ने खुद ही मेरे पिताजी को पहचान लिया और कहा, "पिताजी, आपके बिना बुलाये ही मैं आपके घर घुस पड़ी हूँ ।"

पिताजी थोड़ा संकोच के साथ सामने आकर हाथ जोड़ कर खड़े हो गये । इस बीच मेरी माताजी ने कुर्सी मँगवायी । श्री श्री माँ का आसन लगाने पर वे बैठीं । बिल्लोजी किसी कार्यवश घर के भीतर गयी थीं । उन्होंने बिन्दु को पलंग पर लेटा देख कर गोद में उठाकर श्री श्री माँ के सामने ले आयीं मैंने भी सहायता देकर उसे कुर्सी पर बिठा दिया । श्री श्री माँ ने अपने गले से उतार कर एक माला बिन्दु के गले में पहना दी । कुछ बातचीत के बाद श्री श्री माँ चली गयीं, भक्त गण भी साथ हो लिये ।

मेरे पिताजी भी दूसरे दिन से धर्मशाला जाने लगे । इस आकर्षण को कौन रोक सकता है? चिकित्सक को बिन्दु को किसी प्रकार का ज्वर या रोग का प्रमाण न मिलने पर हम भी खुश थे । फिर से खुशी के दिन आये । शाम के समय मेरे पिताजी अपनी मोटर से बाबा भोलानाथ, श्री श्री माँ, दीदी एवं हम लोगों में से एक-दो को लेकर बरेली के मन्दिर एवं बगीचे में घुमाने ले जाते थे । इस समय के बहुत से चित्र भी हमारे पास हैं ।



माँ आनन्दमयी

[एक संस्मरण]

— मोहनलाल आर्य

एक बार की घटना है माँ विध्याचल के आश्रम में आयी थीं । उन्हें कालका मेल से दिल्ली जाना था । ट्रेन की प्रथम श्रेणी में उनका रिजर्वेशन था । माँ कार द्वारा आश्रम से मीरजापुर रेलवे स्टेशन पर आ गयीं, ट्रेन लेट थी । माँ की कुर्सी स्टेशन पर पीपल के पेड़ के नीचे लगा दी गयी । जिनको पता चला वे माँ के दर्शनार्थ वहाँ आ गये अच्छी-खासी भीड़ जमा हो गयी । माँ से जुड़े लोग जानते हैं कि माँ कभी 'प्रवचन' नहीं करती थीं । उन्हीं कथाओं में प्रवचन का भाव निहित होता था । उस दिन भी वही हुआ । माँ ने मुझसे पूछा — "बाबा क्या नाम है ? क्या करते हो ?" फिर मेरे बच्चों से उनका नाम पूछा । 'किस क्लास में पढ़ते हो — यह पूछा । और एक उपदेशात्मक कहानी सुनाई । हिन्दी माँ की मातृभाषा नहीं थी । टूटी-फूटी हिन्दी को बंगला के साथ मिश्रित करके वे बोलती रहीं । सब लोग आनन्द से मगन होते रहे । ट्रेन की खिड़की से सभी को प्रसाद बाँटा । ट्रेन ने सीटी दी । ट्रेन चलने लगी और धीरे-धीरे आँखों से ओझल हो गयीं ।

अब माँ का पार्थिव शरीर नहीं है । लेकिन माँ की स्मृतियाँ आज भी मन में बसी हैं ।

*

*

*

वर्ष तो ठीक-ठाक याद नहीं है । सम्भवतः १९७१ की बात है । माँ का जन्मोत्सव मनाया जा रहा था । मेरा अनुमान है कि वह माँ की हीरक जयन्ती थी । माँ का एकाध जन्मोत्सव भी देखा था । लेकिन उपर्युक्त हीरक जयन्ती की बात और ही थी । वैसी जयन्ती मैंने किसी की नहीं देखी ।

वह कार्यक्रम वाराणसी में आयोजित था । वाराणसी के भदौनी मुहल्ले में माँ का आश्रम है । आश्रम तो गली में है लेकिन माँ आनन्दमयी अस्पताल आश्रम के पास ही मेन रोड पर है । वहीं पर कार्यक्रम का आयोजन किया गया था ।

यों तो माँ के भक्त हर जाति और समुदाय के हैं लेकिन बंगालियों की प्रमुखता है । बंगाली लोग बड़े ही सुरुचिसम्पन्न होते हैं । उनमें कलात्मक अभिरुचि होती है । अतः माँ का वैसा पण्डाल मैंने आज तक नहीं देखा । कपड़े का पण्डाल बना था लेकिन लगता था जैसे पतंगी कागज से बनाया गया हो । उसकी अद्भुत छटा थी - अनुपम ग्लैमर था ।

साधु-महात्माओं एवं शंकराचार्यों को बैठने के लिये अलग-अलग छोटे-छोटे मंच बने थे । एक भव्य मंच पर माँ आसीन थीं । जिन लोगों ने माँ को देखा है वे जानते हैं कि माँ का सौन्दर्य स्वर्गिक सौन्दर्य था । उस रूप की तुलना किसी से नहीं की जा सकी । छोटे-बड़े सभी माँ को एकटक देख रहे थे । दर्शन से तृप्ति नहीं हो रही थी ।

एक के बाद एक महापुरुष माँ के विषय में बोल रहे थे । एकाध साधु-सन्त ने कहा "लोग ब्रह्म-ब्रह्म" की बात करते हैं । लेकिन मुझे तो लग रहा है कि माँ ही साक्षात् ब्रह्म के रूप में सामने बैठी हैं ।"

बोलने वालों में स्वामी शरणानन्द भी थे । वे बड़े ही उच्चकोटि के महापुरुष थे । बचपन में चेचक के कारण उनकी दोनों आँखों की ज्योति चली गयी थी । बाल-दाढ़ी बढ़ी थी । वे भक्ति-भाव से माँ का वर्णन कर रहे थे और दोनों आँखों से आँसू बह रहे थे । उनके 'भाव' को देखकर सभी के आँसू बह रहे थे । वैसा दृश्य भी मैंने कभी नहीं देखा था माँ निर्लिप्त भाव से स्वाभाविक रूप से मुस्करा रही थीं । अजीब दृश्य था ।

लोग कहते हैं कि माँ सदैव 'सहज समाधि' में रहती थीं माँ का वह 'भाव' तो बहुतों ने देखा है । लेकिन उस दिन माँ ने समाधि ली थी । मंच पर माँ पैर सिमेट कर लेट गयीं । किसी ने सफेद ऊनी शाल उन पर डाल दी । उसके बाद जो देखा वैसा कभी नहीं देखा था बंगाली महिलाओं ने माँ के ऊपर हजारों साड़ियों का अम्बार लगा दिया । साड़ियों का पहाड़ खड़ा होगया । बंगाली संस्कृति से परिचित लोग जानते हैं कि शुभ अवसरों पर वे 'उलूक ध्वनि' (उल्लू की बोली) निकालते हैं । अतः सभी नारी-पुरुष उलूक ध्वनि निकालने लगे । अजीब प्रकार का माहौल बन गया । लोगों ने कहा कि जब सुबह माँ की समाधि टूटेगी तब ये साड़ियाँ हटेंगी और जिनकी साड़ियाँ हैं उन्हें दे दी जायेंगी ।

दूसरे दिन सुबह माँ की समाधि टूटी । माँ को फूलों से सजाया गया । उन्हें पालकी पर बिठाया गया । लोग पालकी को उठा कर आश्रम में ले गये । वहाँ माँ ने अपने हाथों से भक्तों को प्रसाद बाँटा ।

एक बार की बात है माँ बनारस में आयी थीं । आश्रम में एक बड़ा सा बरामदा है । बड़ी सी छत है । उसी से सटा हुआ मन्दिर है । माँ छत पर बैठ गयीं । भक्तों से स्थान भर गया । भजन होने लगा । पहले तो माँ सुनती रहीं । फिर मजीरा बजाकर स्वयं भजन गाने लगीं । उस मधुर संगीत की तुलना किससे की जाय ?

एक बार दुर्गा पूजा चल रही थी । माँ वाराणसी में थीं । संयोग से मैं भी उन दिनों वहाँ गया हुआ था । उस समय अलग-अलग तिथियों को अलग-अलग मुहल्लों में आयोजन रखे जाते थे । माँ वहाँ जाती थीं । एक तो दुर्गापूजा का माहौल, दूसरे माँ की उपस्थिति से वातावरण ही बदल जाता था । ऐसे ही एक अति विशिष्ट लोगों की सभा में माँ बैठी थीं । सामने जमीन पर जज, वकील, बड़े-बड़े अधिकारी बैठे थे । एक सज्जन बंगला में धाराप्रवाह बोले जा रहे थे । संयोग से उन्हें भी दिखाई नहीं पड़ता था — वे प्रज्ञाचक्षु थे । उनकी आँखों से आँसुओं की अचिरल धारा बह रही थी । वे रोये चले जा रहे थे । उसका प्रभाव यह हुआ कि सामने बैठे सभी लोगों के प्रेमाश्रु बहने लगे । माँ चुपचाप बैठी रहीं ।

श्री राधे जू विहरति हरिरिह सरस वसन्ते

— प्रेमानन्द गिरि

चतुर्थ दिवस, चन्द्रावलि-लीला

सर्वप्रथम रास की परम्परानुसार श्री श्यामा श्याम की अत्यन्त मनोहर झाँकी के दर्शन तदुपरान्त रास-माधुरी के पद आरम्भ होते हैं । सखियाँ आरती कर युगल किशोर की जय-जयकार करती हैं । रासोपरान्त चन्द्रावलि-लीला प्रारम्भ होती है ।

ठाकुर की रूप-माधुरी पर मोहित चन्द्रावलि श्यामसुन्दर को अपने घर ले जाकर अनेक पूजन सामग्री से विधि पूर्वक उनका सम्मान करती हैं ।

उधर श्री राधा रानी श्यामसुन्दर के दर्शन बिना व्याकुल हो उठती हैं । संगीत की तान पर गान प्रारम्भ हो जाता है,

"श्याम सुन्दर बिना व्रज की सखियाँ दुखी
 उनका छिपकर के जाना गजब हो गया ।
 कोई बेसुध पड़ी कोई बेकल खड़ी
 उनका वंशी बजाना गजब हो गया ।
 दर बदर ढूँढ़ती हैं वे श्याम को,
 उनका छिप करके जाना गजब हो गया"

अन्त में राधे जू को सन्देह होता है कि श्यामसुन्दर अवश्य चन्द्रावलि के घर गये होंगे ।

राधा रानी चन्द्रावलि को बुलवाती हैं । राधे जू के आग्रह पर चन्द्रावलि जी उनके पास आती हैं पर धोखे से वे श्यामसुन्दर का पटुका उतारना भूल जाती हैं जो उन्होंने ओढ़ रखा है ।

चन्द्रावलि जी आकर राधे रानी को प्रणाम कर कहती हैं कि श्यामसुन्दर मेरे घर नहीं आये । तब राधा रानी उलाहना देकर कहती हैं— हे सखि ! यदि श्यामसुन्दर तेरे यहाँ नहीं आये तो पटुका तेरे पास कैसे आया !

अन्त में मुस्कराकर चन्द्रावलि जी श्यामसुन्दर का आना स्वीकार करती हैं और तब दोनों गले मिलकर "श्यामसुन्दर" की जय जयकार करती हैं ।

पंचम दिवस, नौका लीला-चंग (पतंग) उड़ान-लीला

सर्व प्रथम रास के दर्शन । सखियाँ गाती हैं -

"जुलम करि डारो री या कारी काँवर वारे ने -
 या पीरे पटुवा वारे ने-

9. मथुरा में याने जनम लियो है

- गोकुल में बजे नगाड़े री
 या कारी काँवर वारे ने -
 २. सोय गए सब पहरे वारे
 आप हि खुल गए तोर री या कारी काँवर वारे ने
 ३. लै वसुदेव चलै गोकुल कूँ
 जमुना ने चरण पखारे री —
 ४. चन्द्र सखि भज बाल कृष्ण छवि
 ५. जसुदा के लाल कहाये री
 श्री ठाकुर गाते हैं -
 सिन्धु सुता जो लक्ष्मी
 मैं याही को भरतार
 वाही को माँगे जगत् इनकी है बलिहार"

जगत् के और मेरे रसिक भक्तन में अन्तर है - श्यामसुन्दर अपनी मधुरतम वाणी में जागतिक भक्त और रसिक भक्तन को अन्तर बताते हैं और रसगान करते हैं—

"इनके व्यञ्जन मोहे न भावें
 मैं रसिकन को दास कहाऊँ
 ब्रज रसिकन को मैं चाकर
 नित नित बलि बलि जाऊँ
 तदुपरान्त लीला प्रारम्भ होती है —

श्री राधा एक सखि को वन में यह देखने को भेजती हैं कि श्यामसुन्दर अकेले हैं या ग्वालों के साथ । पहली सखि इन्द्रलेखा श्यामसुन्दर को ढूँढ़ने जाती है ।

आज श्याम ने पूर्णरूपेण लाल श्रृंगार को अपनाया है जो इतना मधुर व आकर्षक है कि सखि सब कुछ सुध बुध खो बैठती है -यहभूल जाती है कि श्यामसुन्दर के साथ ग्वाल बाल हैं कि नहीं ।

ठाकुर के लाल श्रृंगार के रस में पगी सखि राधे जू से स्पष्ट निवेदन करती है कि मैं तो श्याम सुन्दर के श्रृंगार को देखकर इतनी तन्मय हो गयी कि मुझे ग्वाल बालों को देखने की सुधि ही नहीं रही । अब राधे जू चित्रा सखि को वन में यह देखने भेजती हैं कि श्यामसुन्दर वन में अकेले हैं या ग्वालों के साथ-चित्रा श्यामसुन्दर के पीले श्रृंगार को देखकर गा उठती है —

"आज ठाड़ो री बिहारी जमुना तट पै
 कोइ जइयो न अकेली पनघट पै —
 मन गयो री अटक जाके पीरे पट पै —
 नन्दजू को छोरा देख धीरज गयो खोय
 श्याम रसिया तो नाचै वंशी वट पै —

चित्रा सखि राधा रानी से निवेदन करती है कि श्याम की शृंगार माधुरी के कारण उसे कुछ भी सुधि न रही ।

अब क्रमशः ललिता, विशाखा, सुदेवी, चित्रलेखा, सुलेखा जाती हैं । ठाकुर उन्हें अलग, अलग काले, नीले, हरे, सफेद शृंगार में दर्शन देकर कृतार्थ करते हैं ।

वही एक प्रश्न कि श्यामसुन्दर अकेले हैं या ग्वाल बालों के साथ । शृंगार माधुरी में मस्त सखियाँ उत्तर देने में असमर्थ रहती हैं ।

तत्पश्चात् श्याम राधिका मिलन होता है । ठाकुर चंग उड़ाने का प्रस्ताव रखते हैं - किशोरी जी सूर्यनारायण पूजन के लिये जल लाने का प्रस्ताव रखती हैं । श्याम कहते हैं कि "चंग उड़ाय के सूर्यनारायण की पूजा है जायगी" ।

राधिका श्याम पतंग उड़ाना आरम्भ करते हैं । श्याम की पतंग २ बार कटी और किशोरी की ३ बार ।

श्यामसुन्दर हँसकर श्रीराधा का आलिंगन करते हैं, और इसके साथ ही लीला का विश्राम होता है ।

षष्ठ दिवस लीला- श्रीयमुना व श्यामसुन्दर मिलन- श्री श्याम श्यामा का दिव्य दरबार

सखियाँ संगीत की तान छेड़ कर गाती हैं-

"चन्द्रसखि" भज बाल कृष्ण छवि

जसुदा के लाल कहाए री या कारी —

तदुपरान्त ठाकुर का अद्भुत नृत्य होता है । ठाकुर जी को राधा रानी की प्रसन्नता हेतु मोर बनने की प्रेरणा होती है - अद्भुत मोर पंख लगा कर ठाकुर मंच पर मयूर शृंगार के साथ पधारते हैं । सखियाँ गाती हैं-

"कान्हा मोर बन आयो

बलिहार-बलिहार

समय समय पर मोर वेष में श्री ठाकुर "कुहू" "कुहू" कर लीला विनोद करते हैं और इस मयूरी छवि पर भक्त बलिहार जाते हैं -

अब ठाकुर पुनः अपने स्वरूप में पधारकर मञ्चासीन हो जाते हैं ।

अब यमुना व श्यामसुन्दर मिलन लीला आरम्भ होती है, श्री किशोरी की रूपमाधुरी का वर्णन करते हुए श्री श्यामसुन्दर गाते हैं - "गोरे मुख पै तिल बन्यो, वाही करूँ प्रणाम,

मानो पलँग बिछाय के,

पौढ़े सालिगराम

इधर सखियाँ ठुमका दे दे गाती हैं -

"आज ठाड़ो री बिहारी जमुना तट पै ।

मत जइयो री अकेली कोई पनघट पै -

श्याम रसिया तो नाचै बंसी बट पै -

श्री यमुना जी प्रकट रूप से मंच पर दर्शन देती हैं - और श्यामसुन्दर से प्रार्थना करती हैं कि आप अपनो शृंगार मोहे दै दो ।

श्यामसुन्दर कहते हैं कि मैं राधे जू से आज्ञा ले लूँ । क्योंकि उनकी आज्ञा के बिना मैं कोई काम नाय करूँ ।

जब यमुना जी विशेष आग्रह करती हैं तब श्यामसुन्दर कहते हैं कि सखियाँ सब पहिचान लेंगी - राधा मेरी आराधक है । संगीत आरम्भ

परम धन राधा नाम आधार

जाहे श्याम मुरली में टेरत

सुमिरत बारम्बार - - - - -

केतिक रूप धरे नंद नंदन

तहूँ न पायो पार - - - - -

श्री शुकदेव प्रगट नहिं कीनो

जानि सार को सार - - - - -

व्यासदास यहि प्रगट बखाने

महिमा अपरम्पार - - - - -

अब श्री राधा जी का दर्शन होता है । वे अकेली ही यमुना तट पर बिहार कर रही हैं । जल में परछाईं देख चौंक जाती हैं । वे परछाईं पर मुग्ध हो बारम्बार उसे बुलाती हैं ।

द्वितीय दृश्य में राधा रानी का दरबार प्रदर्शित होता है ।

"बैठी भानु दुलारी सखिन संग" राधे जू श्याम दर्शन बिन विकल हैं । वे चित्रा सखी से आग्रह करती हैं कि कोई श्याम का चित्र बनाओ । चित्रा चित्र बना लाती है, जिसमें श्यामसुन्दर प्रिया का रूप निहार कर बलिहार जा रहे हैं-

प्रिया जू इस छवि पर बलिहार हो ध्यानरूप हो जाती हैं - चित्रा जू राधे रानी को बातों में लगाना चाहती हैं इतने में छैल बिहारी श्याम पधारते हैं । वे राधा रानी के चरणों में यावक (महावर) लगाते हैं ।

राधारानी के एक चरण में पहिले से ही महावर लगा है - किशोरी जी कहती हैं "मेरो बायों पैर भारी है - याही में यावक लग्यो है ।"

अब श्यामसुन्दर दाँएँ चरण में यावक लगाते हैं - सखियाँ बलिहार जाती हैं -

"राधे जू के चरण बलिहारी"

जय जयकार होती है - राधे जू श्यामसुन्दर से कौतूहलवश पूछती हैं - "मेरी सी सूरत जल में कौन है ? जब मैं बोलूँ तब बोले, जब हँसू तब हँसे ।

श्याम जी राधे के भोलेपन पर बलिहार जाते हैं और कहते हैं - "श्यामा जू । वे तो आप ही हैं - आपकी ही छाया दिखाई दे ।" इतने में यमुना जी का प्रवेश होता है । श्यामसुन्दर व यमुना जी का एक रूप । इधर श्याम उधर यमुना और मध्य में श्री श्यामा ।

लीला तदुपरान्त विश्राम लेती है ।

जय श्री राधे

आनन्दमयी - स्मृति

—चित्रा घोष

नवम्बर १०, १९५८, स्थान - वाराणसी

माँ के कमर में काफी दर्द होने के कारण माँ केवल रात्रि को ही नीचे उतरतीं। काली पूजा के समय किसी तरह चण्डीमण्डप में बैठी थीं, इस कमर दर्द के लिये ही माँ का अन्नकूट में रहना हुआ, नहीं तो ११ ता. को माँ के चले जाने की बात थी। माँ १२ तक रह गयीं। माँ के बिना अन्नकूट यह सोचा ही नहीं जा सकता। अन्ततः कमर दर्द के बहाने भक्तों की पुकार पर माँ रुक गयीं।

१२ नवम्बर,

आज अन्नकूट है माँ की यहाँ रहने की बात नहीं थी, कानपुर जाना था। माँ १० बजे अन्नकूट के आयोजन में अन्नपूर्णामन्दिर में उपस्थित रहीं। कन्यापीठ के हाल में माँ को भोग लगाया गया। १०८ प्रकार के विभिन्न पकवानों से माँ के भोग का आसन सजाया गया था। माँ की दृष्टि सदा सब प्रकार की पूर्णता पर रहती है। कानपुर में "जयपुरिया" द्वारा संयम सप्ताह का आयोजन किया गया है। कल से संयम सप्ताह प्रारम्भ होने वाला है। अतः माँ आज ही एक बजे कानपुर रवाना हुईं।

१३ नवम्बर, कानपुर

आज से संयमसप्ताह प्रारम्भ हुआ। श्री सीताराम जयपुरिया ने विराट आयोजन किया है। पण्डाल बड़े ही कलापूर्ण ढंग से सजाया गया है। रंगों का सम्मिश्रण सुरुचिसम्पन्न था। सदाबहार पत्तों के गमलों ने और भी सुन्दरता बढ़ा दी थी। माँ सुशील (सत्यानन्द, इटली) से दोनों समय फूलों से रंगोली करवाती थीं। सुशील की कलाकृति के चार चित्र पीछे की ओर टाँगे गये थे। कहना न होगा कि यह सभी चित्र माँ के ही निर्देश से बनाये गये थे। माँ को जितनी गेंदे की मालायें मिलती थीं उनसे माँ शिवलिंग जैसा स्तूप बनवाती थीं।

हमलोग छविदी (छवि चौधरी) सती, मणि, पुष्प, शान्ता, निर्मलजी, बुआजी (ललिता पाठक) और मैं एक कमरे में थे। मेरी माताजी भी आयी थीं, वह तम्बू में थीं। माँ के लिये फूस की कुटिया बनवाई गयी थी। इसके अलावा एक बढ़िया मोटर भी माँ की सेवा के लिये वहाँ रहती थी। माँ पण्डाल से बाहर आकर उसी मोटर में ही एकान्त वार्ता सुनती थीं। माँ घास के मैदान में एकान्त में टहल सकें, किसी प्रकार की बाधा न पहुँचे इसलिये बाहर से घेर दिया था। लोग घेरे के बाहर से ही माँ का दर्शन करते थे।

बुनीदी के पिता की अस्वस्थता के कारण माँ ने उनको पिता के पास कलकत्ते भेज दिया। छवि दीदी को रख लिया।

धीरे-धीरे भीड़ बढ़ने लगी । उतने बड़े पण्डाल में लोगों को खड़ा रहना पड़ता था । रोज रात को माँ का सत्संग होता था । "संयम" इस शब्द के सम्बन्ध में माँ का कहना था—"स्वयं यम जिस क्रिया में मृत्यु की भी मृत्यु हो जाती ।"

मेरी माताजी और मैंने संयम सप्ताह में प्रथम श्रेणी का व्रत किया था । शरीर पर कोई विपरीत असर नहीं पड़ा वरना तबियत ठीक ही थी ।

माँ की कृपा से निर्विघ्न पूरे सात दिनों तक विधि पूर्वक संयम किया गया । आखिरी दिन प्रातः उषा कीर्तन में हमलोग जाकर माँ को ले आये । माँ ने सबको माला पहनायी । रात को जयपुरिया वालों ने माँ की आरती उतारी । बड़ी भीड़ थी ।

२० नवम्बर

आज भण्डारा हो जाने के उपरान्त माँ मोटर द्वारा अपराह्न साढ़े चार बजे लखनऊ के लिये रवाना हुई । बिल्लोजी और मैं भी मोटर से लखनऊ आये । श्री पन्नालाल जी की पुत्री लीला सहाय के पति श्री रामेश्वर सहाय उन दिनों वनविभाग के उच्चपदस्थ अधिकारी थे । माँ की व्यवस्था वनविभाग के विश्रामस्थल पर की गयी थी ।

२१ नवम्बर लखनऊ,

आज प्रातः दस बजे माँ को लखनऊ के चिड़ियाघर ले जाया गया था । गैंडा, सिंह, बाघ, कंगारू सब माँ ने उतर उतर कर देखा इसके चित्र एवं चल चित्र भी लिये गये । यह चिड़ियाघर एक विशेष प्रकार का है । विदेशी परम्परा का अनुकरण करते हुए बिना पिंजरों के जानवरों को कृत्रिम जंगलों में रखा गया है । आज शाम को माँ श्री पन्नालाल जी की पुत्री चन्द्रा के घर गयीं । वहाँ घास के मैदान में माँ के बैठने की व्यवस्था की गयी थी । इनके पति श्री गोविन्दनारायण बड़े सरकारी अधिकारी हैं । इनका मकान पाश्चात्य शैली का अनुकरण कर रहा था । यहाँ माँ के पास सभी उच्चपदस्थ लोगों की ही जमघट थी ।

माँ आज चार पाँच जगहों में गयीं, आज ही माँ रात की गाड़ी से दिल्ली रवाना हो गयीं । मैं बिल्लोजी और शोभा दी देहरादून आये । माँ के साथ छविदी एवं पुष्पा थी ।

२३ नवम्बर, १९५८

प्रायः एक वर्ष बाद मैं देहरादून के किशनपुर आश्रम में आयी । नीचे के कमरे में रह रही हूँ । काफी ठंडा है । पहाड़ देखने में तथा टहलने में काफी आनन्द आता है ।

२५ नवम्बर,

आज माँ की देहरादून आने की बात थी पर माँ दिल्ली से लौटते हुए हरिद्वार में उतर गयीं । यह सुनकर शोभा दी हरिद्वार चली गयीं । छविदी को दिल्ली रख आयी हैं ।

२६ नवम्बर,

माँ आज दस बजे के करीब टैक्सी द्वारा किशनपुर आयीं । आते ही मन्दिर का काम देखकर पैदल कल्याण वन गई । वहाँ थोड़ी देर धूप में बैठकर फिर लौट आयीं । दोपहर में माँ के पांस

छत पर काफी देर थे । माँ साढ़े चार बजे हरिद्वार चली गयीं । हम लोगों से कहा कि बाद में आनन्द काशी ले जायेंगी ।

२७ नवम्बर,

आज शाम को चार बजे माँ हरिद्वार से आनन्दकाशी गयीं । दो मोटरों में हम लोग भी माँ के साथ आनन्दकाशी पहुंचे । एक में माँ दीदी माँ विमलादी, योगी भाई और पुष्प, दूसरे में नारायण स्वामी और योगी भाई के लोग थे ।

२८ नवम्बर,

माँ आनन्दकाशी में हैं । परमानन्द स्वामी लौट आये हैं मन्दिर का काम पूरा कराने के लिये । माँ अपने ख्याल में आनन्द में हैं । दिनभर अर्थात् प्रातः १० बजे से शाम के चार बजे तक बरामदे में धूप में लेटी रहती हैं । शाम के चार बजे भगवान् सूर्य झट से पहाड़ों के पीछे छुप जाते हैं माँ भी उठकर भीतर कमरे में चली आती हैं ।

[नोट :- गत अंक के "आनन्दमयी स्मृति" में "मदर" का उल्लेख आया है । "मदर" यह शब्द श्री अरविन्द आश्रम पॉण्डिचेरी की माताजी (Mother) के लिए है ।]

प्रयागराज पूर्ण कुम्भ की झलकियाँ

नयी शताब्दी का पहला पूर्णकुम्भ कुछ नवीनता लेकर आयेगा यही आशा की जाती है । युगों से प्रयागराज की महिमा गायी जाती है युगों तक गायी जायगी । विश्व का यह एकमात्र विशाल मेला है जो कि नदी की वेला भूमि पर होता है । गंगा यमुना सरस्वती की यह भूमि महापवित्र है । प्रतिवर्ष यह जलगर्भ में डूब जाती है तथा वर्षा के उपरान्त यह विराट वेला भूमि ज्ञान गंगा की त्रिवेणी में अवगाहन करने जिज्ञासुओं का आह्वान करती है ।

तीरथराज प्रयाग की महिमा गोस्वामी जी गाते हैं—

तीरथराजु दीख प्रभु जाई"

सचिव सत्य श्रद्धा प्रिय नारी । माधव सरिस मीतु हितकारी ।
चारि पदारथ भरा भँडारु । पुन्य प्रदेस देस अति चारु ॥
छेत्रु अगम गढ़ु गाढ़ सुहावा । सपनेहुँ नहिं प्रतिपच्छिन्ह पावा ॥
सेन सकल तीरथ वर बीरा । कलुष अनीक दलन रन धीरा "
संगमु सिंहासनु सुठि सोहा । छत्रु अखय बटु मुनि मनु मोहा ॥
चँवर जमुन अरु गंग तरंगा । देखि होहिं दुख दारिद भंगा ॥

दोहा— सेवहिं सुकृती साधु सुचि, पावहिं सब मन काम ।

बंदी वेद पुरान गन, कहहिं बिमल गुनग्राम ॥

अयोध्याकाण्ड (१०५)

[प्रभु श्री रामचन्द्र जी ने तीर्थों के राजा प्रयाग का दर्शन किया । उस राजा का सत्य मन्त्री है, श्रद्धा प्यारी स्त्री है और श्री वेणीमाधव जी-सरीखे हितकारी मित्र हैं । चार पदार्थों (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) से भण्डार भरा है और वह पुण्यमय प्रान्त ही उस राजा का सुन्दर देश है । प्रयाग क्षेत्र ही दुर्गम, मजबूत और सुन्दर गढ़ (किला) है, जिसको स्वप्न में भी [पाप रूपी] शत्रु नहीं पा सके हैं । सम्पूर्ण तीर्थ ही उसके श्रेष्ठ और वीर सैनिक हैं, जो पाप की सेना को कुचल डालने वाले और बड़े रणधीर हैं । गंगा यमुना और सरस्वती का संगम ही उसका अत्यन्त सुशोभित सिंहासन है । अक्षयवट छत्र है, जो मुनियों के भी मन को मोहित कर लेता है । यमुनाजी और गंगा जी की तरङ्गें उसके [श्याम और श्वेत] चँवर हैं, जिनको देखकर ही दुःख और दरिद्रता नष्ट हो जाती है ।

पुण्यात्मा, पवित्र साधु उसकी सेवा करते हैं और सब मनोरथ पाते हैं । वेद और पुराणों के समूह भाट हैं, जो उसके निर्मल गुणगणों का बखान करते हैं ।

माघ में सूर्य भगवान् जब मकर राशि पर जाते हैं तब तीर्थराज प्रयाग में सब आते हैं । गोस्वामी जी कहते हैं,

माघ मकरगत रवि जब होई । तीरथपतिहिं आव सब कोई ॥

यह युगों की परम्परा है । इसी परम्परा के चलते श्री श्री माँ के सत्संग का आयोजन होता था तीर्थराज की पवित्र भूमि पर । भक्तगण इस पवित्र स्थान पर माँ का सान्निध्य पाते थे । और क्या चाहिये मुमुक्षु साधकों को । आज भी प्रयागराज की पवित्र वेलाभूमि पर श्री आनन्दमयी संघ की ओर से श्री श्री माँ के शिविर का आयोजन किया जाता है ।

सन् १९७७ में श्री श्री माँ की उपस्थिति में होने वाला प्रयागराज का आखिरी पूर्ण कुम्भ का मेला था । सन् १९८२ में श्री श्री माँ की उपस्थिति में अर्द्धकुम्भ मेला सम्पन्न हुआ था ।

तो आइये हम १९७७ के पूर्ण कुम्भ मेले में माँ की उपस्थिति की थोड़ी झलकियाँ लें ।

आत्मानन्द जी अपनी मातृलीला में लिखती हैं - "६ जनवरी, १९७७ को माताजी मोटर द्वारा वाराणसी से इलाहाबाद की ओर रवाना हुई । एक रात माँ ३१ नं. जार्ज टारुनं स्व. श्री नीरजनाथ मुखर्जी के यहाँ रहीं । श्री श्री माँ की उपस्थिति के आधे घण्टे के भीतर उत्तर प्रदेश के राज्यपाल डा. चेन्ना रेड्डी लखनऊ से माँ के दर्शनों के लिये पधारें । ७ जनवरी को निर्वाणी अखाड़ा द्वारा आयोजित शाही शोभायात्रा में श्री श्री माँ को ले जाया गया । सर्वप्रथम अखाड़े के महामण्डलेश्वरगण शोभा यात्रा की अगवानी कर रहे थे उनके पीछे कीर्तन गाने वालों की मण्डली थी । उसके बाद हमारे आश्रम की नारायण शिला पालकी में विराजमान थी । उनके पीछे चाँदी के सिंहासन पर श्री श्री माँ विराजमान थीं । यह सिंहासन एक छकड़ा गाड़ी पर रखा गया था जिसे गाड़ीवान खींच रहा था माँ के बाद महामण्डलेश्वर गीता भारती जी थीं । मेले के मुख्य द्वार पर पहुँचने के चार मील पहले से ही यह शोभा यात्रा प्रारम्भ हुई थी जो निर्वाणी अखाड़े पर आकर रुकी । यहाँ से श्री श्री माँ श्री श्री आनन्दमयी संघ के शिविर में पधारें । दश तथा ग्यारह जनवरी को १०८ महात्माओं को सविधि भोजन कराया गया प्रत्येक को कम्बल भी भेंट किये गये थे । सायंकाल प्रायः बारह महामण्डलेश्वरों ने हमारे सत्संग पण्डाल की शोभा बढ़ाई । सभी के प्रवचन हुए । उसके बाद आरती हुई । आरती के उपरान्त उन्हें भोजन कराया गया । १४, १९ तथा २४ इन मुख्य शाही स्नानों के दिन शाही शोभायात्रा में श्री श्री माँ की भी उपस्थिति थी । श्री माँ के स्नान का तरीका था, माँ घुटने तक जल में उतर जातीं एवं झुककर अपने मस्तक एवं श्री शरीर पर जल का छिड़काव कर लेती थीं । उस समय पास में रहने वाले भाग्यवालों को दो चार बूँद पानी मिल जाता था ।

उन्नीस जनवरी मुख्य स्नान का दिन था । कई दिनों से वर्षा हो रही थी, काफी ठंड थी । मौनी अमावस्या की तिथि यह देख माँ ने हँसते हुए कहा, चूँकि तपस्या करना यह हमारे समय की भावना नहीं है अतः भगवान् ने अपनी असीम कृपा और करुणा से सबको आज उपाधि रहित कर दिया है - धनी, दरिद्र, साधु, गृहस्थ सभी आज के इस पुण्यमय दिन में कठिनता को सहन करते हुये अपने एक ही लक्ष्य की ओर जा रहे हैं । सब को आज नंगे पैर, गीले, फिसलन वाले, कीचड़ में धँसते हुये मार्ग से त्रिवेणी के पवित्र जल में डुबकी लेने के योग्य बनाने के लिये भगवान् आकाश

गंगा के जल से स्नान करा कर सबको पवित्र बना रहे हैं। माता जी बार बार यही कहा करती हैं, "जो भी होता है यह मंगल के लिये ही होता है।" माताजी सर्वदा प्रत्येक वस्तु में उसके मंगलमय दिशा को दर्शाती हैं।

कुम्भ में निवास कालीन माता जी अत्यन्त आनन्दस्वरूप में थीं। चारों ओर महात्माओं के संगम, स्नानार्थ आये हुये करोड़ों यात्रियों के पुण्यमय भाव से वायुमण्डल पवित्र था। इस पवित्रभाव का माता जी की शारीरिक स्थिति पर भी प्रभाव पड़ता था। माता जी को हमने अनेक बार यह कहते सुना है कि "तुम लोगों का शुद्ध भाव ही इस शरीर का भोजन है।" इस सामूहिक विश्वास और आस्था का महत्त्व उपस्थित सभी ने अनुभव किया। सभी अखाड़े वाले माँ को अपने-अपने शिविर में निमन्त्रित करते थे, माँ सभी स्नेहपूर्ण आमन्त्रण को स्वीकार करती थीं। अपने स्वीट्जरलैण्ड प्रवास के दौरान श्री महेश योगी ने माताजी से निवेदन करते हुए पत्र लिख कर प्रार्थना की थी कि उनकी अनुपस्थिति में माताजी उनके भक्तों को अवश्य ही आशीर्वाद दें।"

स्व. श्री रंजीत बनर्जी ने अपने "पूर्ण कुम्भ प्रयाग" नामक लेख में इन दिनों का वर्णन करते हुये लिखा है—

"१८ जनवरी को माँ के निर्देशन में अखण्ड रामायण का आयोजन किया गया था। लोगों की भीड़ नदी के प्रवाह के समान माँ के दर्शनों के लिए उमड़ रही थी, जिनमें माँगने वाले, राज्यपाल, अधिकारी, राजे महाराजे, प्रादेशिक एवं केन्द्रीय सरकारी मन्त्रीगण आदि सभी थे।

श्री श्री माँ की कुटिया एवं हमारा शिविर दूरवाणी एवं दूरदर्शन के लोगों से भरा हुआ था। २२ जनवरी को प्रधानमंत्री के आने की तैयारियाँ हो रही थीं।

मौनी अमावस्या की पवित्र तिथि में अमावस्या १८ जनवरी की रात के ९:२५ पर लगी थी तथा जो १९ जनवरी की सान्ध्यवेला सात बजे कर ५४ मिनट तक थी। योगायोग ऐसा रहा कि १८ जनवरी रात के साढ़े आठ बजे से जो वर्षा आरम्भ हुई वह १९ तारीख के सान्ध्य वेला ७ बजे तक लगातार होती रही।

इस वर्षा को सभी ने सराहा। सभी ने इसे ऊपर वाले का आशीर्वाद माना। १९ जनवरी की शोभायात्रा का वर्णन करते हुए बनर्जी महाशय ने लिखा है—

प्रातः साढ़े पाँच बजे कीर्तन करते हुए हमारे आश्रम की भक्त मण्डली निरञ्जनी अखाड़े पर शोभायात्रा में योगदान करने चल पड़ी। यह स्थान संगम से कुछ ही फर्लांग पर था।

माताजी को मोटर गाड़ी से लिवा ले जाया गया। माँ मोटर में ही बैठी रहीं जब तक दूसरे महामण्डलेश्वर गण नहीं आये। शोभायात्रा के प्रारम्भ में भगवान् कार्तिकेय थे, जो कि शक्ति के देवता हैं तथा निरञ्जनी अखाड़े के प्रमुख हैं। उनके बाद निरञ्जनी अखाड़े के महामण्डलेश्वर तथा साधुगण थे। इनके बाद हमारे आश्रम के विग्रह श्री नारायण शिला एवं पद्मनाम जी थे। उसके बाद श्री श्री माँ का रौप्यमण्डित सिंहासन था। यह एक जीप पर था हम लोग कीर्तन करते करते साथ जा रहे थे।

यह प्रायः सुबह साढ़े छह बजे का समय था जब यह शोभा यात्रा संगम की ओर बढ़ी । वर्षा हो रही थी फिसलन वाला मार्ग था । सैंकड़ों की संख्या में चप्पलें कीचड़ में फँसी थीं ।

आखिर हम संगम पर पहुँच ही गये । माताजी थोड़ी दूर चल कर गयीं फिर उन्होंने उनके पास उपस्थित भाग्यवानों पर जल छिड़का एवं तुरन्त ही लौट चलीं ।

माताजी के साथ की महिलाओं ने शीघ्र ही जल में गोता लगाया और गीले कपड़ों से ही माँ के साथ लौट चलीं । मैं थोड़ा रुक कर धीरे-धीरे स्नान कर कलकत्ते में रहने वाले अपने स्वजन सम्बन्धियों के लिये एक बड़े बर्तन में पानी भर कर लौटा । मैं जब अपने शिविर पहुँचा तब सुबह के पौने नौ बजे थे । माताजी आधा घन्टा पहले ही आयी थीं । कलकत्ते से आयी एक महिला निरञ्जनो अखाड़े में ही बेहोश हो गयी थीं । माताजी ने अपनी गाड़ी से उनको आश्रम शिविर में भिजवाया । माताजी ने अब शिविर में उपस्थित सभी जनों पर त्रिवेणी का पवित्र जल छिड़का । इसके उपरान्त विश्राम करने गयीं ।"

आज से प्रायः २३ वर्ष पूर्व श्री श्री माँ की उपस्थिति में हुए पूर्णकुम्भ की झलकियाँ हमें इस तीर्थराज के त्रिवेणी के तट पर बारम्बार श्री श्री माँ स्मृति प्रत्यक्ष कराती हैं । श्री श्री आनन्दमयी संघ के कार्यकर्ताओं ने आज भी यह परम्परा बरकरार रखने का प्रयास किया है । इसका हम आभार मानते हैं । यह परम्परा निरन्तर चलती रहे ऐसी हम माँ से प्रार्थना करते हैं ।



आश्रम-संवाद

कनखल

हिमालय के पाददेश पर स्थित ऋषियों की तपोभूमि हरिद्वार नगरी में चंचल तरंगिणी कल कलनादिनी स्रोतस्विनी देवनदी जाह्नवी के तट पर, पवित्र दक्षेश्वर तीर्थ के सम्मुख शुभ्र चन्द्रमा के सदृश विराजित है महातीर्थ आनन्दज्योतिपीठम् । यह आश्रयस्थल है साधु सन्तों महन्तों का, राजा रंक फकीरों का, तथा अगणित मातृभक्तों तथा दर्शनार्थियों का जहाँ वे निरन्तर आते हुए देखे जाते हैं यहाँ, एक ही उद्देश्य है वह है जीवन को उस चरम-परम के लक्ष्य की ओर अग्रसर करना तथा इस ज्वालामय संसार से किञ्चित् क्षण के लिए शान्ति प्राप्त करना ।

यहाँ वर्ष भर निरन्तर होते हुए उत्सवों की तालिका में अन्यतम प्रधान महोत्सव है संयम सप्ताह महाव्रत, क्योंकि यही जीवन को गंभीर, उन्नत एवं शान्त बनाने का मार्ग-प्रदर्शन करता है । प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी ४ नवम्बर से १० नवम्बर तक यह संयम सप्ताह महाव्रत अनुष्ठित हुआ ।

पूर्वदिन सायंकाल संयम सप्ताह का उद्घाटन समारोह कैलास पीठाधीश्वर १००८ स्वामी विद्यानन्दजी तथा दिव्य जीवन संघ के अध्यक्ष पूज्यपाद १००८ स्वामी चिदानन्दजी, निर्वाणी अखाड़े के प्राक्तन महन्त १००८ स्वामी श्यामसुन्दरदासजी की उपस्थिति में अनुष्ठित हुआ ।

इस सुअवसर पर—

अन्तर्ज्योति बहिर्ज्योति प्राज्ञज्योति परात्परा ।

ज्योतिर्ज्योति स्वयंज्योति आत्मज्योति नमोस्तुते ॥

इस मन्त्र के साथ 'ए ज्योति रूप जला माँ, तेरी ज्योति सबसे निराली है' स्वामी भजनानन्दजी के मन्द्र गंभीर स्वर से गाये गये इस भजन ने सबको भावविभोर कर दिया ।

इस वर्ष श्री श्री माँ आनन्दमयी संघ की स्वर्णजयन्ती थी । अतः ब्रह्मचारिणी चन्दनदी ने संघ की ओर से संघ के पचास वर्ष का सम्पूर्ण इतिहास तथा इसका उद्देश्य एवं इसके विभिन्न कार्य के ऊपर प्रकाश डालते हुए इसका विवरण सुनाया । इसके पश्चात् महात्माओं के आशीर्वचन द्वारा उद्घाटन समारोह समाप्त हुआ ।

संयम सप्ताह यथारिति प्रारंभ हुआ । दिव्य जीवन संघ के अध्यक्ष पूज्य १००८ स्वामी चिदानन्दजी का भावपूर्ण एवं जीवन के सूक्ष्म तत्वों का विश्लेषणात्मक अनमोल प्रवचन सबके आकर्षण का केन्द्र था । गीता मंदिर के महामण्डलेश्वर स्वामी मंगलानन्द गिरिजी का, तथा भारत माता मंदिर के संस्थापक स्वामी सत्यमित्रानन्दजी का सुमधुर प्रवचन भी श्रोताओं को आनन्द देने वाला था ।

सुधी प्रवर डॉ. गोविन्द गोपाल मुखोपाध्याय में मातृप्रसंग के अवसर पर अपने पिता शुक्ल वस्त्रधारी संन्यासी विद्वद्वरिष्ठ एवं दार्शनिक श्री प्राणगोपाल बाबू के बारे में बतलाते हुए कहा कि 'वे श्री श्री माँ के चरणों में कितने समर्पित थे, तथा भक्त शिरोमणि भीष्म पितामह के समान उन्हें भी कैसे महानिर्वाण की सन्धि में श्री श्री माँ का दर्शन, स्पर्श, एवं कृपा प्राप्त हुई थी इसके बारे में उन्होंने प्रांजल भाषा में वर्णन किया ।

प्रातःकाल गीता चण्डी पाठ के अनन्तर पूज्य स्वामी विद्यानन्दजी का बृहदारण्यक उपनिषद पर पाण्डित्यपूर्ण एवं सरल सहज प्रवचन होता तथा शाम को ४ बजे से सुरदगिरि बांग्लो के महामण्डलेश्वर १००८ स्वामी ब्रह्मानन्दजी का विष्णुपुराण पर सारगर्भित व्याख्या होती । रात को यथारिति मातृप्रसंग होता था ।

संयम सप्ताह के अन्तिम दिन रात को विद्यापीठ के छोटे-छोटे ब्रह्मचारियों ने विभिन्न कार्यक्रमों को प्रस्तुत किया । कन्यापीठ की कन्याओं की प्रार्थना पर श्री आनन्दमयी संघ के अध्यक्ष श्री गोविन्दनारायणजी ने एकदिन अपनी मधुर मातृस्मृति कथा सुनायी ।

इस वर्ष भी 'शुभ स्वर्ण जयन्ती संयम सप्ताह महाव्रत' नामक एक स्मारक ग्रन्थ का विमोचन हुआ । बाद में सब व्रतियों को पुस्तक दी गई । इस बार व्रतियों की संख्या अन्य वर्षों से अधिक थी ।

संयम सप्ताह के अन्तिम दिन अपने भाषण में पूज्य स्वामी विद्यानन्दजी ने इस संयम सप्ताह की विशेषता का उल्लेख करते हुए अपनी मनोभावना इस प्रकार व्यक्त की—

१० नवम्बर पुण्यतीर्थ हरिद्वार आज उत्तरांचल में समाविष्ट हुआ । इस संयम सप्ताह का प्रारंभ उत्तरप्रदेश में एवं इसकी समाप्ति उत्तरांचल में हुई ।

महानिशाध्यान, पूर्णाहुति एवं साधु भंडारा यथाविधि सुसम्पन्न हुआ अन्त में श्री शैलेश ब्रह्मचारी द्वारा रचित बंगभाषा में संयमगीति स्वामी भजनानन्दजी के कंठ से निःसृत हुई—

गाहि जय गाहि जय

दीर्घ अर्द्ध शताब्दी धरि ढोले माला अक्षय

गाहि मायेर जय गाहि महाव्रतेर जय

गाहि निर्भीक व्रतीर जय ।

विन्ध्याचल—

विन्ध्याचल स्थित श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम में शताब्दी का प्रथम नवरात्रि-पर्व बड़े उत्साह के साथ संपन्न हुआ । श्री नवव्रत ब्रह्मचारी जी महाराज का आगमन सितम्बर के मध्य में हुआ तथा १० अक्टूबर को उनका यहाँ से प्रस्थान हुआ । गत वर्ष का उनका प्रवास अल्पकालिक था । श्री नवव्रत ब्रह्मचारी जी भागवताचार्य डा. रासगौर घोषाल के शिष्य हैं । ब्रह्मचारी जी भक्तों के सत्संग संबन्धी आग्रह को नकारने में असमर्थ रहे । सप्ताह में दो दिन रविवार व बुधवार को भक्तों के बीच प्रवचन होता था । प्रवचन इतना सारगर्भित व सरस होता था कि वक्ता व श्रोता दोनों समय सीमा को अनजाने में अतिक्रमण कर जाते थे । सच ही कहा गया है कि प्रभु भी भक्तों की भक्ति के सम्मुख परतंत्र हैं ब्रह्मचारी जी महाराज भी कैसे अपवाद हो सकते हैं ।

श्रीप्रसाद अग्रवाल व श्री अजय मिश्र के आग्रह पर महाराज जी ने उनके घरों को पवित्र करते हुए अपनी अमृतमयी वाणी द्वारा उपस्थित श्रोताओं का मन मुग्ध कर दिया। महाराज जी के कार्यक्रमों को सुसपन्न कराने में ब्र. तपन जी का प्रयास प्रशंसनीय था।

आगरतला—

त्रिपुरा की सुंदर राजधानी आगरतला में श्री श्री माँ का रमणीय आश्रम है, जिसका प्राकृतिक सौन्दर्य अप्रतिम है। मध्य में स्वच्छ सरोवर, एक ओर श्री श्री माँ के आश्रमस्थ उमा महेश्वर के लाल रंग के देवालय का शिखर ठीक दूसरी ओर गौड़ीय मठ का उच्च शिखर बीच में भव्य राजमहल, राजमहल के सम्मुख अन्य एक मंदिर विराजित है। इस प्रकार चारों ओर मंदिरों से घिरा हुआ यह स्थल अतीव रमणीय है। आश्रम में स्थित उमा महेश्वर का लाल रंग का मंदिर एवं उसका सुबृहद प्रांगण तथा मातृ आवास में स्थित श्री श्री माँ के कर कमलों द्वारा स्थापित वीणावादिनी सरस्वती की सुन्दर मूर्ति सब दर्शनार्थियों का दर्शन स्थल है।

जन हितकारक अनेक सेवाकार्य तथा उत्सव आदि इस आश्रम में होते ही रहते हैं।

मातृभक्तों की सहायता से आश्रम में दो मंजिल का निर्माण कार्य प्रारंभ हो गया है। अभी तक तीन नये मकान आश्रम में निर्मित हो चुके हैं एक आश्रम का आफिसर दूसरा पुस्तकालय तीसरा होमिओपैथिक दातव्य चिकित्सालय के रूप में प्रयोग किया जायगा। ऐसा विचार किया गया है।

विगत १० फरवरी को श्री सरस्वती पूजा श्री सरस्वती मंदिर में हुई।

सन् १९८२ में आगरतला आश्रम में जब श्री श्री माँ का शुभांगमन हुआ था तब श्री श्री माँ के ख्याल से एवं उनके निर्देश से सरस्वती मूर्ति श्री श्री माँ के घर में प्रतिष्ठित हुई। उसी समय से श्री श्री माँ का घर ही सरस्वती मंदिर बन गया।

ब्रह्मचारी निर्वाणानन्दजी सरस्वती पूजा के समय उपस्थित थे। अतः उन्होंने स्वयं पूजा की। पूजा के पश्चात् भोग एवं प्रसाद वितरण किया।

विगत ४ मार्च को महाशिवरात्रि पूजा अनुष्ठित हुई। ब्रह्मचारी निर्वाणानन्दजी की उपस्थिति में सब भक्तों ने मिल कर सामूहिक रूप से पूजा की।

२१ एवं २२ मई को श्री श्री माँ की जन्मतिथि-पूजा धूमधाम से अनुष्ठित हुई। इस उपलक्ष में सत्संग एवं भक्तिसंगीत का आयोजन किया गया था। २२ मई को आश्रम के नाट मंदिर में उदयास्त नाम संकीर्तन हुआ। प्रायः ३००० भक्तों को प्रसाद वितरण किया गया एवं गरीबों को २०० साड़ियाँ बाँटी गईं।

गुरु पूर्णिमा की पुण्यतिथि में विगत १६ जुलाई को श्री श्री माँ की महापूजा समनुष्ठित हुई। उस दिन प्रायः ५०० भक्तों ने प्रसाद पाया।

४ अक्टूबर से १० अक्टूबर पर्यन्त दुर्गापूजा के उपलक्ष में आश्रम में देवी का कलश स्थापन करके घट की पूजा सविधि की गई। अष्टमी के दिन ६०० भक्तों ने प्रसाद पाया।

विगत २६ अक्टूबर को उमा महेश्वर के मंदिर में श्री माँ काली की पूजा हुई। उस दिन प्रायः २००० भक्तों ने प्रसाद ग्रहण किया।

आगरतलावासी भक्तों की एकान्त इच्छा से त्रिपुरानरेश द्वारा प्रदत्त भूमि पर एक नवनिर्मित भवन में 'माँ आनन्दमयी विद्यालय' नाम से एक संस्था का उद्घाटन हुआ। अभी उसमें प्रायः ५० छोटे-छोटे बालक बालिकायें शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। श्री श्री माँ की कृपा से यह संस्था एक विशाल शिक्षा प्रतिष्ठान का रूप धारण करेगी, ऐसी आशा की जा सकती है।

वाराणसी—

शारदीय नवरात्र पर वाराणसी आश्रम में भक्तों की ओर से घट स्थापना कराई जाती है एवं प्रतिदिन सप्तशती का पाठ होता है। इस वर्ष २८ अक्टूबर से कलश स्थापना कर स्मृति मन्दिर में सप्तशती का पाठ किया गया। सप्तमी, अष्टमी, नवमी को आनन्दज्योति मंदिर में श्री श्री माँ का षोडशोपचार पूजन हुआ। इस अवसर पर पूजन के समय सप्तशती पाठ, कीर्तन पुष्पाञ्जलि आदि हुए। प्रतिवर्ष की भाँति ब्रह्मचारिणी जया भट्टाचार्य ने श्री श्री माँ का पूजन किया। नवमी को नौ कुमारियों को सविधि भोजन कराया गया।

८ अक्टूबर को दशहरा था। इस दिन सायम् साढ़े पाँच बजे आश्रम की वरिष्ठ संन्यासिनी शान्तानन्दजी का माता आनन्दमयी अस्पताल में स्वर्गवास हो गया। आपके पार्थिव शरीर को ९ अक्टूबर प्रातः सोमवार एकादशी के दिन संन्यासियों की उपयुक्त क्रिया विधि से गंगा में प्रवाहित किया गया। इस समय निर्वाणी अखाड़े के संन्यासी जन, आश्रम के सेवक वृन्द एवं शान्तानन्दजी के पूर्वाश्रम के भ्रातृपुत्र आदि उपस्थित थे।

२३ नवम्बर को शान्तानन्दजी के लिये षोडश भण्डारे का आयोजन किया गया था। इस अवसर पर १६ महात्माओं का सविधि सत्कार कर भोजन कराया गया। संन्यासियों के लिये श्राद्धादि का विधान नहीं रहता क्योंकि वे संन्यास ग्रहण के साथ ही अपनी श्राद्ध क्रिया सम्पन्न कर लेते हैं। सोलहवें दिन सोलह महात्माओं को सोलह प्रकार की विविध वस्तुओं से सत्कार कर उन्हें भोजन कराया जाता है यह षोडश भण्डारा कहलाता है।

२६ अक्टूबर दीपावली की शुभ तिथि थी। इस वर्ष श्री अन्नपूर्णा मन्दिर एवं आस-पास का नवीनीकरण कार्य सम्पन्न हुआ था। सन् १९५० की दीपावली के दिन इस मन्दिर में पहली बार काली पूजा एवं अन्नकूट सम्पन्न हुआ था। दीपावली के दिन मध्यरात्रि में माँ काली का पूजन सम्पन्न हुआ। २८ ता. को प्रतिवर्ष की भाँति अन्नकूट महोत्सव का आयोजन किया गया। नवीनीकरण के कारण मन्दिर की चमक कुछ और ही दीख रही थी। धूप दीपों से सुगन्धित गर्भ गृह में सवा मन अन्न एवं उसी के परिमाण में विविध व्यञ्जनादि सुसज्जित थे। प्रायः १५६ प्रकार के पकवानों का भोग दिये जाने की विधि है। कहना न होगा यह सभी व्यञ्जनादि देशी घी से ही बनते हैं और बनाने वाली ब्रह्मचारिणी ब्राह्मण कन्यायें ही होती हैं। आज पचास वर्षों तक यह नियम एक जैसा ही चला आ रहा है यह श्री श्री माँ की ही अहैतुकी कृपा का परिचायक है।

श्रद्धाञ्जलि

संन्यासिनी शान्तानन्द जी

श्री श्री माँ के आश्रम में साधु ब्रह्मचारी संन्यासिनी ब्रह्मचारिणियों की एक अनोखी परम्परा है । सभी का आश्रयस्थल माँ के श्री चरण कमल हैं । आज कोई अशीति के पार चले गये हैं अर्थात् अस्सी वर्ष की उम्र से अधिक हो गये हैं । कोई अस्सी को पहुँचने वाले हैं तो कोई सत्तर को छू चुके हैं । इन सबका ध्येय एक है "माँ के पास जाना है" मन्त्र एक है "हम माँ के हैं " ।

श्री श्री माँ की इन सन्तानों का परिचय पाना अथवा जीवन गाथा सुन पाना नामुमकिन है । यह कब माँ के पास आये और आज आयु की इस सीमा तक कैसे पहुँचे शायद यह स्वयं ही न बता पायेंगे कोई पूछे भी आप कब माँ के पास आये थे ? तो सोच कर कहेंगे १५-१६ वर्ष की उम्र में या कोई कहेगा १९-२० की उम्र में । कैसे आये इस प्रश्न का जबाब प्रायः सभी का एक ही होता है - माता पिता ने सुना कोई माता जी आयी हैं उनका दर्शन करना है साथ हमको भी ले गयीं । फिर प्रश्न उठेगा - आप रह कैसे गये या गयीं ? जबाब एक ही है - "घर जाकर मन ही नहीं लगता था कब माँ के पास जायें । यही एक चिन्ता थी । "इसी एक आकर्षण ने कितने ही किशोर-किशोरियों को अपनी ओर खींच लिया और बन गया श्री माँ आनन्दमयी का विराट् दरबार ।

तीस का दशक था पूज्य भाई जी व बाबा भोलानाथ जी की इह लीला समाप्त हो चुकी थी । महिला आश्रम के नाम से श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ की और श्री श्री माँ आनन्दमयी विद्यापीठ की नींव पड़ चुकी थी । समस्त कार्यभार गुरुप्रिया दीदी पर था । कुछ ही समय पूर्व गंगोत्री यात्रा के समय स्वामीपरमानन्द जी श्री श्री माँ की सेवा में आये । स्वामीजी का शरीर पूर्व बंगाल का था । स्वामीजी के गाँव में "ब्रह्मज्ञ माँ " के नाम से एक 'साधिका' थीं जिनके संस्पर्श में काफी नव युवक आ चुके थे । पूज्य स्वामी जी के परिचित सम्बन्धी जन भी उक्त माता की शिष्यपरम्परा में आते थे तथा श्री रामकृष्ण मिशन से भी सम्बन्धित थे । पूज्य स्वामी परमानन्द जी के आने के उपरान्त ब्रह्मज्ञ माँ के शिष्य देओघर विद्यापीठ में कार्यरत स्वामी शाश्वतानन्द जी भी माँ के सान्निध्य में आये । चूँकि कन्यापीठ एवं विद्यापीठ की नींव पड़ चुकी थी आवश्यकता थी एक अनुभवी अभिभावक की, साथ ही इस परम्परा में रहने के इच्छुक बालक बालिकाओं की । अतः स्वामी शाश्वतानन्दजी की उपस्थिति दीदी गुरुप्रिया को अनुकूल प्रतीत हुई । दीदी ने स्वामी जी से कहा - देखिये इस परिवेश में रहने वाले बालक बालिका कहीं मिलें । स्वामी जी का तुरन्त जवाब था " मैं देखता हूँ" । स्वामी शाश्वतानन्द जी पूर्व बंगाल के कुमिल्ला जिले के अपने गाँव वितारा में आये । बचपन से ही साधु महात्माओं के सत्संग से जुड़े चक्रवर्ती इस ब्राह्मण परिवार के बालक बालिका भी कुछ-कुछ इस रंग में रंगे थे । स्वामी जी ने कन्यापीठ विद्यापीठ का प्रसंग छेड़ा सुनते ही कुछ बच्चे कहने लगे "चाचाजी हम जायेंगे" कुछ ने कहा "मामाजी हमें भी ले चलें ।" स्वामी जी

का कार्य सिद्ध हो गया। वह तो यही चाहते थे। किसी से जबरन चलने को नहीं कहना पड़ा। इस प्रकार शाश्वतानन्द स्वामी जी की बड़ी बहन के बच्चों में बिन्दु विभुदा एवं भाई के बच्चों में गंगा दी और सदानन्द चलने को तैयार हो गये।

हमारी श्रद्धाञ्जलि की मुखपात्र हैं बिन्दु दी संन्यासिनी शान्तानन्द जी। जिनका अभी हाल में ही वाराणसी स्थित माता आनन्दमयी अस्पताल में दशहरे के दिन ८ अक्टूबर को देहावसान हुआ।

१४-१५ वर्ष की किशोरावस्था में पूर्व बंगाल की यह सरल भोली बालिका माँ के चरणों में उपस्थित हुई। श्री श्री माँ के ममतामय सान्निध्य में आकर घर की ममता पिछड़ गयी। दीदी गुरुप्रिया ने स्नेह पूर्ण हृदय से इन बालिकाओं को ग्रहण किया। गंगा दी की उम्र आठ नौ वर्ष की थी। बिन्दु किशोरी थी। अत्यन्त छरहरी देह के कारण माता पिता प्यार से बिन्दु पुकारते थे। यहाँ भी यह नाम चल पड़ा। बड़ों के लिये बिन्दु, छोटों की स्नेहमयी बिन्दु दीदी। अभी हाल में ही बिन्दुदी की अस्वस्थता का समाचार पाकर कन्यापीठ की एक अत्यन्त प्राचीन कन्या जिनकी उम्र साठ को पार कर चुकी है, पत्र लिखा था जिसमें उन्होंने यह उल्लेख किया था। "हमें बिन्दु दी के स्नेह और प्यार भरी बातों की अभी भी याद आती है। जिनके स्नेहमय अंक में हमारा बचपन बीता, आज उनकी अस्वस्थता में उनके पास जाकर उनकी सेवा को मन चाहता है। पर शरीर से स्वयं अस्वस्थ होने के कारण मैं पहुँच नहीं पा रही हूँ। उनके स्वास्थ्य की शुभ कामना करते हुए मैं अपना प्रणाम उन्हें निवेदन करती हूँ।" यह पत्र पहुँचने के पूर्व ही स्नेहमयी बिन्दु दी माँ के चरणों का चिरन्तन आश्रय ले चुकी थीं।

आश्रम में आकर दीदी गुरुप्रिया के साथ श्री श्री माँ के दिव्य शरीर की सेवा भोग रन्धन आदि कार्यों में हाथ बैटाया। बिन्दु दी कहा करती थीं, माँ हमारे साथ मित्र के समान रहती थीं। हम कभी श्री श्री माँ के मखमल के समान कोमल बालों को सहलाते तो कभी श्री श्री माँ के श्री चरणों में तेल लगाते। दीदी दिन भर परिश्रम करती थीं दीदी को कष्ट न हो इसका हमलोग पूरा ध्यान रखते थे। दीदी के साथ मैं तथा रेणू दी बड़े-बड़े भण्डारे का भोजन बनाते थे। माँ के साथ विभिन्न स्थानों पर रहना बड़ा ही अच्छा लगता था। ढूँगा, देहरादून, रायपुर, अलमोड़ा सोलन आदि स्थानों में माँ के साथ किस तरह दिन बीते इसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता।"

दिन बीतते गये किशोरी बालिका युवावस्था के कगार पर पहुँच चुकी। जीवन धारा एक सी रही श्री श्री माँ की सेवा दीदी के साथ आश्रम सेवा में हाथ बैटाना, चालीस के दशक के उत्तरार्द्ध में दीदी माँ से अलमोड़े में सबके साथ आपकी भी दीक्षा हुई।

सन् १९४५ में वाराणसी में कन्यापीठ स्थायी रूप से स्थापित हुआ। बिन्दु दी की सेवा में कमी नहीं आयी। सन् १९४७ में अखण्ड सावित्री महायज्ञ प्रारम्भ हुआ। अब तो किसी को अपनी ओर ध्यान देने का अवकाश ही नहीं रहा। तीन वर्ष कहाँ से बीते पता भी न लगा। श्री श्री माँ ही जिनका जीवनाधार हैं उनको अवस्थाओं से क्या प्रयोजन वह तो समर्पित हो ही चुकी हैं।

परन्तु कर्ममय शरीर कुछ भोगने भी आता है। एक दिन बिन्दुदी ने महसूस किया कि वह अपने को थोड़ा कमजोर महसूस कर रही हैं। माँ का पूरा ख्याल रहता था सभी के स्वास्थ्य के

प्रति । चिकित्सकों से परामर्श लिया गया । दीर्घ कालीन विश्राम की सलाह दी गयी । जहाँ वे सेवा करती आ रही हैं, वहीं पर आज खुद सेवा लेंगी । इस बात को उनकी अन्तरात्मा ने नहीं सराहा । उनका भरा पूरा परिवार था । बंगाल के विभक्त हो जाने पर कलकत्ता स्थित "दमदम" नामक स्थान में आपके परिवार ने मकान बनवा लिया था । आपने माता-पिता के पास रहना ही उचित समझा । श्री श्री माँ के ही ख्याल से आप अपने स्वजनों में रहने लगीं ।

आपका रहन-सहन परिधा ब्रह्मचारिणी के अनुकूल था । घर तो सत्संग प्रेमी था ही । आप निकटस्थ रामकृष्ण मिशन एवं शारदा पीठ में नियमित आना जाना करती थीं । साधु जनोचित स्वभाव के कारण शारदापीठ की वरिष्ठ संन्यासिनीगण प्रव्राजिका मुक्तिप्राणा, प्र-आत्मप्राणा, प्रश्रद्धाप्राणा आदि के साथ आपका भगिनी समान स्नेह हो गया ।

माता-पिता के देहावसान के बाद आप दार्जिलिंग में कार्यरत अपने भाई के पास भी काफी दिनों तक रहीं । इन दिनों श्री श्री माँ आपके भाई के आह्वान पर वहाँ पधारी थीं ।

बिन्दु दी का मुख्य स्वभाव था दूसरों की सेवा । आश्रमवासी हों या आगन्तुक कोई भी हो यदि वह किसी भी प्रकार के असमय संकट में पड़ जाय तो बिन्दु दी की उपस्थिति वह अपने पास हर समय पायेगा यह निश्चित था ।

अपने मामा स्वामी शाश्वतानन्द जी के अस्वस्थ होने पर श्री श्री माँ के निर्देश से आपने वाराणसी आश्रम में रहकर लगातार सात वर्षों तक स्वामीजी की एकनिष्ठ सेवा की थी । स्वामी जी के ब्रह्मलीन होने के उपरान्त वे माँ की उपस्थिति में ही कनखल आकर रहने लगीं ।

बिन्दु दी का मुख्य काम था चुपचाप सेवा करना । उत्सवों के धूम धाम को छोड़कर रन्धन शाला आदि में कोई न जाना चाहे पर बिन्दुदी अवश्य उपस्थित रहेंगी । आज तक उन्हें कभी किसी ने किसी भी चीज के लिये शायद ही माँग करते देखा हो । चाहे वह उनकी रहने की असुविधा हो या कुछ और की । जैसा मिल गया वही ठीक ।

सत्संग उनका स्वभाव था । कुछ भी क्यों न हो वे अपना सत्संग नहीं छोड़ती थीं । चाहे प्रवचन आदि हो अथवा वे खाली समय में सद्ग्रन्थ पाठ करती थीं । साधु-संन्यासियों पर आपकी अपरिसीम निष्ठा देखी जाती थी । अतः माँ के आश्रम में आने वाले प्रायः सभी सन्तजन आपसे परिचित रहते थे ।

आश्रम में रहते हुए तत्कालीन कन्यापीठ की व्यवस्थापिका श्री गंगादेवी पञ्चतीर्थ से आपकी अत्यन्त घनिष्ठता थी । आप कुछ समय तक गंगा दी के वाराणसी स्थित अन्नदा आश्रम में भी रही थीं । श्रीमती छवि एवं मणि चौधुरी से आपकी अन्तरंग घनिष्ठता थी ।

श्री श्री माँ के अव्यक्त धाम पधारने के उपरान्त आपने निर्वाणी अखाड़ा के महन्त श्री १०८ गिरिधर नारायण पुरी जी से संन्यास दीक्षा ग्रहण की थी । नाम हुआ था शान्तानन्द । आजकल आप मुख्यतया कनखल में ही रहा करती थीं । शरीर के स्वस्थ न रहने के कारण शीतकाल में आप हरिद्वार रहना उचित नहीं समझती थीं । अतः देओधर स्थित "ब्रह्मज्ञ माँ" के आश्रम में कभी-कभी विश्रामार्थ चली जाती थीं । कनखल में रहते हुए आपका आजकल का मुख्य काम था

श्री श्री माँ की समाधि वेदी को फूलों से सजाना । अति प्रत्यूष में शय्यात्याग के उपरान्त आप मन्दिर में पहुँच जाती थीं और बड़ी ही निष्ठा से इस कलापूर्ण कार्य को करती थीं ।

इधर एक वर्ष से आपका शरीर स्वस्थ नहीं था । आप प्रायः नौ महीने तक श्री वृन्दावन स्थित माँ के आश्रम में रहीं तदुपरान्त कनखल होकर गुरुपूर्णिमा के समय आप वाराणसी आयीं ।

वाराणसी में आप का शरीर बिगड़ता ही गया । चिकित्सकों ने पूरी चिकित्सा की । आपके भ्रातृपुत्र व अन्यान्य स्वजनों ने भी खुले हाथों आपकी देख भाल में सहयोग दिया । आप सितम्बर की १० तारीख को अस्पताल में भर्ती हुई थीं । अस्पताल में रहते हुए कठिन व्याधि की पीड़ा को सहते हुए भी आपके मुख से किसी प्रकार के पीड़ा सूचक शब्द नहीं निकले थे । अपनी अन्तिम यात्रा के १०-१५ दिन पूर्व भी वे सत्संग की ही चर्चा करती थीं । नवरात्र के दूसरे तीसरे दिन से आपकी वाणी ने धीरे धीरे विदा ली । दशहरे का दिन था । शाम का समय था । श्री श्री माँ के पुरातनभक्त स्व. श्री हरीशमुखजी के यहाँ दुर्गा पूजा हुई थी । अपने नियम के अनुसार वे श्री श्री माँ के आश्रम के सामने प्रतिमा लाये एवं विसर्जन हेतु घाट पर ले गये । पाँच बज चुके थे गोधूलि वेल उपस्थित होने वाली थी । श्री दुर्गा देवी की प्रतिमा विसर्जित हुई ।

इधर अस्पताल से सूचना प्राप्त हुई साढ़े पाँच बजे एक हिचकी के साथ ही संन्यासिनी शान्तानन्द सदा के लिये शान्त हो गयीं । सुदक्ष परिचारिका ने कुछ क्षण पूर्व ही उनको दूध का घूँट पिलाया था । गंगा पानी पिलाया । सावित्री यज्ञ की महाभस्म उनके भाल पर संन्यास के नियमानुसार रोज ही लगायी जाती थी । श्रीमद्भगवद्गीता की पुस्तक उनके सिरहाने थी । श्री श्री माँ की मधुर मुस्कान युक्त चित्र सामने टंगा था ।

माता आनन्दमयी अस्पताल के दो मंजिल के दो नम्बर के केबिन में शान्तानन्द का शान्त शरीर पड़ा हुआ था । मुख पर विश्रान्ति की आभा थी । अस्वस्थता या पीड़ा के चिह्न मात्र भी न थे ।

शान्त जीवन शान्ति को ही अपनाने वाली संन्यासिनी शान्तानन्द ने शान्तिमय परिवेश में चिरशान्ति ली । बिन्दु का क्षणभंगुर जीवनबिन्दु श्री श्री माँ के अहैतुकी कृपा-सिन्धु में विलीन हो गया ।

श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रमवासिनियों का एक ऐसा कोना खाली हो गया जो कदापि भर नहीं सकता । आज इन्हीं शब्दों के साथ उनकी अमर आत्मा की चिर शान्ति की कामना करते हुए श्रद्धा सुमन अर्पण करते हैं ।

जय माँ ।



शोक-संवाद

श्री विष्णुराम पांड्या—

विगत सन् २००० को पहली अप्रैल को श्री श्री माँ के अति पुरातन भक्त श्री विष्णुराम पांडेय इलाहाबाद के अपने आवास भवन में श्री श्री माँ के चरणों का चिन्तन करते हुए श्री श्री माँ के दिव्य चरणों में लीन हुए ।

सन् १९४४ से आप श्री श्री माँ के साथ-साथ अनेक जगहों में गये । श्री श्री माँ के निर्देश से ही आपने काशी में श्री श्री माँ के अस्पताल में अनेक वर्षों तक सेवा की । काशी आश्रम में अन्नपूर्णा मंदिर के बरामदे में सुदीर्घ समय तक बैठकर जप करना आपका प्रतिदिन का काम था । अन्नपूर्णाजी की प्रसादी माला धारण कर आप बहुत आनन्दित होते थे ।

अतः आपके अंतिम समय में कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियाँ अन्नपूर्णा की माला लेकर वहाँ इलाहाबाद में अकस्मात् पहुँच गईं और आपको अन्तिम समय में भी माला प्राप्त हो गई । वहाँ ब्रह्मचारिणियों ने बहुत देर तक कीर्तन किया ।

श्री मानसविहारी मुखोपाध्याय :—

इलाहाबाद के श्री श्री माँ के अति पुरातन भक्त डिस्ट्रिक्ट जज स्व. नीरजनाथ मुखोपाध्याय के ज्येष्ठ पुत्र श्री मानसविहारी मुखोपाध्याय विगत १५ अक्टूबर को श्री श्री मातृचरणों में विलीन हुए ।

आपकी दो बहनें आदरणीया श्रीमती रेणुका मुखोपाध्याय तथा डॉ. वीथिका मुखोपाध्याय मातृभक्तों में अति सुपरिचित तथा समादृत हैं । इस परिवार के सभी सदस्यगण माँ के विशेष कृपा-पात्र थे ।

आप अतिशय गंभीर प्रकृति के स्वल्पभाषी कर्तव्यपरायण व्यक्ति थे । आप पुलिस विभाग में ऊँचे पद पर आसीन थे ।

अपने कर्मक्षेत्र में आपकी प्रतिष्ठा थी । उत्तर प्रदेश में पुलिस विभाग के आप शिरोमणि कहलाते थे । अवकाश प्राप्त करने के बाद भी इतने वर्षों के उपरान्त आपके अन्तिम समय में पुलिस विभाग के उच्चपदस्थ कर्मचारियों ने आपको राजकीय सम्मान के साथ सैलुट करके अपने आप कंधा देकर आपकी अंतिम क्रिया सुसंपन्न की । यह सम्मान आपके गौरवशाली व्यक्तित्व तथा कर्ममय जीवन की सुदक्षता का ही निदर्शन है ।

श्री श्री माँ के प्रति आपकी आन्तरिक भक्ति थी । बाहर दिखावा नहीं था । आपकी सहधर्मिणी श्रीमती प्रतिमा मुखोपाध्याय एवं एकमात्र कन्या भी श्री श्री माँ की विशेष कृपापात्री थीं ।

हम उन विदेही आत्मा की शान्ति की प्रार्थना करते हुए परिवारवर्गों की सान्त्वना-कामना श्री श्री माँ की दिव्य चरणों में सतत करते हैं ।

श्रीमती वीरबाला मिश्र :-

श्री श्री माँ की अति प्राचीन भक्त देहरादून वासी श्रीमती भक्तिमती वीरबाला मिश्र का विगत २६ अक्टूबर को दीपावली की पुण्यतिथि में दिल्ली में हृदयरोग से आकस्मिक निधन हो गया है ।

आपके आकस्मिक निधन से सब स्तब्ध रह गये हैं । आप अतिशय भक्तिमती थीं । श्री श्री माँ के चरणों में आपकी दृढ़ निष्ठा थी । आप कला निपुण एवं सजावट आदि कार्यों में कुशल थीं ।

आपको श्री श्री माँ के चरणों में चिरशान्ति प्राप्त हो तथा परिवारजनों को सान्त्वना प्राप्त हो यही श्री श्री माँ के चरणों में प्रार्थना है ।



विशेष सूचना

सभी व्याहकों को सूचित किया जा रहा है कि जिन्होंने अभी तक सन् २००१ के लिए चन्दा नहीं भेजा है वे अविलम्ब वार्षिक चन्दा ६०/- रु. मनिआर्डर या बैंक ड्राफ्ट द्वारा निम्नलिखित पते पर भेजने का कष्ट करें -

Shree Shree Anandamayee Sangha
—Publication A/c
Bhadaini, Varanasi 221001

व्यापारी मित्र

आयकर, बिक्रीकर और व्यापार संबंधी कायदेकानू के बारे में पूर्ण जानकारी देनेवाला केवल एकमात्र मराठी मासिक पत्रिका, सुवर्ण महोत्सव वर्ष में प्रकाशित !

" व्यापारी मित्र " की स्थापना १९५०

वार्षिक शुल्क केवल रु. १२०

पता :- "व्यापारी मित्र पब्लिकेशन्स प्रा. लि.

नरपतगीर चौक, साई निकेतन,

३९३ नया मंगलवार पेठ, पूना ४११ ०११.

फोन : [०२०] ६३७२००, ६३१३५५, ३३१०९४

फैक्स नं. : [०२०] ६३७३६८

With Best Compliments from

At the lotus feet of Shree Shree Ma

B.K. Jhala & Associates

"NIRMAL" Commercial Complex

*158, M.G. Road,
Pune.*

With Best Compliments From :

**"Endeavour to go through life
leaving your burdens in His
hands."**

—Ma Anandamayee

UNIQUE ELECTRONICS (Regd.)

16, Central Market,
Lajpat Nagar
New Delhi—110024
Phone : 6834559, 6836475

With best compliments from :

*"The pilgrimage to the goal
of human existence is the
only path to Supreme happiness."*

—Sri Ma

M/s. Sugam Parivahan Ltd.
43, Lekh Ram Road
Daryaganj, New Delhi-110002
Ph. 3257581/3268459 Fax : 3267462

With best compliments from :

**"Abandaon yourself to God
in all matters without exception."**

—Sri Ma

M/s Anandamayee Forgings (Pvt) Ltd.
A-5, Site-IV, Industrial Area
Sahibabad, Ghaziabad-201010
Ph : 770064 - Fax : 770427

MA ANANDMAYEE MEMORIAL SCHOOL
RAIWALA—249205

District : Dehradun

An English Medium Residential School for Boys only.
Affiliated to Council for the
Indian School Certificate Examination : New Delhi.

A complex for the Children from Standard 1 to XII.

The School is situated at a picturesque site. Enviably hostel facilities in a calm pleasant and pollution free *Vanasthali* setting 2 km away from Haridwar-Rishikesh Road. It is designated to impart integrated education to children, drawing the best from Indian culture and traditions of the past, instructing and helping them to acquire knowledge in Humanities, Arts, Science and co-curricular activities.

The campus was once Shree Shree Ma Anandamayee's Agnatavas (Retreat) and now a Memorial School.

Registration open for the academic session 1998-99 for the Classes 1 to XII.

Admission forms, Prospectus and other information can be had from the office on payment of Rs. 100/-.
Apply to Principal.

PHONE : 0135—484232/484292

FAX : 0133—426001

With best compliments from

RAM PANJWANI & COMPANY

**Timber Importers & Financiers
1—Birla Road
Harwar—249401**

 : 427266, 424272, Fax : 0133—426001

Suppliers of :
Best Quality Himalayan Pine Timbers

Branches :

**Jammu (J & K)
Parwanoo (H.P.)**

**Yamuna Nagar (Haryana)
Gandhi Dham (Gujrat)**



*** Branch Ashrams ***

15. NEW DELHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalkaji, New Delhi-110019 (Tel : 011-6826813)
16. PUNE : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Ganesh Khind Road, Pune-411007, (Tel : 020-5537835)
17. PURI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Swargadwar, Puri-752001, Orissa.
18. RAJGIR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Rajgir, Nalanda-803116, Bihar (Tel : 06112-55362)
19. RANCHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Main Road,
P.O. Ranchi-834001, Bihar (Tel : 0651-312082)
20. TARAPEETH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Chandipur-Tarapeeth, Birbhum-731233, W.B.
21. UTTARKASHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kali Mandir, P.O. Uttarkashi-249193,
22. VARANASI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhadaini, Varanasi-221001, U.P.
(Tel : 0542-310054+311794)
23. VINDHYACHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Ashtabhuj Hill,
P.O. Vindhyachal, Mirzapur-231307, (Tel : 05442-42343)
24. VRINDAVAN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Vrindavan, Mathura-281121 U.P. (Tel: 0565-442024)

IN BANGLADESH :

1. DHAKA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
14, Siddheshwari Lane, Dhaka-17 (Tel : 405266)
2. KHEORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Kheora, Via-Kasba, Brahmanbaria.



REGISTERED WITH THE REGISTRAR OF NEWSPAPERS
FOR INDIA AS NO. 65432/97



माँ आनन्दमयी

अ मृत वा र्ता



SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

* Branch Ashrams *

1. AGARPARA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P. O. Kamarhati ,
Calcutta-700058 (Tel : 033-5531208)
2. AGARTALA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Palace Compound,
P.O. Agartala-799001. West Tripura (Tel : 0381-208618)
3. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Patal Devi,
P.O. Almora-263602, (Tel : 05962-33120)
4. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Dhaul-China,
Almora-263881, (Tel : 05962-62013)
5. BHIMPURA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Bhimpura,
P.O. Chandod, Baroda-391105, (Tel : 02663-833208)
6. BHOPAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P. O. Bairagarh,
Bhopal-462030, M.P. (Tel : 0755-521227)
7. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Kishenpur,
P.O. Rajpur, Dehradun-248009 (Phone : 0135-734271)
8. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalyanvan, 176, Rajpur Road, P.O. Rajpur,
Dehradun-248009, (Phone : 0135-734471)
9. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram.
P.O. Raipur Ordnance Factory, Dehradun-248010
10. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
47/A Jakhan, P.O. Rajpur, Dehradun,
11. JAMSHEDPUR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Near Bhatia Park, Kadma, Jamshedpur-831005, Bihar
12. KANKHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Kankhal,
Hardwar-249408, (Tel : 0133-416575)
13. KEDARNATH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Near Himlok,
P.O. Kedarnath, Chamoli-246445,
14. NAIMISHARANYA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Puran Mandir,
P.O. Naimisharanya, Sitapur-261402, U.P.

माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता

श्रीश्री माँ आनन्दमयी के दिव्यजीवन
तथा
दिव्यवाणी की वाहिका त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष-५

अप्रैल, २००१

सं.-२

- सम्पादक मण्डली
- ❖ डा. श्रीनारायण मिश्र
 - ❖ डा. राममोहन पाण्डे
 - ❖ डा. वीथिका मुखर्जी
 - ❖ डा. गायत्री शर्मा
 - ❖ ब्रह्मचारिणी गुणीता



कार्यकारी सम्पादक
श्री पानु ब्रह्मचारी



वार्षिक चंदा (डाकव्यय सहित)

भारत में - ६० रुपये

विदेशों में - १२ डॉलर/या ४५० रुपये

एक प्रति - २०/- रुपये

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा—हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है। वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है। इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख, किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलियों का भी पत्रिका में स्वागत है।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकलित कर सकते हैं जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये। लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें। मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है। सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C". नाम पर भेजें।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"

माता आनन्दमयी आश्रम

भदौनी, वाराणसी - २२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :-

सम्पूर्ण पृष्ठ - २०००/- पूरे वर्ष के लिये

आधा पृष्ठ - १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदौनी, वाराणसी-२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमछा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित।
सम्पादक—श्री पानु ब्रह्मचारी।

विषय-सूची

१.	मातृ-वाणी		1
२.	माँ हमारे साथ रहना —सरोजिनी सक्सेना		3
३.	मातानन्दमयी वन्दे —ब्र. गीता बनर्जी		4
४.	श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग —श्री अमूल्य कुमार दत्तगुप्त		5
५.	माँ की मधुर लीला —स्वामी नारायणानन्द तीर्थ		10
६.	आनन्दमयी स्मृति —चित्रा घोष		13
७.	माँ का नाम जप —श्री मोहन लाल आर्य		18
८.	वाङ्माधुरी		21
९.	महाराष्ट्र के संत —श्री अशोक कुलकर्णी		23
१०.	स्वामी विवेकानन्द की दृष्टि में बुद्ध —डा. प्रेम नारायण सोमानी		28
११.	महाकुम्भ की वार्ता		32
१२.	आश्रम संवाद		40
१३.	श्रद्धांजलि		45

प्रकाशन सूची

श्री श्री आनन्दमयी संघ द्वारा प्रकाशित श्री श्री माँ से सम्बन्धित कुछ अमूल्य प्रकाशन संघ के प्रायः सभी शाखा आश्रमों में विक्रय के लिए उपलब्ध हैं ।

1. PICTORIAL BIOGRAPHY OF MA ANANDAMAYEE—

श्री श्री माँ की सम्पूर्ण जीवन गाथा शब्दों तथा चित्रों में अंकित, यह एक निराला ग्रन्थ है । उत्तम कागज पर छपा एवं बहुसंख्यक आर्ट 'प्लेट्स' से युक्त । सजिल्द, मूल्य, ४५०/-

2. आनन्दज्योति (शताब्दी स्मारिका)

यह एक उच्च कोटि का संस्करण है, जिसमें विभिन्न भाषाओं—संस्कृत, हिन्दी तथा अंग्रेजी में श्री श्री माँ की पवित्र जीवनानुक्रमिका (१८९६ से १९९२), १०० अमूल्य वाणियों एवं श्री श्री माँ के विभिन्न आश्रम एवं संस्थाओं का इतिहास, साथ ही स्वनामधन्य विद्वानों के लेख, विशेष संदेश एवं श्रद्धाञ्जलि सहित श्री श्री माँ के कतिपय मूल्यवान् चित्रों का संकलन है । अति उत्तम कागज पर छपा है । पेपर बैक, मूल्य रु. १००/-

3. माँ आनन्दमयी दिव्यालोक वार्ता—

हिन्दी भाषा में ब्र. गुणीता द्वारा लिखित माँ की जीवन-कथा का संक्षिप्त चित्रण तथा शतवाणी । पेपर बैक, मूल्य १०/-

4. सद्वाणी—

हिन्दी में अनूदित श्री श्री माँ की मूल्यवान् वाणियों का संग्रह । श्री ज्योतिषचन्द्र राय द्वारा संकलित । पेपर बैक, मूल्य रु. १०/-

5. माँ आनन्दमयी—

डॉ. पन्नालाल, आई. सी. एस. (रिटायर्ड) द्वारा हिन्दी में लिखित माँ का अपूर्व जीवन चरित । पेपर बैक, मूल्य रु. २०/-

6. IN YOUR HEART IS MY ABODE—

डॉ. बीथिका मुखर्जी द्वारा अंग्रेजी में लिखित श्री श्री माँ का संक्षिप्त जीवन चित्र । पेपर बैक, मूल्य २०/-

7. MATRI VANI—

श्री श्री माँ की अमूल्य वाणियों का संग्रह । पेपर बैक, मूल्य रु. १५/-

8. WORDS OF ANANDAMAYEE MA—

श्री श्री माँ की अमूल्य वाणियों का संग्रह । आत्मानन्द (मिस ब्लैका इलाम) द्वारा संकलित एवं अंग्रेजी में अनूदित । पेपर बैक, मूल्य रु. ३०/-

9. MOTHER AS SEEN BY HER DEVOTEES—

श्री श्री माँ के सम्बन्ध में स्वनामधन्य विद्वानों तथा माँ के विशिष्ट भक्तों द्वारा लिखित मूल्यवान् निबन्धों का संग्रह । पेपर बैक, मूल्य रु. ३०/-



—Courtesy : GOYAL STUDIO, DEHRADUN

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

मातृवाणी

हरिनाम जो दुख सुख हरण करने वाला है, वही नाम मन्त्र है । जिसको जो कुछ अच्छा लगे । भगवान् के नाम से भी काम चलता है । सब के लिये मन्त्र एक नहीं होता है । तुमको जो प्रिय लगे करो । हरि माने हरि कथा हरिनाम ।

*

*

*

बीज जब होता है । मिट्टी में छिपाकर रखा जाता है । तुम जमीन खोद कर रखो, किसी को पता नहीं देना, तुम्हारे जमीन में है । अन्दर रखा है । (अपने मन्त्र को गुप्त रखना चाहिये इसी का निर्देश है)

*

*

*

सेवा उसको कहा जाता है जो परमार्थ के रास्ते में ले जाय, सेवक वही है जो परमार्थ में ले जाय । वही असली बन्धु, असली सेवा, निष्काम सेवा ।

*

*

*

श्रेष्ठ सेवा भगवान् के पथ में जाने के लिये जो मदद होती है वही असली सेवा । जो करे शिव मानकर सेवा करो यत्र जीव तत्र शिव, यत्र नारी तत्र गौरी ।

*

*

*

जन सेवा के हिसाब से देखें तो अपने में अपना होगा । भगवद् बुद्धि से सेवा करो । किसी को नमस्कार हम करते हैं । कुत्ता, बिल्ली को भी नमस्कार करो । भगवद् बुद्धि से सेवा करो भगवद् बुद्धि से ।

*

*

*

उपदेश तो हुआ, कितना पालन हुआ । सुना तो सिमरण कितना हुआ । सुनना-अमल करना । सुनने से भी फायदा होता है । बेकार नहीं जाता ।

*

*

*

भगवान् को अर्पण किया । भगवान् की चीज भगवान् को दे रहे हो । देने वाला मैं कौन हूँ । समान तो भगवान् का दिया हुआ है । धन रखने वाला कौन है ? कोई मालिक है, उसका रुपया तुम्हारे पास है । तुम्हारा देने का अधिकार है ? जो मालिक ने तुम्हारे पास रखा है, वह तुम कैसे खाली कर सकते हो ।

*

*

*

जन माने जनार्दन । जनार्दन माने स्वयं भगवान् । दे सकते हो - भगवद् बुद्धि से । मैं देने बैठा-तुम दानी कौन है ? हे भगवान् तुम ही तुम्हारा है - हम देने वाले कौन हैं । सेवा का, दान का अधिकारी है । तुम्हारा अधिकार फूँकने का नहीं है ।

*

*

*

जैसा संस्कार रहता है उसी रूप से दर्शन होता है । रूप में अरूप में । नहीं भी नहीं - है भी नहीं - उसमें भी है ही, तुम अरूप में चाहते हो निर्गुण निराकार में है । रूप में चाहते तो रूप में है ।

*

*

*

दर्शन जो है - भगवान् का नित्य रूप भी है - प्रकृत रूप भी है - वह भी प्रकट होता है । और मन का भी होता है । उसी रूप में वही है । हर एक रूप में प्रकट है । एक कल्पना और एक नित्य रूप ।

*

*

*

मृत्यु है तो अमृत भी । मृत्यु नहीं तो अमृत भी नहीं हो सकता । बीमारी भी होती है । Accident भी । आत्मा कहाँ जाता है । अगर पति को पा लिया हो तो वह कहाँ गया । जगत और जगत अतीत-दो रास्ते हैं । माँ तो कुत्ते को भी हार डालती हैं । मैं तो सब में हूँ । इस कुत्ते में तुम सब में ।

*

*

*

आत्मा का प्रकाश हो जाना चाहिये । नाम स्वरूप-नाम का प्रकाश, राम सीता । अपने आप को देखकर तृप्ति होती है । मन का नाश जब तक ना हो तब तक प्रकाश नहीं ।

*

*

*

प्रश्न- मैं क्या हूँ ?

माँ- तुम जीव हो, बन्धन में हो, बन्दी हो । अब सेवा करनी है, सेविका बन कर, दासी बन कर, दास बनकर, प्रभु बनकर, प्रभु-दास, विषय भोग से आखिर विष ही रह जायगा, Slow Poison जिस स्थिति में हो उसमें अनुभव होगा । कोई है तो थोड़ा दूर तक अहम् देख सकता है । उसका ही उसको अनुभव होगा । जिस स्थिति जिस Stage पर है वहाँ से ही देखेगा । यह क्यों हुआ । वह क्यों हुआ । यह तो अज्ञान है । कर्म का फल तो भोगना है । स्वयं - स्व अभी । स्वयं-सबमें आप है । भगवान् की कृपा सब समय ।

*

*

*

भक्त- कोशिश करते हैं भगवान् में लय हो जायँ ।

माँ- एक कोशिश है लय हो जायँ, दूसरा चीनी खाना है । बनना नहीं । जैसा भाव है वैसा लाभ है । महावीर ने कहा था एक इसी दृष्टि से देखता है - मैं तो राम जी का स्वरूप हूँ क्योंकि आत्मा है और कुछ नहीं । और एक ढंग (प्रकार) से वह प्रभु हैं मैं दास हूँ । भगवान् हैं । स्फुरिण और अग्नि । दहन करने की शक्ति एक ही है ना । वह पूर्ण है मैं अंश हूँ । एक आत्मदर्शन जो प्रकट हो जाता है । स्थिति होती है । प्रभु दास पूर्ण अंश । आत्मा जिस रूप में वही है । फिर मैं नित्य दास, होना नहीं चीनी खाना है । एक में भी देख सकता है । और पूर्ण अंश वही । इसलिये तीनों एक है एक में तीन हैं । लय होगा कहाँ, जल की तरंग क्या है - तरंग में जल के सिवाय और क्या है । फिर लय होता है । होना लेना-पाना वही है-नहीं है ।

*

*

*

भक्त- माँ अन्त समय स्मरण बना रहे ।

माँ- स्मरण अभी से करोगे तो अन्त समय में रहेगा । हर वक्त चलते फिरते जब तक स्वाभाविक रूप से (automatically) ना आ जायेगा रोम रोम में ।

नयी सदी की चेतना

दूध के छँटि देकर जैसे चीनी के रस का परिष्कार किया जाता है वैसे ही ईश्वर-चिन्ता के स्पर्श से चित्त का संस्कार व मलिनता दूर हो जाती है। संसारी लोग प्रायः अधिक आयु होने पर भजन पूजन करना आरम्भ करके श्रान्त व निरुत्साहित हो पड़ते हैं। इस कारण से छुटपन से ही ईश्वर-भाव मुख्य करके जीवन-निर्वाह करने से अन्त में "दिन समाप्त हो गया, शाम हो गई, (हे हरि) हमें पार करो" कहकर रोना नहीं पड़ता। आत्म रक्षार्थ अर्थवित्त संचय की तरह, धर्म-संचय भी नितान्त प्रयोजनीय है, ऐसा विचार सर्वदा मन में रखना उचित है।

— श्री श्री माँ आनन्दमयी

माँ हमारे साथ रहना

— सरोजिनी सक्सेना

माँ हमारा ध्यान रखना
 हम तेरी सन्तान हैं। माँ हमारे साथ रहना।
 हम अभी नादान हैं।
 तू है पतितों की उद्धारक
 मैं हूँ पापों से भरी।
 कर्म जो निशिदिन ही करते,
 वे अभी विद्यमान हैं
 माँ न जो तारोगी हमें
 जग में हँसी होगी तुम्हारी।
 हम तुम्हारे, तुम हमारी
 यह हमें अभिमान है।
 माँ हमारा ध्यान रखना।
 हम तेरी सन्तान हैं माँ हमारे साथ रहना।
 हम अभी नादान हैं।

*

मातानन्दमयीं वन्दे

ब्र. गीता बनर्जी

मातानन्दमयीं वन्दे नित्यां पूर्णां शिवात्मिकाम् ।
 सत्यरूपां जगद्वन्द्यां भूयो भूयो नमाम्यहम् ॥ १ ॥
 जलजं कमलं मनःप्रियं रुचिरं मातरि शोभते हि नः ।
 चरणं तरिणी लसत्यलं हृदये भातु चिरन्तनं चिरम् ॥ २ ॥
 शुक्लाम्बरां शङ्खयुतां च शुभ्रां
 ध्येयां हि सद्भिर्विबुधैः समेताम् ।
 श्वेताभ्रमां हंससमायुतां तां
 वन्दे परां बोधनलब्धयेऽहम् ॥ ३ ॥
 आनन्दमय्यै करुणान्वितायै
 स्नेहं प्रदात्र्यै जगतां जनन्यै ।
 पापं च हन्त्यै विमलं विधात्र्यै
 तस्यै नमः स्यात् सततं भवान्यै ॥ ४ ॥
 नमामि मातस्तवपादपद्मं
 गृणामि मातस्तव कीर्तिगाथाम् ।
 भणामि पीयूषयुताश्च गीस्ते
 करोमि गानं तव देवि लीलाम् ॥ ५ ॥
 रक्तोत्पलस्थां कनकाङ्गधारीं
 जगद्धिधात्रीमथ शं प्रदात्रीम् ।
 धारां कृपायाश्च प्रवर्षयन्ती-
 महर्निशं तां शरणं प्रपद्ये ॥ ६ ॥
 वारिजसुन्दरसौम्यसुनेत्रां
 स्नेहतृषातुरसन्ततिसेव्याम् ।
 मानसशान्तिविधानसमर्थां
 दुर्गतिनाशकरीमभिवन्दे ॥ ७ ॥
 लसत्किरीटं घनकृष्णकुन्तलै-
 र्मुणालगौरी स्वविभावृतानना ।
 दुकूलहारासितशङ्खधारिणी
 भवेत्सदा मे कृपयाद्रदृक् च सा ॥ ८ ॥

श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग

—स्व. अमूल्य कुमार दत्त गुप्त

सोलन राजवंश के लुप्त होने का कारण—

माताजी ने और भी कहा— "योगी भाई के राजवंश के लोप (समाप्त) होने की जो कहानी योगी भाई से सुनी थी वही तुम लोगों को सुना रही हूँ। योगी भाई के चार पूर्वजों में एक राजा योगी पुरुष थे। एक दिन उन्होंने अपनी पत्नी से कहा "मैं कमरे का दरवाजा भीतर से लगा लूँगा जब तक मैं स्वयं दरवाजा न खोलूँ तब तक आप लोगों में से कोई मुझे बुलाना नहीं और न ही भीतर आने का प्रयास करना।" इतना कहकर उन्होंने दरवाजा लगा लिया। तीन दिन इसी तरह बीते। तीन दिन के उपरान्त स्वजनों के धीरज का बाँध टूट गया। उन्होंने रानी साहिबा की बातों की उपेक्षा कर दी और दरवाजा तोड़कर भीतर चले गये। भीतर राजा निश्चल अवस्था में आसन लगा कर समाधिस्थ थे। लोगों ने उन्हें पुकारा-हिलाया-डुलाया पर जीवन का लक्षण नहीं मिला। लोगों ने चिकित्सकों को बुलवाया, चिकित्सक ने परीक्षण करके मृत घोषित कर दिया। राजा को दाह संस्कार के लिये ले जाया गया। रानी को यह सब ठीक नहीं लग रहा था। उनको पूरा विश्वास था कि राजा की मृत्यु नहीं हुई है पर चिकित्सक एवं स्वजनों के कारण वे कुछ आपत्ति नहीं उठा रही थीं। जब राजा को चिता पर लिटाकर चिता में आग लगाई गयी तब देखा गया कि राजा के पैर का अँगूठा काँप रहा है। यह देख रानी शोक से व्याकुल हो गयीं और उन्होंने राजवंश के निर्वंश होने का श्राप दे दिया। इस श्राप के होने पर भी दो तीन पुरुष सामान्य रूप से चलते गये योगी भाई के समय ही यह वंश लोप की हालत सामने आयी है। सोलन में योगी भाई से इस कहानी को सुनकर नारायण स्वामी ने मुझसे पूछा, "यह राजा ही क्या वह योगी हैं समाधि अवस्था में जिनका दाह किया गया था?" उनके प्रश्नों को सुनकर मैंने कहा था, "इस शरीर ने अभी तक इस बारे में कुछ नहीं कहा।" योगी भाई का हाव भाव तो तुम लोग देख ही रहे हो। सुना जाता है कि बाल्यावस्था से ही "राजा" बनने में उनकी रुचि नहीं थी। जिस दिन उनका राजपद पर अभिषेक हुआ था उनकी दोनों आँखों से आँसू टपकते देखा गया था। देश की स्वाधीनता के उपरान्त राज्यों के विलीन होने पर भी उनमें प्रसन्नता थी। अभी उन्हें राजस्व वृत्ति प्राप्त हो रही है। योगी भाई का कहना है, यह भी यदि बन्द हो जाय तो उसमें भी बुराई क्या है? तब माँ के किसी भी आश्रम में निश्चित होकर बैठा जायगा।

इन सब बातों में रात के साढ़े बारह बज गये थे। हम लोग माँ को प्रणाम करके चले आ रहे थे इसी समय माताजी ने मुझे बुलाया "माताजी के पास जाने पर माताजी ने कहा" भाईजी की जीवन रक्षा के लिये यह शरीर एक दिन के अन्तराल पर अन्न ग्रहण करता था यह बात भाईजी से कभी नहीं कही गयी।" माताजी के इस कथन से आश्चर्यचकित रह गया। मेरे इस भाव को

देखकर माताजी ने कहा, कहो तो, यह सब बातें मैं किसको कहूँगी? केवल भाईजी ही क्यों कितने ही लोगों के लिये यह सब किया जा रहा है। जिन लोगों के लिये यह किया जा रहा है, वे क्या मेरे से अलग हैं जो इस का प्रचार करना पड़ेगा? शरीर में जब खुजली होती है उसे खुजलाने के लिये क्या दस जन को बुलाकर कहना पड़ता है, "तुम लोग देखो मैं कैसे खुजला रही हूँ। इस शरीर के लिये अपना पराया कुछ नहीं है। इसलिये इस शरीर में प्रचार का कोई भाव नहीं होता।

"और देखो, किसी के लिये कुछ करना हो तो केवल मात्र ख्याल से ही किया जा सकता है। भाईजी को ख्याल से ही ठीक किया जा सकता था। पर ऐसा न करके एक दिन बाद एक दिन खाने का नियम बनाया गया यह एक उपलक्ष्य मात्र है। कैलास जाते समय मार्ग में एक डान्डी वाले को साँप ने काटा था, वह काला साँप था, ऐसा साँप काटने पर बचना नामुमकिन रहता है। मुझको जब यह बात कही गयी तब मैंने घास की तरह एक पेड़ दिखा कर उसके पत्ते का रस डान्डीवाले को पिलाने के लिये कहा। देखा गया कि साँप के विष का कोई कुप्रभाव नहीं पड़ा। जो पेड़ दिखाया गया था वह साँप के विष उतारने की दवा नहीं है साँप काटने पर किसी रोगी को देने पर वह बचेगा भी नहीं।

"कभी ऐसा भी होता है कि किसी-किसी को इच्छानुरूप उनके मार्ग पर चलने दिया जाता है पर इसके साथ ही एक ऐसी स्थिति दी जाती है जिस कारण वह जो भी कर्म करता है उसका फल भोग उसको नहीं करना पड़ता। यह जो बात कही गयी इसके साथ पहले की बातों का कोई सम्बन्ध नहीं है। एक दूसरे प्रसंग का ख्याल होने से यह बात कही गयी। आज रात अधिक हो गयी आप लोग अभी जाओगे।"

मैं माताजी को प्रणाम करके चला आया। तब रात के १२ बजे थे।

११ श्रावण, रविवार, (२७/७/५२)

स्वामी अखण्डानन्द की गति और स्थिति—

आज प्रातः माताजी के दरबार में सत्संग का जो प्रसंग चल रहा था उसमें स्वामी शंकरानन्द जी ने कहा, "शास्त्र में ऐसा भी देखा जाता है कि सविकल्प या निर्विकल्प समाधि से सामान्यावस्था में आने पर कभी-कभी पूर्वकृतकर्म व्यक्ति को किस ओर ले जाते हैं उसका कोई ठिकाना नहीं रहता।" माताजी ने स्वामी जी के कथन को स्वीकृति देते हुए कहा, कल रात को तुम नहीं थे, तब इसी प्रकार की ही चर्चा हुई थी। योगी भाई को पुत्र हो इसी उद्देश्य से ज्योतिष (भाईजी) ने अन्न त्याग किया था। कैलास से लौटते समय जबरन उसे चावल खिलाया गया था। इस बात को सुनकर अवधूत जी ने कहा था, "माताजी तो इस प्रकार करेंगी ही, कहीं भाईजी की जड़भरत जैसी हालत न हो।"

"अखण्डानन्द स्वामी जी के देहावसान के दो दिन के बाद देखा गया कि यह शरीर कैलास में है एवं स्वामी जी भी वहीं हैं। वे निर्वस्त्र हैं। केवल मात्र कौपीन धारण किये हुये हैं। वे दोनों हाथ

आगे पीछे हिलाते हुए मस्ती में चल रहे हैं । देखते ही देखते मानो उनका शरीर लाल हो गया । गणेश जी का शरीर देखने में जैसा लाल है स्वामी जी का शरीर भी उसी प्रकार लाल दीखने लगा । चलते-चलते परिधान कौपीन भी खुल कर गिर पड़ा । पर स्वामी जी उससे बेखबर थे । एक तन्मयता में वे हाथ लटकाते हुए चल रहे थे । पेट उनका बड़ा था अतः चलने पर लगता था कि उनका पेट आगे आगे चल रहा था । इस चलने की अवस्था में देखा कि उनके शरीर का लाल रंग बदलकर उज्जल श्वेत (सफेद) ज्योतिमय स्वरूप हो गया एवम् उनका भाव भी शान्त गम्भीर हो गया ।

माताजी स्वामीजी का शरीर आपके श्री शरीर में समाहित नहीं हुआ ?

माताजी— हाँ मै— वही तो कहा ।

मै— कहाँ कहा ।

माताजी— (अपने को दिखाते हुए) यह शरीर कहने पर क्या तुम केवल इसी शरीर को ही समझते हो । यह शरीर तो है ही इसके अलावा और भी शरीर हैं । स्वामीजी को गणेश की मूर्ति में जो देखा गया इसका भी कारण है । एकबार की बात है । यह शरीर शशाङ्क बाबू वगैरह को लेकर दक्षिण भ्रमण पर गया था । तब तक शशाङ्क बाबू ने संन्यास ग्रहण नहीं किया था । संन्यास तो इस के बहुत बाद लिया था । उस समय हमलोग त्रिवेन्द्रम् (तिरुवन्तपुरम्) या ऐसे ही किसी जगह पद्मनाभ के मन्दिर में गये थे । वहाँ जाकर देखा कि उक्त मन्दिर में दोनों जून (वख्त) प्रायः ढाई हजार नर-नारियों के प्रसाद ग्रहण की व्यवस्था है । इतने लोगों की रसोई बनाकर गणेशजी की एक मूर्ति के सामने भोग लगाकर ही वह प्रसाद लोगों में बाँटा जाता था । वहाँ की उक्त गणेश मूर्ति स्वामीजी को अत्यन्त पसन्द आयी थी । गणेश, माँ के अर्थात् भगवती के पुत्र हैं । उनको भोग लगाकर प्रसाद दिया जाता है देख स्वामीजी को प्रसन्नता हुई थी । इस शरीर के प्रति उनका जो भाव था वह तो तुमलोग जानते ही हो ।

दाक्षिणात्य आते समय वहाँ से गणेश की मूर्ति लायी गयी थी, सावित्री महायज्ञ के समय वह मूर्ति व्यवहार में लायी गयी थी । जो भी हो जब कन्यापीठ की स्थापना हुई तब वहाँ भी रसोई बनने के बाद गणेश का भोग देकर वे लोग प्रसाद पाते थे । वही अब तक चला आ रहा है । स्वामीजी का गणेश के प्रति अनुराग था अतः उनके चित्र के पास स्मृति-मन्दिर में गणेश की मूर्ति रखी हुई है । स्वामीजी की मृत्यु के बाद उनको गणेश के रूप में देखने का कारण ही है उनका गणेश के प्रति अनुराग । बाद में वह भाव कट गया था, ज्योतिष के भीतर सूत्र रूप से जो कर्म का भाव था वह जैसे अन्नत्याग के बहाने काट दिया गया था स्वामीजी के समय भी वैसा ही किया गया था ।

मै— माताजी, आपने ज्योतिषबाबू की कामना और स्वामीजी की आसक्ति को एक स्तर पर रखा ।

माताजी— एक पर्याय से तुम क्या कहना चाहते हो ?

मैं— ज्योतिषबाबू की जो वासना थी वह जागतिक वासना थी— राजासाहब को एक पुत्र हो यही थी उनकी वासना । और स्वामीजी गणेश जी को पसन्द करते थे कारण वह जगन्माता के पुत्र हैं । यह दोनों बातें ही एक श्रेणी की आसक्ति के अन्तर्गत आती हैं क्या ?

माताजी— नहीं, मैंने भी इन दोनों को एक स्तर पर नहीं रखा । जो देख रही थी वह यह है पिताजी (अर्थात् स्वामीजी) यदि गणेश की मूर्ति में ही आबद्ध होकर रहते तो उनकी स्वरूपस्थिति नहीं होती । लोग काली, दुर्गा की साधना करके यदि काली दुर्गा के साथ तादात्म्य स्थिति को प्राप्त हो जायें तो उस अवस्था में स्वरूप स्थिति कहाँ ? लोगों को जैसे जागतिक वासना त्याग करनी पड़ती है उसी प्रकार उनको शुद्ध वासना का भी त्याग करना पड़ता है । तभी स्वरूपस्थिति प्राप्त होती है (स्वामी शङ्करानन्द को लक्ष्य करके) पिताजी ने कर्म सूत्र की बात उठाई थी इसलिये यह सब बात आ गयी थी ।

माताजी के ख्याल का अर्थ-अनन्त प्रकार का हो सकता है—

आज रात को भी माताजी मौन के बाद आँगन में आकर बैठों और नाना प्रसंगों की चर्चा छिड़ी । मुझसे पूछा मैं गोपीबाबू के घर गया था या नहीं एवं वहाँ पर क्या आलोचना हुई थी ? मैंने कहा "मैं आज ही गोपीबाबू के घर गया था । कल रात और आज सुबह जो भी बातें हुई थीं वह मैंने गोपीबाबू से कहा ।" यह सुनकर माताजी हँसने लगीं । मैंने और भी कहा "आपके एक दिन के अन्तराल पर अन्नग्रहण करने और गृहस्थों के घर के भीतर नहीं जाने के ख्याल में जो पृथगर्थता है वह भी मैंने गोपी बाबू से बताया । यह सुनकर गोपीबाबू ने कहा, "अच्छा मान लिया माताजी गृहस्थों के घर नहीं जाती हैं, पर इसका भी तो एक फल है ।" यह सुनकर माताजी ने हँसते हुए कहा, "तुमलोग चाहने से इस बारे में कितने ही अनुमान लगा सकते हो ।"

"देखो इस शरीर से किसी की भी कभी भी सेवा नहीं हो सकती । यह शरीर अपने ख्याल से इस घर उस घर में घूमता रहता है एवं कौन सी वस्तु किस प्रकार रखनी है इस बारे में कुछ कुछ कहता है । यह सब बातें कहने के लिये ही यह शरीर यह घर वह घर करता है ऐसी कोई बात नहीं है । घर घर में घूमना फिरना जैसे ख्यालवश होता है कहाँ क्या करना होगा यह भी ख्यालवश हो जाता है । उद्देश्य पूर्ण ढंग से कोई भी काम नहीं होता । उस दिन अपने ही ख्याल से लड़कियों के ठाकुर घर में गयी । वहाँ जाकर देखा कि बिजली का तार लटक रहा है । यह देखकर ख्याल आया कि इस तार को स्पर्श करके कोई भी दुर्घटना घट सकती थी । उस लटकते तार को दिखाते हुए कहा "यह ऐसा क्यों है ?" दीदी ने कहा "ऐसे तो कितने ही रहते हैं" एक लड़की जल्दी से उसे हटाने गयी मैंने उसे ऐसा करने से रोका । पर दीदी ने मेरी मनाही को न मानते हुए जैसे ही तार को छूने का प्रयास किया वैसे ही वह झटके से गिर पड़ीं तार पर रखी हुई उँगली का वह प्रान्त जल गया और वहाँ पर छाला पड़ गया । तब कमल (विरजानन्द) को बुलाया गया । वह इलेक्ट्रिक इंजीनियर है । उसने उस तार को देखते ही कहा कि उस तार से कभी भी कोई भी दुर्घटना घट सकती है । उसने उसी समय वहाँ से तार को हटाने की व्यवस्था की । देखो, यह जो

लड़कियों के कमरे में जाना एवं उस तार के सम्बन्ध में जो भी कहा गया था वह इस शरीर के ख्याल के कारण ही हुआ था। तुम लोग इसका कोई भी अर्थ निकाल सकते हो। तुमलोग कह सकते हो कि लड़कियों की विपत्ति को काटने के लिये ही माताजी अचानक उस कमरे में गयीं और तार को हटाने की व्यवस्था की। इस प्रकार गृहस्थों के घर में जो जाना नहीं होता इस सम्बन्ध में तुम लोग विविध अर्थ कर सकते हो।

मैं— हाँ, गोपीबाबू ने कहा है कि हमारी ओर से माताजी के इस प्रकार के व्यवहार के अनन्त अर्थ हो सकते हैं, किन्तु उसका असली अर्थ क्या है यह केवल माताजी ही कह सकती हैं।

यह सुनकर माताजी हँसते हुए कहने लगीं— यह सच है, पर गृहस्थों के घर अभी जाना नहीं हो रहा है यदि इस बारे में कभी कोई बात आये तो पिताजी को कहा जायगा। पहले से कोई उद्देश्य या संकल्प लेकर यह शरीर कोई काम करता है ऐसी बात नहीं है। इस शरीर के सभी काम ख्यालवशतः ही होते हैं।

मैं— आप जो इस जगत् में आविर्भूत हुई हैं यह भी क्या केवल मात्र ख्यालवशतः ही है। क्या इसका भी कोई उद्देश्य नहीं है ?

माताजी— (हँसकर) इस सम्बन्ध में यह शरीर कुछ नहीं कह रहा है। (सभी की हँसी)



माँ की मधुर लीला

—स्वामी नारायणानन्द तीर्थ

दुर्वृत्त शमन में मधुर लीलामयी माँ का अद्भुत शासन —

वात्सल्यमयी श्री श्री माँ का सन्तान के प्रति कितना स्नेह, कितनी करुणा, कितनी क्षमा है, एकाकी बैठकर सोचने से हृदय कृतज्ञता से भर जाता है एवं आनन्द से मन प्राण गद्गद् हो जाते हैं। मन जब संसार के विविध घात प्रतिघात के आघात से टूट जाता है, निराशा आकर घेर लेती है, उस समय श्री श्री माँ के स्नेह एवं करुणा का स्मरण करने पर मन में बल का संचार होता है। समुद्र में डूबते हुए को नाव के समान भवसागर में डूबते हुए हमारे लिए श्री श्री माँ हमारा आश्रयस्थल हैं। ऐसी दयामयी माँ जिनकी हैं, उनका जीवन क्या इस तरह व्यर्थ जायेगा।

दरिद्र पिता माता के घर में जन्म लेने पर भी जीवन में खाने पीने की स्वाधीनता थी। श्री भगवान की कृपा से जो थोड़ा बहुत था, उसके द्वारा ही बाकी का जीवन किसी तरह बीत जाता। जिस प्रकार के वातावरण में पला था उसमें जैसी आय वैसा व्यय करने की योग्यता प्राप्त की थी। जीवन का स्तर कभी भी बहुत खर्चीला नहीं था। जीवन का आदर्श था प्राचीन ऋषियों की भाँति एवं Plain living and high thinking : coat according cut your to your cloth मुझे यह शिक्षा प्राप्त हुई थी। इसी आदर्श को वास्तविक रूप देते हुए गर्व का अनुभव करता था, कभी भी दीनता का अनुभव नहीं हुआ। इसको अस्वीकार करने की प्रवृत्ति कभी भी नहीं हुई। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मेरे अचेतन मन के भीतर किसी प्रकार का अभिमान; आत्मसम्मान अन्तरात्मा में रह सकता है परन्तु इसने जीवन में हीन कार्य सम्पादन से मेरी रक्षा ही की है, इसमें लिप्त होने नहीं दिया।

काशी में गंगा तट पर आश्रम प्रतिष्ठा के बाद ही से परम स्नेहमयी करुणामयी माँ मुझे आश्रम में रहने के लिए कह रही हैं, मैं ऐसा ही हत भाग्य रहा हूँ कि प्रसन्न चित्त से उनके प्रस्ताव में स्वीकृति नहीं दे पा रहा हूँ। यह मुक्ति पथ के यात्री के लिए लक्ष्य-सिद्धि में महा विघ्नकरक है। यह समझकर भी ठीक से सम्मति नहीं दे पा रहा था। कोई चीज मुझे बाधा दे रही थी। अकृत्रिम मंगलाकांक्षी श्री श्री माँ जिसके प्रति कृपा करती हैं उसका सर्वप्रकार का मंगल हो इस ओर उनकी व्यापक दृष्टि रहती है और उसे वह काम में रूपायित कर ही देती हैं। सन्तानों के प्रति उनकी ऐसी ही करुणा है।

बहुत पुरानी बात है। सन् 1945 को आश्रम-प्रवेश के बाद श्री श्री माँ के आदेश से कुछ दिन आश्रम में रहकर पुनः पहले के वासस्थान में लौट गया था। स्थायी रूप से आश्रमवासी नहीं हो रहा था। यह भी सच बात है कि आश्रम में रहने की योग्यता का मुझमें अत्यन्त ही अभाव था।

श्री श्री माँ काशी आयी हैं यह खबर पाते ही शाम को माँ के दर्शनों की इच्छा से आश्रम गया। माँ तब कन्यापीठ की छत पर टहल रही थीं देखकर हम लोग नीचे से ही उनकी अनुमति लेकर ऊपर गये। कन्यापीठ में जाने के लिए श्री श्री माँ या गुरुप्रिया देवी का आदेश लेना पड़ता था। अनुमति के बिना कन्यापीठ में प्रवेश निषेध था। छत पर हम लोग माँ के साथ बातचीत कर रहे थे इतने में किसी ने आकर माँ से नीचे जाने के लिए प्रार्थना की। बोलने के साथ ही साथ माँ नीचे उतर गयीं। हम लोग छत पर ही रह गये। हमने सोचा था कि माँ शायद नीचे का काम खत्म करके फिर से छत पर आयेंगी, तब हम लोग फिर माँ के साथ बातचीत करेंगे।

थोड़ी देर में ही माँ के पास जाने के लिए मेरा बुलावा आया। मैं माँ के पास जा रहा हूँ देख नलिनी दा (श्री नलिनी कान्त भट्टाचार्य, इलेक्ट्रिकल इंजीनियर) हर लाल बाबू (श्री हर लाल चट्टोपध्याय, वस्त्र व्यवसायी) आदि जो छत के ऊपर थे वे सभी मेरे पीछे आये। हमने सोचा था कि माँ शायद ऊपर नहीं आयेंगी इसीलिए नीचे बुलाया है। मैंने नीचे आकर देखा कि आजकल जहाँ कन्यापीठ का आफिस है उसी के सामने एक मूँज की खटिया पर माँ बैठी हैं। मैंने माँ के पास जाकर पूछा 'माँ' आपने मुझे बुलाया है, माँ ने हँस मुख जबाब दिया हाँ, साथ ही साथ उन्होंने अपने ओढ़ने की चादर के भीतर से एक काँसे की कटोरी निकाली। कटोरी गाय के दूध से बनी खीर से भरी हुई थी। उसके ऊपर चम্পे के फल के समान पीली मलाई थी माँ ने कटोरी मेरे हाथ में रखते हुए कहा कि "इसमें से इस शरीर ने खाया है, अब तुम खाओ" देखा कि कटोरी के एक किनारे से चम्मच से माँ के मुँह में दिया गया है, माँ के लिए दीदी गुरुप्रिया ने कितने प्रेम से यह खीर बनाई है कि माँ ग्रहण करेंगी। उस खीर को माँ स्वयं न खाकर मुझे दे रही हैं। इससे मैं अत्यन्त लज्जित हुआ और मन ही मन मैं यह प्रार्थना करने लगा कि हे धरती माता तुम फट जाओ और मैं तुममें समा जाऊँ। दीदी को भी यह अच्छा नहीं लग सकता। यह तो स्वाभाविक ही है। इस अशोभनीय दृश्य को देखकर बुनि थोड़ा सा हँसी थी। बुनि के लिए ऐसा करना स्वाभाविक था, इसके लिए उसे दोष नहीं दिया जा सकता। जो माँ की बात नहीं सुनता उसको घने खीर की कटोरी देना कितना अशोभन है यह हम सभी स्वीकार करेंगे। इसी को कहते हैं दुष्ट व्यक्ति को ऊँचा आसन देना। यह जो कितना बड़ा दण्ड है, जिसकी बुद्धि है वह ही समझ सकता है। इस व्यंग्य हँसी के लिए माँ ने बुनि से कहा था 'तू हँसी जो ? तुम लोगों का स्वाभाव अभी सुधरा नहीं। यह शरीर यदि खीर न ले' माँ के श्रीमुख से ऐसी बात सुनकर बुनी को काठ मार गया। बाद में दीदी के मुँह से हमने यह सुना था। यह व्यंग्य हँसी माँ को अच्छी नहीं लगी यह माँ की बातों से ही समझ में आता है। श्लेष या प्रच्छन्न विद्रूप से किसी के दोष को सामने कहना अच्छा है। इसमें अपराध कम होता है।

खीर की कटोरी मेरे हाथों में न देकर माँ मुझे बार-बार खाने को कह रही हैं। पागल छोड़ और कौन ऐसा कर सकता है। माँ के बार बार खीर खाने के लिए कहने पर मैंने और दूसरा उपाय न देखकर सबको प्रसादी खीर बाँटने की सोची। यह देख माँ ने कहा इसमें से किसी को भी थोड़ा नहीं दे सकोगे। पूरी तुमको खानी पड़ेगी। "माँ के इस आदेश पर मैंने कहा 'इसमें से किसी

को भी प्रसाद देकर यह विष मैं नहीं खा सकूँगा, यह तो खीर की कटोरी नहीं है । यह भेंट विष का प्याला है । यह विषैले सर्प का तीव्र हलाहल है ।

माँ ने हँसते हुए कहा "इस तीव्र विष को खाकर तुम कैसे करते हो देखूँगी । इस प्रकार प्रिय और कठोर भाषा विशेष कर 'मरो' यह शब्द साधारणतः माता जी नहीं कहती है' पर मेरे भाग्य में उस दिन माँ के मुख से ऐसी भाषा निकली थी । एक कहावत है 'यदि माँ सन्तान को मरो कहकर गाली दे तो सन्तान की आयु-वृद्धि होती है' । इसीलिए शायद इतना दीर्घायु हूँ ।

उपायान्तर न देखकर पूरी खीर ही मुझको खानी पड़ी । माँ की बात न मानने के दण्ड स्वरूप सुस्वाद खीर मिली, यह क्या कोई सोच सकता है । हमारी माँ जैसी लोकातीत है उनका शासन भी लोकातीत हैं । इसकी कल्पना कोई कर सकता है ? माँ हमारे सारे अपराधों को क्षमा करती जा रही हैं । माँ के क्षमा गुण के सामने वसुन्धरा भी हार मानती है । हमारे अपराध के बदले में वर्षाधारा की भाँति उनसे मिलता है अकृत्रिम स्नेह, क्षमा और करुणा जो विश्व में कहीं भी ढूँढने पर नहीं मिलती । ऐसी स्नेहमयी माँ को यथार्थ मर्यादा न दे सकने के कारण मैं लज्जित और मर्मन्तक रूप से अनुत्पन्न हूँ ।

(क्रमशः)

आनन्दमयी स्मृति

[माँ के साथ २४ घंटा]

—चित्रा घोष

३ अक्टूबर १९५२ की बात है लक्ष्मी पूजा (शरद पूर्णिमा) के दूसरे दिन झाझरिया के घर पर रासलीला कीर्तन सुन रहे थे। प्रातः काल उठकर लक्ष्मी पूजा का प्रसाद लेकर सीधे 12 Sunny Park में आये। माँ आकर दरी पर बिछाये गये आसन पर बैठी हैं। हमलोग माँ के पास ही थे। माँ की दृष्टि हमारे ऊपर पड़ने से भी माँ का ख्याल उसमें नहीं था यह मैं समझ रही थी। मेरे मन में एक अभिलाषा थी यदि नवद्वीप जाना हो, पर माँ यदि अपने ख्याल से कहें तभी। अन्तर्यामी हैं सब समझ लेंगी जरूर कहेंगी।

रासलीला की समाप्ति पर माँ धूप में चल रही थीं देखकर मैं छतरी लेकर माँ के साथ मोटर तक गयी। माँ ने मुड़कर देखा नहीं। मैं लौटकर आकर एक तरफ खड़ी थी। अचानक देखा कि उत्पला कह रही है "चित्रा को माँ बुला रही हैं।" मेरे गाड़ी के पास जाते ही माँ ने कहा, "मैं अभी हाजरा रोड जा रही हूँ। ५ बजे तक हूँ।" मैंने पूछा, "मैं वहाँ आऊँ?" माँ— "तुम्हारी मर्जी।" मैं— माँ, आप क्या नवद्वीप जा रही हैं? माँ— तुम तो पुरी नहीं गयी। मैं— "नवद्वीप ले चलिये।" माँ— परमानन्द, गाड़ी में जगह होगी क्या? स्वामीजी ने कहा, दो गाड़ियाँ जायेंगी। यदि एक और गाड़ी मिले तो देखा जायगा। माँ ने मुझे से दीदी को सूचित करने को कहा साथ ही मुझे शाम के ४:३० बजे हाजरा रोड आने का निर्देश देते हुए कहा कि उसी समय यह भी कह दिया जायगा नवद्वीप जाना होगा या नहीं।

मैं रेणु मौसी की गाड़ी से घर लौट रही थी इतने में दो विधवा महिलाओं ने गाड़ी में जगह माँगी। उनमें से एक महिला हाजरा रोड जायेंगी। उनके साथ हमलोग भी वहाँ उतर पड़े। मेरी माँ ने कहा, तुम उत्पला सेन से पूछो शायद माँ ने तुमको प्रसाद ले जाने के लिये कहा हो। मैंने उत्पला से बात करके यह निश्चय किया कि मैं घर से लौटकर यहाँ आकर प्रसाद लेकर यहीं रुक जाऊँगी। माँ ने शाम के ४:३० पर मुलाकात करने का समय दिया है।

अचानक रेणु मौसी (झर्णा की माँ) मौसा जी (झर्णा के पिता डा. सर्वाधिकारी) के साक्षात्कार की व्यवस्था के सम्बन्ध में डा. सुधीर मजूमदार को लेकर माँ के भोग के बाद माँ के कमरे में गयीं। मैं भी भीतर चली गयी। उत्पला के मेरी तरफ से माँ से पूछने पर माँ ने कहा, "उसे तो ४-३० पर आने को कहा गया था, पर दो बातें थीं अभी हो जाय।"

रेणु मौसी द्वारा माँ से कुछ प्रश्न करने पर मुझे कमरे से बाहर चली आते देख माँ ने मुझे वहीं पर बैठने को कहा। जब सब कमरे से बाहर आये तो माँ ने मेरी माँ से कहा, "चित्रा की माँ

तुम्हारी चित्रा को मैं थोड़ा रख रही हूँ । ठीक है तो ।" सबके कमरे से निकल जाने पर केवल एक महिला रह गयीं । उन महिला के चले जाने पर माँ ने दीदी से कहा, "दीदी चित्रा को थोड़ा प्रसाद दे सकेगी । उसके साथ थोड़ी बात करके उसको भेज रही हूँ । तुम जाओ ।"

दीदी के चले जाने पर मैंने दरवाजा बन्द कर दिया । मुझे तब थोड़ा थोड़ा डर लग रहा था । मेरा तो कोई प्रश्न नहीं था मैं सोच रही थी माँ क्या अपना षडैश्वर्य दिखायेंगी, क्या करेंगी कौन जाने ।

माँ तखत पर लेटी थीं करवट बदलकर सिर के नीचे हाथ रख कर लेटीं मैं सिरहाने की ओर बैठी ।

माँ— तुम्हारे साधन-भजन की बात कहो । तुम कृष्ण मन्त्र का जप करती हो न ? कितने अक्षर हैं ? प्रणव है ? ध्यान करती हो ? कितने प्रकार के आसन करती हो ?

मैंने जवाब में ध्यान के सम्बन्ध में कहकर जिज्ञासा रखी भगवान् को कैसे पाया जा सकता है ? माँ का छोटा सा जबाब था - "पाये हुए तो हैं ? इसके बाद माँ ने मेरे कितने भाई बहन हैं यह पूछा ।

मैंने कहा - "माँ मैं विवाह करना नहीं चाहती हूँ । यदि ठाकुरजी करा भी दें तो मुझे आपत्ति नहीं है ।

माँ— देखो यदि सारा जीवन ठाकुर जी की सेवा में व्यतीत कर सको, उन्हें पति रूप में स्वीकार कर सको तो विवाह किये बिना भी रह सकोगी, पर तुमसे विवाह की चर्चा करूँगी इसलिये नहीं बुलाया था ।"

मैंने आवेगपूर्ण भाव से माँ को एक स्वप्न की बात कही, जो कुछ दिन पहले ही देखा था माँ आनन्दमयी एवं ठाकुर परमहंस देव के साथ । स्वप्न का बलंग सुनते ही माँ ने कहा, "इसीलिए ही तुम्हें बुलाया गया था," फिर माँ ने स्वप्न कब किस समय देखा उसका विस्तृत विवरण पूछा । कहा, "देख बिना किसी प्रयास के यह घटना घटी है ।" यह कहते हुए खिलखिला कर हंस पड़ीं । आगे मुझे निर्देश देते हुए कहा, "तुम सर्वदा दिन में चार बार इस प्रसंग का स्मरण करना साथ ही इस भाव को जागृत रखना ।"

इसके बाद माँ आसन के बारे में पूछने लगीं ।

माँ— तुम सिद्धासन जानती हो ? पद्मासन कैसे करती हो दिखाओ तो । यदि ठीक-ठीक सिद्धासन कर सको तो आसन सिद्ध हो जाओगी । अनेक साधु संत कहते हैं वे सिद्धासन कर सकते हैं यदि कोई ठीकसे सिद्धासन कर सके तो वह आसन सिद्ध हो जाता है । तुमको कुछ एक आसन सिखाये जायेंगे, यदि तुम लोगो के गुरुदेव की सम्मति हो तब ही । (आपके माता पिता एवं अन्यान्य बंगाल के प्रसिद्ध संत बालानन्द ब्रह्मचारी जी की शिष्य परम्परा में दीक्षित थे ।)

आगे माँ ने कहा, "निश्वास-प्रश्वास में जप जानती हो ? वह सिखा सकती थी, पर वह तो गुरु को बताया नहीं जा सकेगा । अतः नहीं हो सकेगा । सुनो हफ्ते में दो दिन तुम शाकाहारी

रहना । यदि मछली की रसोई में भी बने तो भी ठीक है । नहीं तो घर पर गड़बड़ होने की सम्भावना बनेगी । धीरे-धीरे ठीक होगा ।"

माँ ने मुझे पुष्पा (भजनानन्द) को बुलाने को कहा, उसके आने पर उससे सिद्धासन करने को कहा । उसके न जानने पर माँ ने दीदी को बुलवाया । दीदी ने कहा, वे पहले तीन घन्टा बैठती थीं । पर अभी दीदी ठीक से कर नहीं पायीं । तब माँ ने स्वयं सिद्धासन में बैठ कर दिखाया । दीदी को माँ ने सब बताया । दीदी ने मुझसे कहा, "केवल कान में मन्त्र देने से ही गुरु नहीं बना जाता । माँ से जो पाया है वह भाग्यबल से पाया।"

माँ - दीदी मैंने कहा था न, लड़की का भाव अच्छा है । विलायत चली जायगी ।

मैं - "इसलिए आपने मेरा जाना बन्द कर दिया ।" माँ खिलखिलाकर हँसने लगीं । कुछ कही नहीं।

इसके बाद नवद्वीप जाने का प्रसंग छिड़ा । माँ ने दीदी से कहा, दीदी चित्रा की नवद्वीप जाने की बहुत इच्छा है । पर लड़कियाँ तो जगन्नाथपुरी जा रही हैं । साधुओं के साथ वह अकेली कैसे जायेगी । फिर माँ ने मुझसे कहा, तुम अपनी माँ या मौसी को लेकर चली जाओ । हमलोग जाकर पता कर लेंगे ।

मैं - उनलोगों को तो गृहस्थी का काम है यदि कल सुबह न जा सकें । इसके अलावा आपके बिना कहे वे जायेंगी भी नहीं ।

माँ - "जाओ काफी देर हो गयी प्रसाद पाकर आओ" मैं माँ का अभिवादन करके चली आयी । प्रसाद पाकर जैसे ही मैंने फाटक से बाहर कदम रखा, दीदी ने पीछे से आवाज लगायी चित्रा तुम्हें माँ बुला रही हैं ।

माँ के पास जाते ही माँ कहने लगीं देख तेरा नवद्वीप जाने का बहुत दिल है इसलिये लड़कियों का जगन्नाथपुरी जाना रद्द करके उन्हें नवद्वीप भेजा जा रहा है, तब तुम भी उनके साथ जा सकोगी ।

मैं माँ की करुणा से हतप्रभ हो गयी मेरे मुँह से निकल पड़ा, "माँ मेरा तो कुछ भी नहीं है फिर भी आप मुझ पर इतना स्नेह कर रही हैं ।"

"कुछ है नहीं इसीलिये तो कर रही हूँ ।

दीदी ने स्वामीजी से रेलगाड़ी का निश्चित समय जानने के लिये मुझे बाहर थोड़ी प्रतीक्षा करने को कहा । तुरन्त स्वामीजी ने पौने चार का समय बताया । माँ के कमरे में प्रवेश करते ही मेरा मन थोड़ा ऊहा पोह कर रहा था । मेरी इस अनिश्चितता की स्थिति को देखते हुए माँ ने कहा-

"देखो, तुम यदि इस प्रकार इधर-उधर करो तो होगा नहीं । तुम्हारे लिये ही मैंने सब ठीक किया । १० मिनट में घर से तैयार होकर आओ ।"

*

*

*

नवद्वीप की ओर-

३-४५ की गाड़ी पर हम पहुँच नहीं सके । ५-१५ (सवा पाँच) की गाड़ी के लिये हम हावड़ा स्टेशन पहुँचे । वहाँ जाकर पता चला कि वह गाड़ी सप्ताह के अन्य दिन में चलती है । आज छुट्टी

का दिन है अतः उक्त गाड़ी नहीं चलेगी । अतः साढ़े छः (६:३०) तक स्टेशन पर सामान के ऊपर हमलोग बैठे रहे ।

बुनिदी (यतीशगुह की पुत्री यूथिका) बिन्दु (शान्तानन्द) गंगा, पुष्प (भजनानन्द) और मैं यह ५ लड़कियाँ तथा चाराणसी आश्रम के संचालक कमलदा (अवकाश प्राप्त इन्जिनियर) । उन दिनों इन्टर क्लास की व्यवस्था की । डिब्बा खाली ही था । माँ को छोड़ कर आना पड़ा इसलिए आश्रम कन्यायें मन ही मन असन्तुष्ट प्रतीत हो रही थीं ।" आज सन्ध्या के समय माँ की रेकाडिंग थी, आज शाम का सत्सङ्ग छोड़ना पड़ा । हमलोगों को तो कुछ ही मालूम नहीं था, इत्यादि । मैं मन ही मन ग्लानि अनुभव कर रही थी, क्योंकि इनके इस कार्यक्रम का कारण मैं ही थी । धीरे-धीरे मेरे साथ बातचीत होते होते उनके असन्तोष के बादल हट गये । फिर तो काफी बातें होने लगीं । रात के करीब ११ (ग्यारह) बजे हमलोग नवद्वीप स्टेशन पहुँचे ।

चाँदनी रात थी, लाल मिट्टी का मार्ग था जो जंगल के भीतर से गया था । उसी मार्ग से हम लोग साइकल रिक्शा से गोविन्दजी के मन्दिर की ओर चले । नवद्वीप की रात की शोभा बहुत अच्छी लगी । सोचने लगी । आज से प्रायः ५०० वर्ष पहले गौरांग महाप्रभु अपने श्री चरणों से इसी धरती को शोभित करते थे, ये वीथियाँ उनके पादस्पर्श से पवित्र हैं । इन्हीं विचारों में मन खो गया ।

रात अधिक हो गयी थी अतः गोविन्द जी के मन्दिर पहुँचने पर काफी बुलवाने पर राखाल नामक सहायक पुजारी आया और हम लड़कियों को ऊपर ले गया । ऊपर बहुत बड़ी छत थी । चाँदनी रात थी, एक तख्ता था हमलोग उसी पर लेट गये । तीन कमरे खाली थे उनमें से एक माँ के लिये रखकर दो कमरों में हमने सामान रख लिया । वैद्युतिक व्यवस्था थी । कुछ देर तक छत पर बैठकर चाँदनी रात की मलयशीतल वायु का सेवन करते हुए भली भाँति यह समझ में आ गया था कि मच्छरों का उपद्रव इस सुख में बाधक होगा, अतः कमरों में तख्तों पर बिस्तर लगाकर मच्छरदानी टाँग कर सोने की व्यवस्था की । सोने से पहले मैं नीचे जाकर पूरी, दाल और मिठाई का प्रसाद पाकर आयी ।

एक तो नयी जगह तिस पर आज की दिन भर की नयी अनूभूतियों को सोचते हुए नींद नहीं आ रही थी । गर्मी काफी थी । मच्छरदानियों के भीतर से भी मच्छर काट रहे थे । रात्रि के आखिरी प्रहर में थोड़ी सी झपकी आने पर भी ब्राह्ममुहूर्त में चारों ओर से आने वाली हरिसंकीर्तन की ध्वनि बड़ी ही मधुर थी । उठकर देखा, आश्रम की लड़कियाँ और पहले ही उठकर नीचे कुएँ पर नहाने चली गयी हैं । मैं अकेली ही छत पर बैठी हूँ । नीचे जाकर देखा कि स्नानागार की पृथग् व्यवस्था नहीं है । कुएँ के किनारे खुले में ही साड़ी इत्यादि पहन कर किसी तरह नहाया जाता है । ऊपर आकर जल्दी-जल्दी तैयार होकर मन्दिर दर्शन को चले ।

पहले गये श्रीगौराङ्गजी के मन्दिर में । यहाँ पर विग्रह छोटे हैं धोती पहनायी हुई, कंधों पर उत्तरीय शोभायमान है । काकपक्षीय घुँघराले कुन्तल (केश) हैं । अंगकान्ति पीत वर्ण की है । मन्दिर परिक्रमा करते हुए हम आगे बढ़े । प्रत्येक घुमाव पर ही एक पीठस्थान है

कहीं "जगाई-मधाई" उद्धार स्थली, तो कहीं विष्णुप्रिया विवाह स्थल, कहीं गौराङ्ग देव का जन्मस्थान इत्यादि । यद्यपि इनकी प्रामाणिकता में सन्देह है ।

दूसरे मन्दिर की कथा है यहाँ नित्यानन्द प्रभु आकर छिप गये थे । उनके छिपने की शर्त थी जब तक श्री गौराङ्ग महाप्रभु आकर स्वयं उनको न ढूँढ़ें तब तक वह छुपे रहेंगे ।

सोनार गौराङ्ग मन्दिर में—

बीच में सोने के ठाकुर तथा एक ओर राधा कृष्ण का विग्रह है । हमने महाप्रभु का "षड्भुज मन्दिर" भी देखा । बीच में नित्यानन्द और महाप्रभु की मूर्ति है । एक ओर राधा कृष्ण का विग्रह तथा दूसरी ओर महाप्रभु की षड्भुज मूर्ति के दर्शन होते हैं ।

श्रीवास अंगन महाप्रभु की प्रसिद्ध कीर्तन स्थली है । यहाँ के नाटमन्दिर में महाप्रभु के कीर्तन की धूम मचती थी । मन्दिर के गर्भगृह में सब अवतारों के विग्रह हैं । महाप्रभु तथा नित्यानन्द प्रभु के विग्रह एवं उनके भक्तों का समावेश है ।

ललिता सखी का मन्दिर—

ललिता सखी का घर देखा । [ललिता सखी तात्पर्य एक वैष्णव साधक से है जो कि ललिता सखी के भाव में साधना करते थे ।] ललिता सखी का कक्ष बहुत ही करीने से सजाया हुआ है, यहाँ तक कि अलने पर परिधेय वस्त्रादि भी रखे हुए हैं ।

मन्दिर दर्शन से लौट कर गोविन्दजी के मन्दिर की आरती देखी । यहाँ के विग्रह की रूप माधुरी अत्यन्त मनोहर है । राधा कृष्ण युगल स्वरूप स्वर्णालङ्कारों से सुसज्जित हैं । पास ही महाप्रभु का विग्रह है । आरती के बाद ठाकुर जी पर हरसिंगार के फूलों की पुष्पवृष्टि हुई ।

ऊपर आकर हमलोग माँ के आगमन की प्रतीक्षा करने लगे, पर माँ अभी तक नहीं आयीं ।

किसी गाड़ी की आवाज मिलते ही हमलोग दौड़कर नीचे जाते । इसी तरह करते-करते दिन के ग्यारह बज गये ।

(क्रमशः)

माँ का नाम जप

—श्री मोहन लाल आर्य

मेरे गुरुदेव पूज्यपाद आशुतोष बनर्जी महाशय एक उच्च कोटि के साधक थे । वे शक्तिदेव महाराज के शिष्य थे । गुरु-शिष्य की उनकी एक श्रेष्ठ परम्परा थी जिसके कारण उनके द्वारा दिये गये मंत्र बड़े प्रभावशाली हुआ करते थे ।

बनर्जी साहब एक अद्भुत प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति थे । वे प्रयाग विश्वविद्यालय के 'रिसर्च स्कालर' थे जो प्रख्यात विद्वान और उस विश्वविद्यालय के वाइस चान्सलर डा. अमर नाथ झा के अधीन अंग्रेजी साहित्य के महान कवि वर्ड्सवर्थ के ऊपर शोध कार्य कर रहे थे । किसी बात पर उनका डा. झा से मतभेद हो गया और उन्होंने विश्वविद्यालय की नौकरी छोड़ दी । मेरठ के डी. एन. इण्टर कालेज, आजमगढ़ के शिबली इण्टर कालेज से होते हुए वे मीरजापुर के बी.एल. जे. इण्टर कालेज में आये । अंग्रेजी के प्रवक्ता पद से वे सेवा निवृत्त हुये । मुख्य रूप से मीरजापुर ही उनकी कर्म भूमि थी ।

सन् 1945 में उन्हें बेरी बेरी हो गया इससे उनके नेत्रों की ज्योति चली गयी । बहुत इलाज किया गया लेकिन कोई लाभ नहीं हुआ । स्वाभाविक रूप से शुरू के वर्षों में वे बड़े चिन्तित थे । वे माँ के अनन्य भक्त थे और माँ की उन पर अपार कृपा थी उन्हें दुखी देखकर एक दिन मैंने उनसे कहा — "बाबा, इन स्थूल आँखों से कब तक देखोगे और क्या देखोगे ? जो सचमुच देखने लायक है उसे भीतर की आँखों से देखो ।" और सचमुच बनर्जी साहब की अन्तर्दृष्टि खुल गयी । माँ की कृपा से उन्हें वह सब दिखायी पड़ा जो बड़े भाग्यशालियों को दिखायी पड़ता है । वे प्रज्ञा चक्षु बन गये ।

स्वाभाविक रूप से बनर्जी साहब का पढ़ना-लिखना सन् 1945 से छूट गया । उनकी स्मरण शक्ति बहुत अच्छी थी । अतः जो कुछ पढ़ा था वह उन्हें याद था । वे पढ़ी-अनपढ़ी बातों के चिन्तन-मनन में डूब गये । इसीलिये शास्त्रों के स्थूल अर्थ तो वे जानते ही थे उनके गूढ़ अर्थ भी उन्हें क्रिस्टल क्लीयर' थे । एक बार माँ की उपस्थिति में किसी विषय पर चर्चा हो रही थी । विश्व प्रसिद्ध विद्वान और माँ के अनन्य भक्त महामहोपाध्याय पं. गोपीनाथ कविराज ने अपना मत व्यक्त किया । बनर्जी साहब ने भी अपनी बात कही । माँ ने बनर्जी साहब के मत का समर्थन किया । इस घटना का उल्लेख दो महापुरुषों की तुलना करना नहीं है । इसका उद्देश्य यह बताना है कि बनर्जी साहब एक मेधावी व्यक्ति थे ।

अपने गुरुदेव की देख रेख में बनर्जी साहब ने बड़ी कठोर साधना की थी । साल भर तक वे हिमालय में भ्रमण करते रहे । अपने गुरुदेव के आदेश पर उन्होंने विवाह किया था । वे उच्च कोटि के साधक और प्रकाण्ड विद्वान थे । इसीलिये सन्त महापुरुषों एवं विद्वानों के द्वारा उन्हें बड़ा सम्मान

मिलता था । ऐसे भी अवसर आये हैं जब माँ की उपस्थिति में प्रसाद वितरण होता था । सब को प्रसाद तो कोई और बाँटता था लेकिन बनर्जी साहब का नम्बर आता था तब माँ अपने स्थान से उठ कर आती थीं और अपने कर कमलों से उन्हें प्रसाद देती थीं । ऐसा दुर्लभ सौभाग्य कितने लोगों को प्राप्त है ?

बनर्जी साहब की गीता पर एक टीका है जिसका नाम है 'सत्य बोधिनी टीका' । वे आँख बन्द करके बैठते थे और धारा-प्रवाह बोलते थे । उनके शिष्य गण उसे लिखा करते थे । यह क्रम कई वर्षों तक चलता रहा । उनके पुत्र श्री सुमित्र शंकर बनर्जी आई. जी. हैं । उन्होंने प्रारम्भ के छः अध्यायों की टीका का प्रथम खण्ड छपवाया जिसका मूल्य तीन सौ रुपये है । पूरी टीका लगभग एक हजार रुपये की होगी । यह उनकी मेधा का एक छोटा सा उदाहरण है ।

मैं प्रायः उनके यहाँ आया जाया करता था । एक दिन जाकर देखा कि उनका कमरा अगरबत्ती की सुवास से महक रहा था । उनके गुरुदेव के चित्र पर लाल गुलाब की माला पड़ी थी । बनर्जी साहब नई धोती, नया कुर्ता पहन कर मुँह में पान दबाये अपने 'इजीचेयर' पर आँख बन्द किये बैठे थे । यों तो प्रायः ही उनका मुख मण्डल शान्त एवं प्रमुदित रहता था । उस दिन चेहरे पर कुछ विशेष भाव था । पूछने पर बताया- "आज गुरुदेव का जन्म दिन है ।" फिर वे अपने गुरुदेव के विषय में बताने लगे । बोलते-बोलते मेरे वक्षः स्थल को छू दिया और कहा- "थोड़ी देर आँख बन्द करके चुपचाप बैठिये ।" मैं बैठा रहा । थोड़ी देर बाद पूछा - "कैसा लग रहा है ?" मैंने कहा- "ऐसा लग रहा है जैसे किसी ने भोंग खिला दी हो ।" यह भाव दो दिनों तक रहा फिर एक मंत्र दिया । बोले- "गुरु का दिया हुआ मंत्र है । इसी मंत्र से मेरी दीक्षा हुई थी । गुरु की प्रेरणा से वही मंत्र आपको दे दिया । यथाशक्ति इसका जप किया करें । बहुत सरल विधि है । श्वाँस पर ध्यान एकाग्र करके इसे करना है । श्वाँस लेते समय मंत्र का आधा भाग जपें । छोड़ते समय शेष भाग ।" कभी कभी वे अपने सामने बैठा कर ध्यान कराते थे । कभी कभी अनुभूतियों के विषय में पूछते थे और उनकी व्याख्या करते थे । कभी कभी कुछ निर्देश देते थे । प्रभु की कृपा और उनके आशीर्वाद से यह जप बहुत वर्षों तक चला ।

बनर्जी साहब माँ के कृपापात्र भक्त थे । वे प्रायः माँ की लीलाओं का वर्णन करते थे । सुन कर बड़ा अच्छा लगता था । माँ को देखने की बड़ी प्रबल इच्छा थी । लेकिन उस समय तक माँ के दर्शन नहीं हुए थे । घटना सम्भवतः सन् 1970 की है माँ विन्ध्याचल आश्रम में आयी हुई थीं । बनर्जी साहब को दिखायी नहीं पड़ता था । अतः उन्हें एक ऐसे आदमी की जरूरत पड़ती थी जो उनका हाथ पकड़ कर ले जा सके । इसलिये बहुत से महापुरुषों के दर्शन करने एवं उनके सत्संगों में भाग लेने का सौभाग्य हम लोगों को प्राप्त है । उस दिन वे बोले- "माँ आयी हैं । चलो दर्शन कर आवें ।" मेरी खुशी का ठिकाना न रहा । एक तो माँ का दर्शन लाभ और वह भी बनर्जी साहब के साथ हम लोग गये । माँ का कमरा आदमियों से भरा था । सब लोग चुपचाप माँ को एकटक देख रहे थे ।

मैंने देखा कि माँ श्वेत वस्त्र पहने पलंग पर बैठी हैं। मुख मण्डल अलौकिक आभा से चमक रहा था। वे मुस्करा रही थीं। वैसा रूप, वैसी विभूति मैंने नहीं देखी थी। मैं भौचक्का रह गया। इच्छा होती थी कि देखते ही जाओ, देखते ही जाओ। देखने से तृप्ति नहीं, होती थी। वह एक अद्भुत अनुभव था। माँ का वह रूप मेरे मन में बैठ गया। पहले तो मेरे पूजा घर में अन्य चित्रों के साथ माँ का चित्र भी आ गया। आगे चलकर केवल माँ का और गुरुदेव बनर्जी साहब के ही चित्र रह गये। जीवन में दुखों का बड़ा महत्त्व है। वह आदमी को जहाँ तोड़ देता है वहीं पर अपनी आग में जला कर कुन्दन भी बना देता है। रोग-शोक आदमी को उसकी अवकाशता बता देते हैं। धन, वैभव और जुगाड़ से सब कुछ पा लेने का विश्वास उस समय चूर-चूर हो जाता है जब हँसता-खेलता अपना बच्चा चट-पट चल बसता है और बड़ा से बड़ा डाक्टर रोग का निदान नहीं कर पाता। उस समय बड़ा से बड़ा नास्तिक भी अदृश्य, अनजान प्रभु के चरणों में झुक जाता है। उस समय उसे महापुरुषों की कृपा एवं आशीर्वाद का ही सहारा रह जाता है। वह उनकी शरण में जाता है उसका अहंकार गल जाता है। वह प्रार्थना करता है। उसकी प्रार्थना सुनी जाती है तो उसे बड़ी शान्ति मिलती है। उसका विश्वास दृढ़ होने लगता है। मेरे जीवन में भी ऐसी घटनाएँ घटी थीं। मुझे लगता था कि यदि कोई सम्बल न मिला तो मैं टूट जाऊँगा। उसी समय बनर्जी साहब मुझे लेकर माँ के यहाँ गये थे। माँ की कृपा मुझ पर बरस रही है। मुझे लगता है कि माँ की छाया मेरे साथ-साथ चल रही है। यह मेरा भ्रम भी हो सकता है। लेकिन मुझे ऐसा ही विश्वास है। इस विश्वास ने जाने या अनजाने मेरे में एक भावान्तर कर दिया। मैं गुरुदेव के मंत्र से जप शुरू करता लेकिन उधर से ध्यान हटते ही माँ के नाम का जप हो जाता 'माँ' के नाम का एकाक्षरी जप श्वाँस के साथ साथ चलने लगा। यह क्रम भी बहुत वर्षों से चल रहा है।

मुझे शास्त्रों का कोई ज्ञान नहीं है। बहुत तर्क-वितर्क में मेरी रुचि नहीं है। मेरा अपना विश्वास है कि जिस 'नाम' से शान्ति मिले वही उसका मंत्र है और जिसमें विश्वास हो वही उसका इष्ट है। अतः माँ को इष्ट मान कर मैं उन्हीं का नाम-जप करता हूँ। इससे मुझे बड़ी शान्ति मिलती है। यह बात भी एकदम सत्य है कि इसके लिये न तो किसी ने कहा न किसी ने रोका। एक बार माँ ने कहा था "इस शरीर के न चाहने पर कोई इसके पास आ नहीं सकता।" मेरा मन कहता है कि जिसके न चाहने पर कोई उसके पास पहुँच नहीं सकता तो क्या उसकी इच्छा के बिना कोई उसका नाम जप कर सकता है?

एक बार मेरे गुरुदेव ने कहा था—"तुम्हारे लिये मुझे एक बार और आना पड़ेगा।" अर्थात् मात्र मेरे लिये उन्हें एक बार पुनः जन्म लेना पड़ेगा। जब यह सोचता हूँ तो मेरा मन बड़ा उद्विग्न हो जाता है कि ऐसे समर्थ एवं कृपा सिन्धु गुरु के दिये गये मंत्र को छोड़ कर माँ का नाम जप कर रहा हूँ। शंका होती है कि मैं अपने गुरु और उनके मंत्र की अवज्ञा तो नहीं कर रहा हूँ? यह उलझन वर्षों से मेरे साथ लगी है। मेरे गुरुदेव शरीर में नहीं हैं कि उनसे पूछूँ। अतः जो भी महापुरुष मिलते हैं या मिले हैं उनके सम्मुख अपना प्रश्न रखा है और उन लोगों ने अपने ढंग से उत्तर भी दिया है।

(क्रमशः)

वाङ्माधुरी

बात 1959 अक्टूबर की है। माताजी कालकाजी स्थित नई दिल्ली के आश्रम में विराज रही हैं। एक पत्रकार विदेशी महिला जिन्होंने बाद में भारतीय नागरिकता ले ली थी वर्तमान समय में अपनी पाकिस्तान यात्रा पर जाते समय व्यग्रता से माताजी से कुछ प्रश्नों का समाधान पूछने आयी थीं, जो उसकी व्यग्रता के कारण थे।

पहला प्रश्न कर्म के न्याय पर था। उसकी जिज्ञासा थी बिना जाने यदि कोई काम किया जाता है तो उसका फल क्यों भोगना पड़ता है।

माताजी ने एक वृद्ध ब्राह्मण की कहानी सुनायी। महिला इस समय परेशान थी। वर्तमान समस्या गाय भैंस के वध के कारण। उन्होंने फ्रेंच भाषा में माताजी से इस सम्बन्ध में पूछा माताजी ने कहा, - सरकार जो करेगी भगवान् जो करायेँ।" इसी प्रकार का एक और प्रश्न पूछने पर मैं ने कहा, "भगवान् जो करायेँ।" इसी प्रकार का एक और प्रश्न पूछने पर मैं ने कहा, "भगवान् जाने। माताजी अक्सर इन विषयों में कुछ नहीं कहतीं। क्योंकि जब कोई वर्तमान सरकार से भी बलवती सरकार लोगों के नेतृत्व के लिये आयेगी वह भी इसी तरीके को अपनायेगी ऐसी बात नहीं है। यही जीवन की नीति है। इस समय इस सम्बन्ध में माताजी का कुछ कहने का ख्याल नहीं था। माताजी का कहना है। यदि वे कुछ कहती भी हैं तो भी लोग उस बात को स्वीकार करने में समर्थ नहीं होंगे। भगवान् कृत संकल्प नहीं हैं, यह सब उनकी ही सृष्टि है। यह सब उनके लिये केवल खेल का अभिनय मात्र है। पर जो घटना घटती हुई दीखती है उसे होना ही था यह भगवान् की मौन लीला है।

भगवान् ही सब करते हैं जो वे चाहते हैं जो भी इस विश्व ब्रह्माण्ड में हो रहा है उनका खेल मात्र है। इस ब्रह्माण्ड में कुछ भी उनसे अलग नहीं है, सभी क्रिया उनकी ही मर्जी से होती है। अतः भगवान् क्यों ऐसा करते हैं इस प्रकार का प्रश्न ही नहीं उठ सकता।

नई दिल्ली, कालकाजी, 17.1.59.

माताजी के दर्शन के लिये आये वढेरा परिवार के साथ सत्संग चल रहा है। माताजी - जमीन निकालते हैं। जमीन ले लेते हैं, घर निकालते हैं। घर ले लेते हैं। रहे तो नाक मुख लाल हो जायेगा। जलन होगी। अभी तो वानप्रस्थी का समय है। पिताजी की (पति की) सेवा करो। अगर और मगर - अगर मगर से मुश्किल होती है। जीव स्वभाव है, जीव चरित्र।

एक भक्त विविध रंगों की मोतियों से बनी एक प्लास्टिक की टोकरी लायी थीं। उसे देखकर माताजी ने हँसते हुए कहा, - कितना फैशन होता है, टेढ़ा मेढ़ा सीधी टोकरी कैसे ठीक होगी।"

1. पूर्व संख्या में इसका उल्लेख होने से यहाँ पुनरावृत्ति नहीं की गयी।

[माताजी के ये शब्द अत्यन्त गूढ़ तत्व पूर्ण हैं । फैशन, टेढ़ा मेढ़ा ये शब्द विषय प्रपंच की ओर इंगित करते हैं । सीधी टोकरी जीवात्मा को संकेत कराता है ।]

श्रीमती जीवन लाल जिनके पति अस्वस्थ हैं । माताजी उन्हें निर्देश देती हैं—"सेवा करो, सेवा करो, भगवान् का नाम सुनाओ ।"

नरेश - गुरु दो हो सकते हैं ?

माताजी - गुरु तो एक ही है, गुरुत्व प्रकाश करने का रास्ता बतलाने वाला, वही असली गुरु । जन्म से ही गुरु परम्परा शुरू हो जाती है । माता गुरु पिता गुरु शिक्षा गुरु इत्यादि । गुरु शक्ति जहाँ मिल गयी, जहाँ भर गया वहाँ गुरु । जहाँ गुरु शक्ति-पात होगा वहाँ कोई सवाल ही नहीं । ऐसे उपदेश के गुरु तो बहुत हो सकते हैं । कौन जाने आग में जाय सब जला दे ।

उपदेश गुरु तो बहुत लेकिन निष्ठा भंग नहीं होती । वही है इस रूप में । गुरु को देखा तो निष्ठा लेना, ग्रहण करने की कोशिश करो विचार से ।

गुरु कच्चा रहे तो भोग (भय) होता है । दीक्षा ले लिया । सत् गुरु माने - फिर और - अगर गुरु पर श्रद्धा हट जाये तो अच्छा नहीं, श्रद्धा बढ़नी चाहिये । एक खराब माने दूसरे को ले, वह खराब है, पर जो आगे को ले जा रहा है - गुरु तो एक ही है - वे ही मदद करके आगे ले जा रहे हैं । जैसे रसोई के क्षेत्र में होता है रसोइया बहुत है पर रसोई तो एक है । इसलिये बनाने का परिणाम तो बनाये । दृष्टि भेद से अलग-अलग ।

भगवान् ही क्रिया रूप में हैं - दुनिया की तरफ मत देखो । वह ही एक तरीका है - कर्म में अकर्म, और कर्म में भगवान् स्वयं भगवान् और कोई नहीं ।

*

*

*

कैलिफोर्निया के दम्पति टिहरी राज परिवार के साथ माताजी के दर्शनों को आये । महिला की माता अस्वस्थ हैं । उन्होंने माताजी से प्रसाद माँगा । माताजी ने उनको दो गुलाब दिये । उन्होंने माताजी से निवेदन किया माँ बनारस जायेंगी तो हवाई जहाज से जायें वे टिकट करा देंगी । माताजी ने कहा यदि स्वीकृत करें । माताजी ने कहा "वे एक दो बार हवाई जहाज से जा चुकी हैं ।"

महिला— एक ही व्यक्ति अपनी मानसिक शक्ति का प्रयोग कर सकता है, और मानसिक शक्ति का प्रयोग नहीं भी करता है । इन दोनों में प्रभेद क्या है ?

माताजी— यह दुनिया का काम जो इच्छा करे तो कर सकता है । है न दुनिया का ही ।

प्रश्न— यदि किसी का मन चला जाय । तब क्या वह खो जाता है ।

माताजी— वह भी एक होता है । कौन कार्य भोग से वह क्षय हो जाता है । भोग क्षय हो जाय तो त्राण हो जाता है ।

(क्रमशः)

महाराष्ट्र के संत—श्री गोरोबा कुम्हार

संकलक—श्री अशोक कुलकर्णी

सागर संचारी नौकाओं के मार्गदर्शन हेतु विभिन्न दीपस्तम्भों की योजना की जाती है। उसी प्रकार बिना सायास प्रवास करने वाले जीवों को मार्ग दिखाने के लिये असीम भगवत्कृपा से उनके अहैतुकी करुणावतार संत-महात्मा-जन हैं। दीपस्तम्भ तो अपनी जगह से ही मार्गदर्शन करते हैं, किन्तु ये महात्मा संसाररत जीवों के पास स्वयं जाकर उन्हें परमार्थ की ओर प्रोत्साहित करते हैं। भारतमाता ऐसे संतों की दिव्य माला से सदा विभूषित रही है। महाराष्ट्र भारतवर्ष का ही एक अंग है। इसलिये यहाँ की धरती से अनेक संत-रत्न प्रकट हुए हैं। महाराष्ट्र के होते हुए भी इनकी लीला तथा उपदेश सार्वजनीन और सार्वकालिक हैं। उन दिव्य विभूतियों में एक हैं संत श्री गोरोबा कुम्हार।

श्री गोरोबाजी वैसे तो संत श्री ज्ञानेश्वर, संत श्री नामदेव आदि के समकालीन हैं। किन्तु उनसे उम्र में कुछ वृद्ध हैं। इसलिये उनका उल्लेख "गोरोबा चाचा" नाम से महाराष्ट्र में किया जाता है।

अनंतलीलानटवर भगवान की "प्रतिज्ञा लीलाभूमि" पंढरपुर को भू-वैकुण्ठ माना जाता है। उसी के आसमंत (निकट) में "लेरढोक" ग्राम में ई. सं. १२३७ में श्री गोरोबाजी का जन्म हुआ। कुल में, परम्परा से विट्ठल भक्ति और साथ-साथ श्री शिवभक्ति भी दृढ़मूल थी। पंढरपुर के नजदीक होने से वहाँ सम्मिलित होनेवाले अनेक भक्त-महंत-संत-महात्मा वैष्णवों का दर्शन और सत्संग गोरोबाजी के पितामहादि बुजुर्गों को पीढ़ियों से मिलता आ रहा था। उन सबकी आंतरिक विट्ठलभक्ति ही श्री गोरोबाजी के रूप में घनीभूत होकर अवतीर्ण हुई थी।

श्री विट्ठल तथा श्री शिवजी के प्रति उनकी गहरी श्रद्धा तो थी ही, किन्तु बचपन में ही योगसाधना में उनका प्रवेश हुआ था। भगवन्नाम स्मरण में वृत्तियाँ लीन करके नित्य ऐहिक कर्मों में आनन्दानुभव करते हुए पारम्परिक कुम्भकार व्यवसाय में पिताजी का हाथ बँटाते थे। घर में धनदौलत नहीं थी, तथापि उदर निर्वाह सुचारुरूप से होता था। यथाकाल उनका विवाह इनके पिताश्री ने एक अनुरूप कुलकन्या (संती) के साथ कराया और इनका गृहस्थाश्रम प्रारम्भ हुआ। ब्राह्ममुहूर्त में उठकर, स्नानादि से निवृत्त होकर पवित्रतापूर्वक भगवत्पूजन-भजन-नामस्मरण कर फिर वृत्ति में जुट जाते थे। कीचड़ रौंदना, मिट्टी के बर्तन बनाना, उन्हें अग्नि में तपाना, विक्रय करना आदि वृत्ति उचित कार्य करते करते ही "वाणी गुणानुकथने श्रवणौ-कथायां" इस प्रकार श्री विट्ठल तन्मयता बनी रहती थी। जब इनके पिताश्री का अंतिम समय आया, गोरोबा को पास बुला कर कहते हैं, "तू तेरा प्रपंच अच्छे ढंग से कर रहा है। इस बूढ़े की एक बात मानना, विट्ठल नाम और पंढरी की वारी को (किसी दिन विशेष में) पंढरपुर जाकर श्री पांडुरंग का दर्शन करना। तुम्हारा सहारा बनाना।" मानो अंतिम क्षण में कुलपरम्परा प्राप्त वैभवराशि गोरोबाजी के हाथों में सौंपी।

पिताश्री के देहावसान के बाद अब गोरोबाजी अधिक अंतर्मुख बने । विठ्ठलभक्ति अत्यधिक गहरी बन गयी । भजन करते करते देह विस्मृति का अनुभव होने लगा । यथावकाश उन्हें पुत्रप्राप्ति हुई । संती अब फूली नहीं समाती थी । सिर्फ उसको प्यार जताते समय ही नहीं, उसे सुला कर गोरोबाजी का हाथ बटाते समय गृहस्थी में मग्न रहते समय, या पानी लाने के लिये नदी पर जाते समय भी दिनरात उसे अपने लाला की स्मृति बनी रहती थी ।

एक दिन की बात है । आँगन में रात में छानी हुई मिट्टी का ढेर लगा है । संती नदी से गागर से पानी लाकर मिट्टी में मिला रही है । गोरोबाजी पैर से कीचड़ रौंद रहे हैं । आँखें मुदी हैं । हृदय में श्री विठ्ठल भगवान का ध्यान जम गया है । हाथ से तालियाँ बज रही हैं । मुँह से अभंग संकीर्तन हो रहा है । धीरे-धीरे भजन का लय बढ़ता गया । अति द्रुत गति से, देहभाव भूलकर, चक्राकार घूमकर गा रहे हैं—

"केशवाचे भेटी लागले से पिसे विसरलो कैसे देहभावा"

(श्री केशवराज विठ्ठलजी के मिलन की आस ने मुझे बावरा बनाया है । मैं देहभाव भूल गया हूँ ।) कीर्तन जम गया है । धीरे-धीरे लय बढ़ता जा रहा है । इतने में घुटनों के बल रेंगता हुआ लाला नींद से जाग कर आँगन में आया । माँ को इधर उधर दृष्टि से ढूँढ़ रहा है । संती पानी लाने के लिये नदी की तरफ गयी है, इसलिये उसे नजर नहीं आ रही है । सामने पिताजी को देखकर रोता-रोता उनकी तरफ बढ़ रहा है । लेकिन बच्चे के रोने की आवाज गोरोबाजी के अंतरंग में नहीं पहुँच रही है । सब वृत्तियाँ 'विठ्ठलाकार' बनकर अंतरंग व्याप्त करके नृत्य कर रही हैं । मुँह से सिर्फ नाम धुन निकल रही है—"पांडुरंग, पांडुरंग, पांडुरंग...." पैर नर्तन कर रहे हैं—कीचड़ रौंदता जा रहा है । अब बालक रोता-रोता गोरोबाजी के पास आया । हाथ के बल एक पैर पकड़कर उठने की कोशिश कर रहा है । इतने में तेजी से दूसरा पैर नीचे आया । उसके तले बच्चा कीचड़ के साथ रौंदा गया । एक क्षण आर्त चीख गूँज उठी । सारी मिट्टी लहलुहान हो गयी । लेकिन गोरोबाजी के नृत्यमय नाम संकीर्तन में कुछ परिवर्तन नहीं है । बच्चे की पाँच भौतिक देह वहीं—कीचड़ में—अपने पिता के पैर तले मिट्टी के साथ मिल गयी ।

अब संती आ गयी । लाल खून से रंगी हुई मिट्टी देख कर चौंक गयी । पानी का घड़ा माथे से भूमि पर गिर गया । तेजी से दौड़ते-दौड़ते घर में घुस गयी । शय्या पर अपने लाला को नहीं पाया । फिर तेजी से आँगन में आयी । "मेरा लाला कहाँ है, कहाँ है.....पुकारती पुकारती गोरोबाजी के पास आयी । उनके पैर तले अपने पुत्र के वस्त्रादि अवशेषों को पहचान कर क्षणार्ध में चिल्लायी "मेरा लाल, ...मेरा लाल यह कैसा तुम्हारा कीर्तन....." विकल होकर संती भूमि पर गिर गयी । हाथ पैर पटक रही है । माथा धुन रही है । गोरोबाजी को कोस रही है । धरती को आँसुओं से नहला रही है । उसका विलाप सुनते-सुनते गोरोबाजी देहभान में आये । क्या घटा इसकी यथार्थ कल्पना उनके मन में जागी । लेकिन स्थितप्रज्ञ वृत्ति से संती की तरफ सान्त्वना के शब्द उच्चारते उच्चारते जा रहे हैं । उन्हें अपनी तरफ बढ़ते देखकर संती चिल्लाई—"तुम अपने पुत्र के खूनी हो । मेरे लाड़ले के हत्यारे ! आगे मत बढ़ो । मुझे छूना तक नहीं । तुम्हें तुम्हारे विठ्ठल

भगवान की कसम !" सुनते ही चौंककर गोरोबाजी स्तब्ध खड़े रहे । शोकार्त संती अपनी वाणी का अर्थ समझी नहीं । किन्तु भवितव्यता ही उसके मुँह से शब्दान्वित हुई । गोरोबाजी ने मन में ठान ली "मेरे विट्ठल भगवान की ही इच्छा है कि मैं अब संती को स्पर्श न करूँ ।" बिना किसी व्यग्रता उनका दिनक्रम पूर्ववत् प्रारम्भ हो गया ।

कुछ समय व्यतीत हो गया अब संती पुत्रशोक से थोड़ी बाहर आ गयी । अंतरंग में पुत्र शोक की अग्नि धधक रही थी । किन्तु बाह्यतः लोक व्यवहार धीरे-धीरे शुरू हुआ । अपने मृत पुत्र को नई देह से अपनी गोदी में सुलाने को वह लालायित हो उठी । गोरोबाजी के जीवन में परीक्षा का अध्याय शुरू हुआ । एक तरफ अपनी बेकसूर जीवन संगिनी का शोकार्त अनुनय और दूसरी तरफ विट्ठल भगवान के कसम की मर्यादा ! एक तरफ अपनी गलती का एहसास और दूसरी तरफ भक्त कर्तव्य की पाबंदी ! "क्या करूँ" समझ में नहीं आ रहा है । "किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः..." बड़े बड़े विद्वानों की मति मोहित करने वाली स्थिति उत्पन्न हुई । लेकिन महान विट्ठल भक्त गोरोबाजी अपनी स्थिति पर अभंग अचल रहे । गृहस्थी के सब व्यवहार पूर्ववत् शुरू हुए—सिर्फ संती को बिना स्पर्श करके !

अब संती पछताने लगी । एक तरफ पति की श्री विट्ठलचरण निष्ठा और हृदय में उमड़कर बहनेवाला वात्सल्य ! इन दोनों वास्तविकताओं को अंतरपट पर अंकित करके अपने ही नसीब को कोसने लगी । एकाएक एकदिन उसके मन में एक कल्पना चमक उठी । गोरोबाजी की अनुज्ञा से संती अपने मायके गयी । अपने पिताजी को देखते ही अंतरंग की सारी व्यथा आँखों से झारने लगी । उसकी पीठ पर हाथ फेरते फेरते पिताजी ने सब हाल जान लिया । फिर अत्यंत व्यथित भाव से बोले, "बेटी, प्रसंग बड़ा विलक्षण है । कुछ करने के लिये मन उछलता है, किन्तु कुछ सूझता नहीं । मैं विवश हूँ ।" भाट से संती बोली, "पिताजी, कुछ कर सकते हो आप ही ।" पिताजी ने कहा, "बेटी, कहो तो ! तेरे लिये मैं कुछ भी करने को तैयार हूँ ।"

"तो पिताजी, उनकी दूसरी शादी करा दो । उन्हें राजी करो । मेरी कोख तो अब सूनी ही रहेगी । लेकिन उनका वंश उजागर होना चाहिये । उसी वंश-दीपक को मैं अपने वात्सल्य का आश्रय बनाऊँगी ।" पिताजी राजी हो गये । तब धीरे से संती कहती है—"पिताजी, और कहूँ ? उनका दूसरा ब्याह मेरी छोटी बहन रामी से करा दोगे ?" चौंककर पिताजी कहते हैं, "बेटी, क्या कहती हो ? तेरी बहन को तेरी सौत बनाऊँ ? अशक्य ! सर्वथा अशक्य !" संती समझाती है—"पिताजी, अगर रामी मेरी सौत बन जायेगी तो मुझसे दुर्व्यवहार नहीं करेगी । उसकी संतान को मैं अपने वात्सल्य से नहला सकूँगी ।" आखिर पिताजी मान गये । उनका वचन गोरोबाजी टाल नहीं सके । यथाविधि रामी के साथ उनका दूसरा ब्याह हो गया । विदाई का समय आया । रुद्ध कंठ से पिताजी गोरोबाजी से कहते हैं—"जमाईबाबू, मैं जानता हूँ संती आपको बहुत प्रिय है । मेरे अनुरोध के कारण ही आप रामी से विवाह के लिये राजी हो गये । लेकिन संती की तरह रामी भी मेरे दिल का टुकड़ा है । आप उन दोनों में भेद नहीं करना । जैसा संती से वैसा ही रामी से व्यवहार करना । ऐसा मुझे वचन दो ।" इस आखिरी वाक्य से गोरोबाजी फिर चौंक उठे । मन ही मन कहने लगे "हे विट्ठल भगवान ! आपकी इच्छा पूर्ण हो ।"

दोनों पत्नियों के साथ वे लेरढोक ग्राम आये । संती को उन्होंने जाहिर किया, "मैंने तेरे पिताजी को वचन दिया है कि मैं जैसा तुझसे वैसा ही रामी से व्यवहार करूँ । इसलिये मैं उसे भी स्पर्श नहीं करूँगा । शायद विठ्ठल भगवान की यही इच्छा है ।" अब संती के माथे आसमान टूट पड़ा । वह आक्रोश करने लगी, "मैंने अपने हाथों से अपनी बहन का सर्वनाश किया ।" किन्तु रामी ने उसे बहुत धीरज दिया । दोनों बहनें पति सेवा में लग गयीं । कुछ दिन ऐसे ही बीते । संती मन ही मन रामी की कोख से अपने मृत लाला को फिर से पाने के लिये तरस रही थी । एकाएक उसके मन में एक कल्पना चमक उठी । रात में गोरोबाजी अपनी शय्या पर सो रहे हैं । संती रामी के साथ वहाँ पहुँची । धीरे से दोनों बहनें उनके अगल बगल सो गयीं । वात्सल्य की चरम सीमा ने संती को विस्मृत करा दिया कि गोरोबाजी की विठ्ठलचरण निष्ठा वज्रवत् दृढ़ है । वह सोचती है एक सामान्य चंचल की तरह पत्नी के सान्निध्य में वे अपना निश्चय सन्हाल नहीं पायेंगे । गोरोबाजी निद्रा में करवट बदल रहे थे कि उनके दोनों हाथों ने दोनों बहनों का स्पर्श किया । क्षणार्ध में सहस्र बिच्छूदंश समान पीड़ित होकर वे उठ गये और आक्रंदन करने लगे । "मैं कैसा अधम ! विठ्ठल चरणों के सौगंध की मर्यादा मैंने मिट्टी में मिला दी ।" कुछ निश्चय करके वे खड़े हो गये । एक तीक्ष्ण शस्त्र की धारा पर दोनों हाथ ऐसे पटक दिये कि दोनों हथेलियाँ कट गयीं । अलग होकर दूर जा गिरीं । अब शान्त होकर कहते हैं, "विठ्ठल भगवान जिन हथेलियों ने अनजाने में आपके सौगन्ध की मर्यादा मिटायी उन्हें देह से अलग कर दिया । अब तो प्रायश्चित्त हो गया न ? अब तो क्षमा करोगे न ?"

संती अब पूरी तरह विह्वल हो गयी । अपनी प्रत्येक कृति से अपने और दूसरों के दुःख का निमित्त बन गयी इस बात का शल्य उसके हृदय में चुभने लगा । उसने निश्चय किया "अब मेरे पतिदेव जिस विठ्ठल भगवान के नाम में मस्त हैं उन्हीं को ही जीवन का आसरा बनाऊँगी ।" अब आषाढ़ महीने की एकादशी नजदीक आयी । प्रतिवर्ष की तरह संती गोरोबाजी के पंढरपुर प्रस्थान की तैयारी करने लगी । उसके मन में तीव्र अभिलाषा जागी, "मैं भी पंढरपुर जाऊँगी । विठ्ठल भगवान का दर्शन करूँगी ।" लेकिन पति से कहने का धीरज नहीं हो रहा था । आर्त होकर भगवान की प्रार्थना मन ही मन कर रही है । अचानक गोरोबाजी बोल उठे—"संती कल एकादशी है । मैं पांडुरंग दर्शनार्थ पंढरपुर जाऊँगा । क्या तू भी साथ आयेगी ?" इन शब्दों से संती के सर्वांग में विद्युत् लहर दौड़ गयी । वह नखशिखांत सिहर उठी । आँख में आँसू भर आये । यह दशा देखकर गोरोबाजी ने उसकी 'मूक सम्मति' जान ली ।

अब संती और रामी के साथ गोरोबाजी पंढरपुर चले । गोरोबाजी मन ही मन संती का भाव देखकर सोच रहे हैं—"मेरे ही घर का यह घट कच्चा था । पश्चात्ताप की अग्नि से अब पक गया है । अब भगवद् भक्ति-प्रेम-रस इसमें भर सकते हैं ।" गोरोबाजी मार्ग भ्रमण कर रहे हैं । संती के गले में वीणा रामी के हाथ में करताल ! विठ्ठल नाम की धुन गूँथकर गोरोबाजी गा रहे हैं । "ज्ञानो बा-तुकाराम" का उच्चारण करते-करते मार्ग भ्रमण करके पंढरपुर पहुँच गये । चंद्रभागा नदी में स्नान किया । भक्तवर पुंडलीकजी का दर्शन किया और श्री विठ्ठलमंदिर की ओर चले । मन्दिर में

श्री विठ्ठल दर्शन करके विभोर हो उठे । मूर्ति का आलिंगन करके नैनों से आँसू बहा रहे हैं । भक्त-भगवान मिलन का अपूर्व दृश्य अपलक दृष्टि से देख रही हैं 'संती' और 'रामी' । दर्शन के बाद तीनों गर्भगृह से बाहर आये ।

बाहर भक्तप्रवर श्री नामदेव महाराजजी का कीर्तन हो रहा था । उनके श्रीमुख से भगवद् भक्ति-गंगा अखण्ड प्रवाहित हो रही थी । उसी के अवगाहन में अन्य श्रोताओं के साथ तीनों शामिल हो गये । कीर्तन की चरम अवस्था में श्री नामदेव महाराज उच्च रव से भगवन्नामोच्चार कर रहे हैं "पांडुरंग-पांडुरंग-पांडुरंग....." और सब श्रोता तालियां बजा बजाकर उनका साथ दे रहे हैं । नामगान में तो गोरोबाजी शामिल हुए । लेकिन आज तक उन्हें अपनी कटी हुई हथेलियों का दुःख महसूस नहीं हुआ था । उन्हें तालियां बजाते हुए सब भक्तगण विकल दृष्टि से देख रहे हैं । मुख से "पांडुरंग, पांडुरंग,....." नाम का आर्तनाद निकल रहा है । धीरे-धीरे उनका देहभान नष्ट हुआ । आत्मविस्मृत होकर अन्यो की तरह बाहु ऊपर उठाकर तालियां बजाने के भाव में झूमने लगे । उन्हें देखने वाले अन्य भक्त तथा संती और रामी के मन में तीव्र विषाद की लहर चमक उठी । किन्तु दूसरे ही क्षण उस विषाद का पर्यवसान विस्मयानन्द में हुआ । भानरहित गोरोबाजी की हथेलियां ढूँठे हाथों में निकल आयी थीं । तालियाँ बज रही थीं । शरीर झूम रहा था । "पांडुरंग, पांडुरंग...." ध्वनि गूंज रही थी । श्री नामदेव महाराज भी विठ्ठल भगवान की यह अपूर्व करुणा देखकर स्तम्भित खड़े हो गये ।

आनन्दविभोर संती गर्भागार की तरफ दौड़ी । भावावेग से विठ्ठल भगवान के चरण दृढ़ता पूर्वक पकड़कर कह रही है, "भगवान, आपकी करुणा अपार है । आपकी अपराधी हथेलियाँ तो आपने पतिदेव को प्रदान कीं, लेकिन आपके नाम में तल्लीन होकर उनसे जो अपराध हुआ—मेरा बेकसूर लल्ला उनके चरणतले कुचला गया । क्या उस अपराध से आप इन्हें मुक्त नहीं करोगे ? क्या आपकी परीक्षा में कुछ और बाकी है ?"

आँखें बन्द कर आर्तस्वर से संती बार-बार इस बात को दुहरा रही है । इतने में उसने किसी का स्पर्श महसूस किया । आँखें खोलकर देखती है तो उसका लाला उसकी साड़ी खींच रहा है । भूख से "माँ माँ" पुकार रहा है । बेभान होकर संती ने उसे उठाया । गले लगाया । उसके सर्वांग चूमने लगी । अन्त में स्तनपान कराते कराते आत्मविस्मृत हो गयी । अब तक श्री गोरोबाजी श्री नामदेव महाराजजी और अन्य भक्तों के साथ गर्भागार में पहुँच चुके थे । यह दृश्य देखते ही अवाक् हो गये । भगवान की तरफ देखकर एक ही धुन गा रहे हैं "पांडुरंग-पांडुरंग-पांडुरंग....."



स्वामी विवेकानन्द की दृष्टि में—बुद्ध

प्रस्तुति—डॉ. प्रेम नारायण सोमानी

"भगवान बुद्ध मेरे इष्टदेव हैं—मेरे ईश्वर हैं। वे स्वयं ईश्वर थे, इस पर मेरा पूर्ण विश्वास है। बुद्ध उपदेश भगवान बुद्ध की प्रत्यक्ष अनुभूति पर स्थापित है। उन्होंने सत्य का अनुभव किया और उसी का उन्होंने प्रचार किया।"

जिस समय बुद्ध ने जन्म लिया, भारत को एक महान आध्यात्मिक नेता की आवश्यकता थी। पुरोहितों का एक प्रबल संगठन यहाँ पहले से ही मौजूद था जो जनता को अज्ञान में रखते और उनके मन को अन्ध विश्वासों से भरते रहते थे। पुरोहितों द्वारा निर्दिष्ट पूजा उपासना पद्धतियाँ केवल ऐसी साधना भर थीं, जिनके द्वारा वे जनता पर अपना प्रभुत्व जमाये रख सकते थे। पुरोहित यह विश्वास करते हैं कि एक ईश्वर है और उसके समीप पहुँच सकना, जा सकना केवल उन्हीं के माध्यम से हो सकता है। इसके लिये उन्हें दक्षिणा दो, उनकी पूजा करो और अपना सर्वस्व उनके हाथों में रख दो। पुरोहितों की यह प्रवृत्ति शक्ति की दारुण प्यास, यह बाघ जैसी प्यास बारम्बार सर्वत्र प्रकट होती रही है। पुरोहित तुम्हारे ऊपर अपना आधिपत्य जमाते हैं और तुम्हारे लिये हजारों नियमों की व्यवस्था करते हैं। सरल सत्यों का वर्णन पेंचीदा ढंग से करते हैं। स्वयं अपने पद की श्रेष्ठता के लिये तुमको कथायें सुनाते हैं। यदि तुम इस जीवन में फलना-फूलना या मृत्यु के उपरान्त स्वर्ग जाना चाहते हो तो तुमको उन्हीं के हाथों पार होना होगा। तुमको उनके बताये तरह-तरह के अनुष्ठान करने पड़ते हैं। इन सबने जीवन को इतना जटिल बना दिया है और मस्तिष्क को इतना भ्रान्त कर दिया है कि यदि मैं सीधे सादे शब्द प्रदान करूँ तो तुम असन्तुष्ट ही लौटोगे। उन पुरोहितों द्वारा प्रदत्त नशे को पीकर तुम पूर्णरूपेण जड़ बुद्धि हो चुके हो। जितना कम तुम समझ पाते हो उतना ही अच्छा अनुभव करते हो। समय-समय पर पैगम्बर, मनीषी होते ही रहे हैं जो पुरोहितों और उनके अन्धविश्वासों तथा षडयन्त्रों के विरुद्ध चेतावनियाँ देते रहे हैं, किन्तु जनता की विशाल राशि ने उन चेतावनियों पर ध्यान देना नहीं सीखा। इन चेतावनियों को समझने के लिये उसके पास सबल मस्तिष्क, निरर्थक विचारों से रहित निर्मल बुद्धि होनी ही चाहिये, उसे अपनी बुद्धि पर लगे अन्धविश्वासों की राशि की पपड़ी को भेदकर विशुद्ध सत्य पर पहुँचना ही चाहिये, तब ज्ञात होगा कि समस्त पूर्णता, सभी शक्तियाँ स्वयं उसके भीतर पहले से ही मौजूद हैं, वे उसको दूसरों द्वारा प्रदान की जाने वाली नहीं हैं। प्राचीन भारत के मनीषियों ने पुरोहितों के मार्ग का प्रत्याख्यान किया और शुद्ध सत्य की घोषणा की। उन्होंने पुरोहितों की शक्ति को ध्वस्त करने का प्रयास किया और थोड़ा सफल भी हुए। परन्तु दो ही पीढ़ियों में उनके शिष्य पुनः अन्धविश्वासों में व पुरोहितों के पेचीदे रास्तों में वापस चले गये और स्वयं पुरोहित बन गये।

तुम आश्चर्य करते होगे कि आखिर पुरोहितों के इन चक्करदार तरीकों का होना क्यों जरूरी है । तुम सत्य के पास सीधे क्यों नहीं जा सकते ? क्या सत्य से तुम्हें शर्म लगती है, जिससे तुम्हें उसे सभी प्रकार के जटिल मन्त्रों और धार्मिक कृत्यों से छिपाना पड़ता है ? वे दो हजार स्वर्गों और दो हजार नरकों की बात करते हैं । यदि लोग उनके नुस्खे का सेवन करेंगे तो स्वर्ग जावेंगे और यदि वे उन नियमों का पालन नहीं करते तो नरक जावेंगे ।

लेकिन लोग सत्य से अवगत हो ही जावेंगे । कुछ लोग डरते हैं कि यदि सम्पूर्ण सत्य सबको दे दिया तो उससे उन्हें हानि पहुँचेगी । लेकिन सत्य के साथ समझौता करते रहने से जगत का विशेष लाभ तो हुआ नहीं । जैसा वह है उससे भी ज्यादा बुरा वह क्या होगा ? सत्य को प्रकाशित करो । यदि वह वास्तविक है तो कल्याण ही करेगा जब लोग इसका विरोध करते हैं और अन्य तरीके प्रस्तावित करते हैं तो वे केवल जादू टोने का ही मण्डन करते हैं ।

बुद्ध के समय में भारत उससे परिपूर्ण था । जन राशियाँ थीं और उन्हें समस्त ज्ञान से वंचित कर दिया गया था । यदि वेदों का एक शब्द भी किसी मनुष्य के कान में पड़ जाता तो उसे भी दण्ड दिया जाता था । पुरोहितों ने वेदों को एक रहस्य बना रखा था—उन वेदों को जिनमें आध्यात्मिक सत्य संचित है । अन्ततः एक व्यक्ति इसे और अधिक सहन नहीं कर सका । उसके पास अभीष्ट मस्तिष्क, अभीष्ट शक्ति और अभीष्ट हृदय, विस्तीर्ण आकाश जैसा असीम हृदय था । उसने देखा कि जनता का नेतृत्व पुरोहित लोग किस प्रकार कर रहे हैं तथा किस प्रकार वे अपनी शक्ति में गौरव का अनुभव कर रहे हैं और उसने इस सम्बन्ध में कुछ करना चाहा । वह किसी पर अपना शक्तिपूर्ण अधिकार नहीं चाहता था । वह मनुष्यों के मानसिक और आध्यात्मिक पाशों को तोड़ डालना चाहता था । इस व्यक्ति ने बन्धनों को तोड़ फेंकने वाले उपायों को खोज निकाला था । उसने जान लिया था कि मनुष्य दुःख से क्यों पीड़ित होता है और उसने दुःख से निवृत्त होने का मार्ग ढूँढ निकाला और जीवन भर बिना किसी भेदभाव के हर किसी को उस मार्ग का उपदेश दिया और सम्बोधि प्राप्त करने के लिये उन्हें प्रेरित किया ।

बुद्ध भारत में पुरोहितों और मनीषियों के मध्य चलने वाले संघर्ष में विजय स्वरूप थे । इन भारतीय पुरोहितों के सम्बन्ध में एक बात कही जा सकती है वे धर्म के प्रति असहिष्णु कभी नहीं रहे, न हैं, उन्होंने धर्म पर कभी अत्याचार नहीं किया । कोई भी उनके विरुद्ध प्रचार कर सकता था । उन्होंने धार्मिक विचारों के कारण किसी को नहीं सताया । किन्तु सभी पुरोहित की शक्ति की आकांक्षा से आक्रान्त थे इसीलिये उन्होंने भी नियम तथा विधि विधान जारी किये और धर्म को अनावश्यक रूप से जटिल बना दिया, जिससे उन्होंने अपने धर्म अनुयायियों से धर्म के विषय में सोचने का अधिकार भी छीन लिया ।

बुद्ध ने इन सब अपवृद्धियों को काट फेंका । उन्होंने परम दुर्घष सत्त्यों का उपदेश दिया । उन्होंने वेदों के सारांश और उस सारांश को कैसे अनुभूति पर उतारें इसकी ही शिक्षा बिना भेदभाव किये हर किसी को दी । उन्होंने उसका उपदेश सारे संसार के लिये दिया, क्योंकि मानव मात्र की समता उनके महान सन्देशों में से एक है । सब मनुष्य बराबर हैं । हर स्त्री-पुरुष को आध्यात्मिकता प्राप्त करने का समान अधिकार है । उन्होंने पुरोहितों तथा अन्य जातियों के मध्य

अन्तर का उन्मूलन कर दिया । निम्नतम लोग भी उच्चतम उपलब्धियों के अधिकारी हैं । उन्होंने निर्वाण के द्वार हर किसी के लिये खोल दिये ।

उनका धर्म सिद्धान्त यह था, हमारे जीवन में दुःख क्यों है ? इसलिये कि हम स्वार्थी हैं । हम अपने लिये वस्तुओं की कामना करते हैं—इसी कारण दुःख है । छुटकारा पाने का क्या मार्ग ? 'स्व' का परित्याग करना । 'स्व' की सत्ता नहीं है, प्रपंचात्मक जगत जिसे हम प्रत्यक्ष देखते हैं—उसकी सत्ता है । जन्म-मरण के चक्र के पीछे आत्मा नामक कोई वस्तु नहीं है । विज्ञान प्रवाह—एक विज्ञान दूसरे विज्ञान का उत्तरोत्तर अनुमयन करता रहता है, प्रत्येक विज्ञान एक ही क्षण में अस्तित्व प्राप्त करता है और अस्तित्व विहीन हो जाता है । विज्ञान का कोई विज्ञाता नहीं है । शरीर में सारे समय परिवर्तन होता रहता है—इसी प्रकार मन-चेतना में भी । अतएव 'स्व' एक भ्रम है । सारी स्वार्थपरता इस भ्रांतिजन्य 'स्व' को पकड़े रहने से उत्पन्न होती है । यदि हम इस सत्य को जान लें कि 'स्व' नहीं है तो हम स्वयं सुखी होंगे और दूसरों को भी सुखी बनायेंगे ।

उन्होंने कहा पशु बलि देना एक अन्धविश्वास है—ईश्वर और आत्मा और बड़े अन्धविश्वास हैं । ईश्वर पुरोहितों द्वारा आविष्कृत है । यदि जैसा पुरोहित शिक्षा देते हैं ईश्वर है, तो इस जगत में इतना दुःख क्यों है ? ठीक मेरे समान वह कार्य कारण नियम से आबद्ध है । यदि वह इस नियम का दास नहीं है तो वह सृष्टि क्यों रचता है ? ऐसा ईश्वर किंचित भी संतोषजनक नहीं है । शासक स्वर्ग में है, जो विश्व पर अपनी मन मौजी इच्छा से शासन करता है और हमें यहाँ दुःख में मरने के लिये छोड़ देता है—उसके पास एक क्षण को हम पर दृष्टि डालने तक की भलमनसाहत नहीं है । हमारा सारा जीवन अविच्छिन्न दुःख है । लेकिन इतना ही दण्ड काफी नहीं है, मृत्यु के बाद हमें ऐसे स्थानों को जाना है, जहाँ हमें दूसरे दण्ड प्राप्त होंगे । और फिर भी हम जगत के इस स्रष्टा को प्रसन्न करने के लिये तरह-तरह के विधि विधान और अनुष्ठान निरन्तर किया करते हैं । बुद्ध ने कहा है—ये सारे अनुष्ठान मिथ्या हैं । जगत में केवल एक ही आदर्श है सारे मोह को ध्वस्त कर दो । जो सत्य है वही बचेगा । किसी अन्धविश्वास के निमित्त कर्म न करो, न किसी ईश्वर को प्रसन्न करने के लिये, न कोई पुरस्कार पाने के लिये वरन इसलिये कर्म करो कि तुम आवागमन के चक्र से मुक्त हो जाओ ।

हिन्दू लोग अपने ईश्वर के सिवा सब कुछ छोड़ सकते हैं । ईश्वर को अस्वीकार करने का अर्थ है कि भक्ति के पैरों तले से धरती ही हटा देना । बुद्ध के उपदेश में न आत्मा है न परमात्मा, केवल कर्म है । कर्म के निमित्त कर्म करने वाले संसार में बहुत कम हैं । फिर भी बुद्ध के उपदेश बड़ी द्रुत गति से फैले । ऐसा, उस अद्भुत प्रेम के कारण हुआ जो मानवता के इतिहास में प्रथम बार एक विशाल हृदय से प्रवाहित हुआ और जिसने अपने को केवल मानव मात्र की ही नहीं, प्राणिमात्र की सेवा के लिये अर्पित कर दिया, ऐसा प्रेम जिसे जीवमात्र के लिये मुक्ति का एक मार्ग खोज निकालने के अतिरिक्त किसी अन्य बात की चिन्ता नहीं थी ।

मानव ईश्वर से तो प्रेम करता है लेकिन ईश्वर के नाम पर वह अपने बन्धु मानव की हत्या कर सकता है । लोग ईश्वर की महिमा के निमित्त पुत्र की बलि दे देते हैं, ईश्वर की महिमा के निमित्त राष्ट्रों को लूट लेते हैं, सहस्रों प्राणियों का वध कर डालते हैं और ईश्वर की महिमा के

निमित्त धरती को रक्त से सींच देते हैं। यह प्रथम अवसर था जब उन्होंने ईश्वर-मानव-की ओर देखा, वह मानव जिसे प्रेम किया जाना चाहिये। यह सत्य, ज्ञान एवं प्रेम की पहली लहर थी—जिसने भारत से निकलकर, दक्षिण उत्तर, पूर्व पश्चिम एक एक करके (न जाने कितने) देशों को आप्लावित कर डाला।

यह उपदेष्टा सत्य को भास्वर बनाना चाहता था। न पुरोहितों, शक्तिशालियों, राजाओं के प्रति कोई दया, न समझौता, न उनकी दुराचारिता का साधन बनना। न अन्धविश्वासी परम्पराओं के प्रति झुकना—वे कितनी ही प्राचीन क्यों न हों। न विधि विधानों और पुस्तकों के प्रति सिर्फ इसलिये आदर कि वे सुदूर अतीत से चली आ रही हैं। उसने सारे शास्त्रों को, धार्मिक क्रिया-कलाप के सभी रूपों को अस्वीकार कर दिया। उसने उस भाषा संस्कृत तक को अस्वीकार कर दिया, जिसमें परम्परानुसार धर्म की शिक्षा भारत में दी जाया करती थी। उन्होंने सारे पुरोहिती सिद्धान्तों और आचारों को झाड़ फेंका और मनुष्य को स्वयं उसके पैरों पर खड़ा किया। तुम अपने लिये स्वयं ही सोचो, अपने लिये सत्य की खोज करो। बाल बुद्धि, दुर्बलमन, भीरु हृदय लोग सत्य को नहीं प्राप्त हो सकते। व्यक्ति का मन स्फटिकवत् निर्मल होना चाहिये, पूर्वाग्रहों से मुक्त और आकाश सदृश विस्तीर्ण होना चाहिये केवल तभी सत्य उसमें प्रकाशित हो सकता है।

ईसा से 600 वर्ष पूर्व, बुद्ध के जीवनकाल में भारतवासियों को अद्भुत शिक्षा मिला करती होगी। वे निश्चय ही मुक्तमन रहे होंगे। विशाल जन राशि ने उनका अनुगमन किया। राजाओं और रानियों ने अपने सिंहासन त्यागे। लोग उनकी शिक्षा का, जो इतनी क्रान्तिकारी थी, जो युगों से उनको पुरोहितों द्वारा मिलती रहने वाली शिक्षा से इतनी भिन्न थी, आदर कर सकें और अंगीकार कर सकें। उनकी बुद्धि असाधारण रूप से मुक्त और विशाल रही होगी।

वे जीवन में महान थे तो मृत्यु में भी महान थे। उन्होंने अपना अन्तिम भोजन चुन्दु नामक लोहार के घर किया। उन्होंने अपने शिष्यों से कहा कि तुम इस खाने को न खाना क्योंकि इसे खाकर देव भी जीवित नहीं रह सकते हैं किन्तु मैं अस्वीकार नहीं कर सकता। चुन्दु ने मेरे जीवन की सबसे बड़ी सेवाओं में एक मेरे प्रति की है—उसने मुझे मेरे शरीर से मुक्त कर दिया है। जब उन्होंने अपने एक शिष्य को रोता देखा तो उन्होंने उसकी भर्त्सना की और कहा "यह क्या ? मेरी सारी शिक्षाओं का फल यही है ? किसी मिथ्या बन्धन को न रहने दो, न मुझ पर निर्भरता को, न इस जाते हुए व्यक्तित्व के मिथ्या महिमा-मण्डन को। बुद्ध एक व्यक्ति नहीं है, वह एक सत्य की सिद्धि है। अपनी मुक्ति स्वयं ही निष्पन्न करो।" मरते समय भी एक व्यक्ति को धर्म का उपदेश दिया। मृत्यु के समय भी उन्होंने किसी विशिष्टता का दावा नहीं किया। संसार के समस्त शिक्षकों में वे ही एक ऐसे शिक्षक हैं जिन्होंने हमें स्वावलम्बी बनने की शिक्षा दी। जिन्होंने हमें अपनी मिथ्या आत्मा के पास ही नहीं वरन् ईश्वर कही जाने वाली या देवता कही जाने वाली अदृश्य सत्ताओं पर निर्भरता से भी मुक्त किया है। मुक्ति की इस भूमिका में जिसे वह निर्वाण कहते हैं, उसे सबको प्राप्त करना है और वह उपलब्धि ही मनुष्य की चरम निष्पत्ति है। धन्य हैं बुद्ध और उनकी शिक्षा जो प्रत्येक व्यक्ति अपनी अनुभूति पर उतार सकता है।

महाकुम्भ की वार्ता

गत अंक में "महाकुम्भ" का आयोजन चल रहा था। इस अंक में हम ३३७ वर्षों में आने वाले महाकुम्भ की कुछ उपलब्धियाँ वस्तुतः करने जा रहे हैं।

सदी का पहला कुम्भ है। "महाकुम्भ" तो है ही। पूरे विश्व की निगाहें इस महान् मेले पर टिकी हुई हैं। विशाल आयोजन हुआ है। गंगा का प्रवाह इस बार बदल चुका है। गंगा के उस पार झूँसी की विराट् वेला भूमि पर संत महंतों के असंख्य शिविर लगे हैं। शायद विरला ही कोई ऐसा आध्यात्मिक सम्प्रदाय होगा जिसका शिविर आज की इस वेला भूमि पर न लगा हो। सरकार ने सुरक्षा के लिये संगम तट की विशाल खुली जगह अपने अधिकार में रखी थी ताकि स्नानार्थियों को किसी प्रकार का कष्ट न हो। स्वतन्त्र भारत का यह पाँचवाँ महाकुम्भ था।

प्रायागराज से निकलने वाली "चण्डी" पत्रिका कुम्भ विशेषाङ्क के रूप में प्रस्तुत की गयी थी। उक्त पत्रिका में "कुम्भ" के इतिहास के विविध पहलुओं पर ध्यानाकर्षण किया गया है। उसी से ही कुछ अंश यहाँ पाठकों की जानकारी के लिये दिया जा रहा है।

"कुम्भ-पर्व की परम्परा"

"कुम्भ" पर्व की परम्परा कब से प्रारम्भ हुई, इसके सम्बन्ध में बहुत सी बातें सुनाई पड़ती हैं। कुछ लोग कहते हैं कि - भारतवर्ष के स्वर्णिम युग गुप्त साम्राज्य के समय 'कुम्भ' पर्वों के काल और स्थान निश्चित किये गये। कुछ कहते हैं कि कुम्भ पर्व का सूत्रपात सम्राट् हर्षवर्धन शिलादित्य के समय से हुआ और कुछ लोग कहते हैं कि जगद्गुरु भगवान् आदि शङ्कराचार्य के द्वारा 'कुम्भ' पर्व प्रचलित हुआ। वास्तव में ये सभी बातें पूर्ण सत्य नहीं हैं।

संक्षेप में 'कुम्भ'-पर्व की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। वेदों, पुराणों के विभिन्न सन्दर्भों से यह बात सहज ही स्पष्ट होती है। मूल रूप में 'कुम्भ' पर्व की परम्परा मनुष्य के द्वारा रत्न-ऐश्वर्य सुख-आरोग्य आत्म-ज्ञान-अमरत्व की इच्छा से जुड़ी हुई है। वेद, पुराण आदि प्राचीन भारतीय धर्म शास्त्र मनुष्य की इन इच्छाओं से सम्बन्धित ज्ञान-विज्ञान से भरे पड़े हैं।

सर्वश्रेष्ठ 'आत्म-ज्ञान' - 'अमरत्व' को समझाने या समझने के लिये ऋषियों ने कुम्भ रूपी सुन्दर प्रतीक को हमारे सम्मुख रखा है। उदाहरण के रूप में निम्नलिखित श्लोक देखिए-

अन्तः शून्यो बहिः शून्यः, शून्यः 'कुम्भ' इवाम्बरे ।

अन्तः पूर्णो बहिः पूर्णः, 'पूर्ण' कुम्भ इवार्णवे ॥

अर्थात् जिस प्रकार एक खाली 'कुम्भ' आकाश में पड़ा हो तो उसके भीतर तथा बाहर सर्वत्र आकाश ही रहता है तथा जल से भरा कुम्भ समुद्र में डूबा हो, तो उसके भीतर और बाहर सर्वत्र जल ही रहता है। उसी प्रकार इस जगत् में सर्वत्र तथा इसके बाहर भी सर्वश्रेष्ठ 'आत्मा' ही है।

स्पष्ट है कि 'कुम्भ' पर्व- आत्मा, आत्म ज्ञान जैसी सर्वश्रेष्ठ प्राप्ति से जुड़ा है।

यह 'चण्डी' पत्रिका के अनुसार कुम्भ पर्व की महिमा । मानस की पंक्तियाँ भी यही गाती हैं ।

"भरद्वाज मुनि बसहिं प्रयागा । तिन्हहिं राम पद अति अनुरागा ॥
तापस सम दम दया निधाना । परमारथ पथ-परम सुजाना ॥
माघ मकरगत रबि जब होई । तीरथ पतिहिं आब सब कोई ॥
देव दनुज किंनर नर श्रेनी । सादर मज्जहिं सकल त्रिवेनी ॥
पूजहिं माधव पद जल जाता । परसि अखय बटु हरषहिं गाता ॥
भरद्वाज आश्रम अति पावन । परम रम्य मुनिवर मन भावन ॥
तहाँ होइ मुनि रिषय समाजा । जाहिं जे मज्जन तीरथ राजा ॥
मज्जहिं प्रात समेत उछाहा । कहहिं परस्पर हरि गुन गाहा ॥

दोहा- ब्रह्म निरूपण धरम विधि, बरनहिं तत्व बिभाग ।

कहहिं भगति भगवन्त कै, संजुत ग्यान बिराग ॥

सत्संग-आत्मतत्व का अनुसन्धान कुम्भ पर्व का मुख्य लक्ष्य प्रमाणित होता है । श्री श्री माँ को हम १९२७ से कुम्भ के साथ सम्बन्धित देखते हैं । सन् १९२७ में सुदूर बंगाल से श्री श्री माँ हरिद्वार पूर्ण कुम्भ के दर्शनार्थ बाबा भोलानाथ के साथ आयी थीं । साथ में नानीजी, नानाजी, दीदी गुरुप्रिया एवं स्वामी अखण्डानन्दजी भी थे । सन् १९३८ के महाकुम्भ हरिद्वार में भी श्री श्री माँ को हम देखते हैं बाबा भोलानाथ जी का पूर्ण संन्यास भाव यहाँ प्रकट होता है । इलाहाबाद के अर्द्धकुम्भ में श्री श्री माँ का त्रिवेणी संगम में स्नान का उल्लेख मिलता है । जहाँ पर गंगा, यमुना, सरस्वती इन तीन देवियों को माँ ने प्रकट स्वरूप में देखा था । इलाहाबाद एवं हरिद्वार का शायद ही कोई कुम्भ पर्व ऐसा हो जिसमें श्री श्री माँ की उपस्थिति न रही हो । हो भी क्यों नहीं माँ की करुणा "मानव जन्म की सफलता" की ओर प्रवाहित हुई । "हरि कथा ही कथा और सब वृथा व्यथा" "सत्यानुसन्धान ही मानव मात्र का कर्तव्य" । इन सब महनीय वाणी की सार्थकता का एकमात्र स्थान है सत्संग । माँ के चरण प्रान्त में उपस्थित साधक जनों को अनुकूल परिवेश मिले । अतः सत्संग की अनुकूल भूमि प्रयाग क्षेत्र में भक्तों के आग्रह से माँ के शिविर का भी आयोजन किया जाता था यह परम्परा अभी तक माँ की ही अहैतुकी कृपा से चली आ रही है । इसका प्रत्यक्ष दृष्टान्त सम्प्रति महाकुम्भ में देखने को मिला ।

पौष का शुक्ल पक्ष प्रारम्भ हो चुका था । ९ जनवरी २००१ पौष पूर्णिमा में महाकुम्भ का पहला स्नान होने वाला था । संयोग से चन्द्रग्रहण का योग भी उपस्थित हो गया था । इसी पूर्णिमा पर तीर्थराज की वेला भूमि विचित्र वितानों से विविध शिविरों से अलंकृत हो रही थी । जनवरी का प्रथम सप्ताह प्रारम्भ हो चुका था । सभी के शिविरों की आधी संरचना को पूर्णता का रूप देने के लिये जोर शोर से तैयारी हो रही थी । श्री श्री माँ आनन्दमयी संघ का शिविर इस बार अपनी पुरानी जगह से हट कर गंगा की वेला भूमि पर शंकराचार्य मार्ग पर बना था । शास्त्री पुल तथा

रेलवे पुल के बीच की जगह पर यह शिविर था । जो ६ नम्बर सेक्टर के अन्तर्गत आता था । गंगा प्रवाह परिवर्तित होने के कारण सरकार को भारी संख्या में पाल्टून पुलों की व्यवस्था करनी पड़ी थी । मेला क्षेत्र में १० से अधिक पुल संख्या थी । शंकराचार्य मार्ग पर आने के लिये ८ नम्बर पुल का प्रयोग करना पड़ता था ।

श्री श्री माँ के शिविर के विपरीत श्रीमद् भक्तिवेदान्त स्वामी का "इन्टरनेशनल श्री कृष्ण कॉन्शसनेस (इस्कॉन) वालों का शिविर था जिसकी सजावट अभी हो रही थी । शंकराचार्य मार्ग पर सभी शंकराचार्यों के शिविर थे जिनकी द्वार सज्जा देखते ही बनती थी । श्री रामकृष्ण मिशन भी थोड़ी ही दूर पर था । माँ के आश्रम के बायीं ओर श्री योगानन्द परमहंस जी का शिविर था । वैद्युतिकी सजावट एवं प्रासादोपम द्वार सज्जा आकर्षणीय थी । श्री श्री माँ का शिविर पारम्परिक ढंग से बना था । माँ के निमित्त एक फूस की कुटिया थी । जिसका भीतरी भाग हाथ की बनाई हुई पारम्परिक चटाइयों से ढका हुआ था । ऊपर जरी से कारुकार्य किया चन्दोवा टाँगा गया था जिस पर बड़े-बड़े अक्षरों में "सत्यम् ज्ञानम् अनन्तम् ब्रह्म" के दिव्य महा मन्त्र से लिखे गये थे । पूरे में जरी के सितारे लगे थे । दक्षिणाभिमुख और पूर्वाभिमुख दो दरवाजे थे जिन पर चटाई के ही पर्दे लगे थे । कुटिया के सामने का प्रायः दो फुट स्थान बाँस की जाली से घिरा था । जिनमें फूल के गमले लगाये थे । मुख्य द्वार से प्रवेश करते ही बायीं ओर सत्संग का पण्डाल था जो कि कुटिया के दक्षिण द्वार के सामने था । मुख्यद्वार के भीतर बायीं ओर श्री श्री माँ के चित्र पुस्तक आदि के क्रय विक्रय का स्थान था । मुख्यद्वार से सीधे मार्ग भोजनागार को जाता था । मार्ग के दोनों ओर आश्रम के साधुओं की कुटिया, तम्बू, इत्यादि लगे थे जहाँ विधि अनुसार स्त्री एवं पुरुषों की पृथक् व्यवस्था थी । आश्रम की ब्रह्मचारिणियों के रहने की पृथक् व्यवस्था थी । गृहस्थ भक्तों के आवास भी पृथक् थे । भोजनागार एक ही तरफ था । स्नानागार एवं शौचालय की भी पृथक् व्यवस्था थी ।

संघ के वरिष्ठ ब्रह्मचारी पानुदा के प्रयास से ८ दिसम्बर को शिविर के लिये स्थान स्वीकृति प्राप्त हुई । तदनन्तर कनखल से आये ब्रह्मचारी ज्योतिर्मयानन्दजी, पूना के योगेन भाई एवं निष्काम सेवाधर्म परायण ब्रह्मचारी सुबोध भाई ने एकमाह से भी अधिक समय उस ठिठुरती ठंड में खुले आसमान के नीचे चुभती हुई बालुका राशि पर रहकर श्री श्री माँ के शिविर को वर्तमान सुविधा पूर्ण वासोपयोगी रूप प्रदान किया । प्रायः एकमाह पूर्व से ही ब्रह्मचारी पानुदा द्वारा वाराणसी से प्रतिसप्ताह या सप्ताह में एकाधिक बार आकर व्यवस्था की परिचालना नियमित रूप से होती रही । इसके साथ ही इलाहाबाद के महानुभाव सज्जन श्री भगवान् अग्रवाल जी का सपरिवार निःस्वार्थ भाव से अन्नपूर्णा भण्डार का पूरा सहयोग अतुलनीय था ।

पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि पौषपूर्णिमा पर पहला स्नान है । अतः धीरे-धीरे सभी शिविरों में शोभायात्रा द्वारा कुम्भ प्रवेश प्रारम्भ हो चुका था । कुम्भ प्रवेश का अर्थ है प्रयाग- राज स्थित अखाड़ों से सभी आचार्य, महामण्डलेश्वर महन्त गण गाजे बाजों के साथ अपने शिविर में प्रवेश करते हैं । इसके पहले श्री श्री माँ की उपस्थिति के समय से ही महानिर्वाणी अखाड़े के आमन्त्रण पर उनके साथ ही शोभा यात्रा द्वारा श्री श्री माँ का शिविर में प्रवेश होता था । गतवर्ष

की गड़बड़ी के कारण यह परम्परा इस वर्ष नहीं रखी गयी। पर अखाड़ों के प्रवेश के दिन आश्रम की ओर से साधु ब्रह्मचारियों ने जाकर अलग-अलग रूप से उनका स्वागत किया तथा माँ के आश्रम में आयोजित भण्डारों में पधारने के लिये उनसे निवेदन किया।

श्री श्री माँ के कुम्भ प्रवेश का दिन उपस्थित हो गया। ७ जनवरी को शुभ मुहूर्त में श्री श्री माँ का चित्र, एवं पद्मनाभ जी के विग्रह के साथ वेद मन्त्रोच्चारण, शंख, घन्टा घड़ियाल की मंगलध्वनि के बीच नवनिर्मित कुटिया में प्रवेश हुआ। श्री श्री माँ के चित्र को दुग्ध धवल शय्या पर विराजमान किया गया। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो श्री श्री माँ साक्षात् विराजमान हैं। इस अवसर पर विन्ध्याचल से स्वामी भास्करानन्दजी पधारे थे। स्वामी निर्गुणानन्दजी भी उपस्थित थे। कनखल से ब्रह्मचारिणी मैत्रेयी जी एवं पूर्णानन्द जी (शान्ताजी) कुम्भ स्नान के उद्देश्य से आयी थीं।

इस अवसर पर इलाहाबाद के पूर्व मुख्य न्यायाधीश श्री अमिताभ बनर्जी एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मञ्जु बनर्जी उपस्थित थे। इस एक माह के प्रयाग तट कुम्भ क्षेत्र के समारोह में बनर्जी परिवार का सहयोग भी उल्लेखनीय था। श्री श्री माँ के प्रवेश के उपरान्त विधिवत् पूजन एवम् आरती सम्पन्न हुई। वसन्त पञ्चमी तक का निश्चित कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ।

सायम् काल साढ़े चार बजे स्तव एवं रामायणगान के उपरान्त प्रायः साढ़े ६ तक सद्ग्रन्थ एवम् श्री श्री माँ के प्रसंगों पर आलोचना होती थी। तदुपरान्त सायम् आरती एवम् सन्ध्या कीर्तन के साथ रात्रि कार्यक्रम समाप्त होता था। प्रातः ५ बजे से उषा कीर्तन से प्रातः कालीन कार्यक्रम प्रारम्भ होता था। सात बजे प्रातः पूजन एवं आरती होती थी। १० बजे श्रीमद्भगवद्गीता, सप्तशती के एक अध्याय का नियमित पाठ होता था। तदुपरान्त ब्रह्मचारिणी गीता बनर्जी श्रीमद्भागवत की सुललित व्याख्या करती थीं। सायम् काल मातृ आलोचना की मुख्य वक्ता आप ही थीं।

९ जनवरी को पूर्णिमा थी। पूर्णानन्द जी के उद्योग से माँ की कुटिया में सत्यनारायण पूजा का आयोजन किया गया था। पद्मनाभ जी को भी वहाँ विराजमान किया गया। पूजा एवं कथा कनखल से आये ब्रह्मचारी सर्वानन्द जी ने की। स्वामी भास्करानन्द जी भी उपस्थित थे। आज से स्वामीजी मौनी अमावस्या पर्यन्त यहीं पर रहेंगे।

रात्रि १२ बजे के ग्रहण स्पर्श से प्रारम्भ होकर ग्रहण मुक्ति पर्यन्त रात्रि के अन्तिम प्रहर ३ बजे तक माँ की कुटिया में "हरेकृष्ण हरेकृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ॥" महामन्त्र का कीर्तन हुआ। प्रातः काल पवित्र त्रिवेणी संगम में स्नान के लिये सब चले।

आज १० जनवरी है। मकर संक्रान्ति के स्नान के लिये बाहर से भक्त जनों का आगमन प्रारम्भ हुआ। त्रिपुरा की राजधानी सुदूर अगरतला से, मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल से, आसपास के शहरों से आये भक्तजनों से माँ का शिविर जनाकीर्ण हो गया।

माँ की कुटिया के उत्तर की ओर भी पूस की दीवाल पर मन्दिरनुमा छोटा सा छाजन बनाया गया था, जहाँ पर श्री श्री माँ का मनोहर चित्र विराजित किया गया था। माँ के आश्रम शिविर में प्रवेश करते ही माँ के इस चित्र पर बरबस दृष्टि पड़ती थी। चित्र का आकर्षण सभी को दो मिनट तक सत्संग पण्डाल में मौन बैठने को बाध्य करता था।

१४ जनवरी मकर संक्रान्ति को आश्रम के ब्रह्मचारी ज्योतिर्मयानन्द जी की संन्यास-दीक्षा स्वामी भास्करानन्दजी से होने वाली थी अतः इस उपलक्ष्य में कनखल से श्री गोपाल शास्त्री आये थे । १३ ता. से ही अनुष्ठान का कार्य प्रारम्भ हो चुका था ।

१४ जनवरी को श्री पद्मनाभजी की विशेष पूजा एवं भोग की व्यवस्था होगी अतः उसकी तैयारी भी पूर्व दिन से हो रही थी । इस बीच निर्वाणी अखाड़े के महन्त श्री गिरिधर नारायण पुरीजी आकर आश्रम शिविर की सभी व्यवस्था देख गये थे ।

मकर संक्रान्ति के स्नान के दिन प्रातः ५ बजे तक सर्वसाधारण के लिये छूट रहेगी इसके बाद संगम के सभी रास्ते बन्द कर दिये जायेंगे । शाही स्नान के लिये यह सूचना प्राप्त हुई । भक्तों के स्नान की सुविधा के लिये महानिर्वाणी अखाड़े के शाही स्नान की शोभायात्रा के साथ उनके जाने की व्यवस्था की गयी । प्रातः चार बजे ही बाहर से आये भक्तगणों के साथ माँ नाम लिखा पताका एवं झंडा लेकर योगेन भाई एवं उपस्थित ब्रह्मचारीगण निर्वाण अखाड़े में चले गये । वहाँ माँ के नाम का संकीर्तन करते हुए वे शोभायात्रा में सम्मिलित हुए । इस अवसर पर कलकत्ते से श्री स्वपन गांगुली आये थे एवं अन्यान्य भक्त गण भी आये थे । आश्रम शिविर में इस दिन २०० से अधिक जन संख्या थी । माघ मकरगत रवि जब होई । तीरथपतिहिं आवै सब कोई ॥ ये पंक्तियाँ साकार हो उठी ।

मकर संक्रान्ति की पुण्यतिथि में गंगा एवं त्रिवेणी संगम स्नान से पवित्र होकर सबने श्री पद्मनाभ पूजन का आयोजन किया । नवीन संन्यासी ज्योतिर्मयानन्द जी ने श्री श्री माँ के चरणों में वस्त्र एवं चादर अर्पण किया ।

श्री पद्मनाभपूजन स्वामी श्री निर्गुणानन्दजी ने किया । पूजन के समय स्वामी भास्करानन्द जी उपस्थित थे । कुटिया के बाहर कीर्तनादि हो रहे थे । १२ बजे भोग आरती हुई । तदुपरान्त सबने प्रसाद पाया । पूजन के समय इलाहाबाद के स्थानीय भक्त जन भाग न ले सके कारण कि बाहरी वाहनों के आने में पाबन्दी लगा दी गयी थी ।

१५ जनवरी को ज्योतिर्मयानन्दजी के संन्यासोपलक्ष में भण्डारा आयोजित किया गया । इस अवसर पर महन्त श्री गिरिधर नारायण पुरी जी, (निर्वाणी अखाड़ा) भोलानन्द आश्रम के महामण्डलेश्वर श्री १००८ देवानन्द जी महाराज तथा अटल अखाड़े के आचार्य महामण्डलेश्वर श्री १००८ मंगलानन्दगिरिजी एवं अन्यान्य साधु महात्मा पधारे थे । पूज्य मंगलानन्द गिरिजी ने नूतन संन्यासग्रहण के सम्बन्ध में प्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा, "श्री श्री माँ साधु समाज का अत्यन्त आदर करती थीं । माँ के आदर्शों पर चलकर माँ के आश्रम की परम्परा को आगे बढ़ाने वाला यह कदम सराहनीय है । इस प्रकार भविष्य में भी यहाँ से साधु परम्परा का उदय होता रहे ऐसी हमारी शुभकामनाएँ हैं ।"

प्रवचनादि के उपरान्त महात्मागणों को आश्रम की परम्परा के अनुसार भोजन कराया गया । साथ ही वस्त्र, कम्बल एवं दक्षिणा आदि भेंट की गयी ।

१६ जनवरी को निर्वाणी अखाड़े के महात्माओं का भण्डारा था । १५० से अधिक महात्माओं के भोजन की व्यवस्था थी । ब्रह्मचारी पानुदा के निर्दर्शन में माँ की परम्परा के अनुसार सभी व्यवस्था की गयी थी । आचार्य महामण्डलेश्वर एवं महन्त सभी के आसनों की पृथग् व्यवस्था अखाड़े के नियमानुसार की गयी थी । प्रायः दस बजे से महात्माओं का आना प्रारम्भ हो चुका था । पहले आकर सब सत्संग पण्डाल में बिछाये गये आसनों पर विराजित हुए । श्री श्री माँ के प्रति किसी ने श्रद्धाञ्जलि, किसी ने वाक्य पुष्पाञ्जलि एवं किसी ने प्रणामाञ्जलि अर्पित की । तत्पश्चात् सबको भोजनालय की ओर ले जाया गया । वहाँ पर सबके यथा योग्य आसन ग्रहण करने पर माला चन्दन से सत्कार कर वस्त्र एवं दक्षिणा भेंट की गयी । भोजन परोसने के उपरान्त महात्मापण्डल की आरती उतारी गयी । तदुपरान्त मन्त्रोच्चारण सहित उन्होंने भोजन स्वीकार किया । साधु भण्डारा का सम्पूर्ण व्यय श्री राजेश पटेल द्वारा किया गया था ।

१७ जनवरी से मौनी अमावस्या के स्नानार्थ दूर-दूर से भक्तों का समागम होने लगा । आगरतला से श्री सुमंगल सेन सस्त्रीक आये । आप प्रवचनादि करते हैं । अतः सायम् काल से आप श्रीमद्भागवत व्याख्या बंगला में करते थे । चारों ओर से सत्संग की ध्वनि जबरन कानों में पड़ती थी । विशाल कुम्भक्षेत्र में विराट् रूप से सरकारी व्यवस्था थी । सफाई एवम् स्वच्छता पर विशेष ध्यान रखा गया था । चारों ओर सत्संग की बाढ़ सी आ गयी थी । रास्ते चलते राहगीरों को भी सत् चर्चा करते सुना जाता था ।

सन्ध्योपरान्त १८ जनवरी को योगदा आश्रम के स्वामी श्री निर्वाणानन्द जी एक शिष्य के साथ आये । माँ की कुटिया में बैठ कर उन्होंने थोड़ी देर तक ध्यान किया । जाते समय आपने कुटिया के सम्बन्ध में कहा "यहाँ का वातावरण साधनोपयुक्त बहुत ही सुन्दर है ।"

२० जनवरी को कैलास आश्रम के पीठाधीश्वर म. म. श्री १००८ स्वामी विद्यानन्दजी महाराज अन्यान्य महामण्डलेश्वर गणों के साथ पधारे । सभी के आसन ग्रहण करने के उपरान्त माँ के श्री शरीर के दर्शन जिन्होंने किये हैं ऐसे महात्माओं ने माँ के साथ के अपने अनुभव सुनाये । एक महात्मा ने सुनाया उत्तरकाशी के संस्कृत महाविद्यालय के संचालक श्री अद्वैतानन्द जी को साधन मार्ग में किसी कठिनाई के आने पर श्री श्री माँ ने उन्हें किस प्रकार मार्ग दर्शन कराया, यह कथा सुनायी । प्रवचनादि के अनन्तर सबने भोजन एवं भेंट स्वीकार की । इस दिन भण्डारा का सम्पूर्ण भार श्री भगवान् अग्रवालजी ने सहर्ष ग्रहण किया ।

२१ जनवरी को निरञ्जनी अखाड़े का विशेष भण्डारा था । आज शताधिक महात्माओं की व्यवस्था की गयी थी । आज देवघर के नरेन ब्रह्मचारी के शिष्य एवं जगन्नाथपुरी में ध्यान मन्दिर के प्रतिष्ठाता स्वामी श्री १०८ ब्रह्मानन्द जी महाराज मौनी अमावस्या स्नान के लिये सशिष्य पधारे । प्रातः दस बजे से साधुओं का आगमन प्रारम्भ हो गया । आचार्य महामण्डलेश्वर एवं महन्तों के पधारने पर प्रतिबार की भाँति सवस्त्र एवं दक्षिणा सहित भण्डारा सम्पन्न हुआ । आगरतला की भक्त श्रीमती दीपाली दत्त ने इस भण्डारा का सम्पूर्ण व्ययभार विशेष आग्रह से स्वयं ग्रहण किया ।

आश्रम शिविर का कार्यक्रम विधिवत् चलने लगा । स्वामी ब्रह्मानन्द जी का नित्य सत्संग प्रातः एवम् सायम् काल होता था ।

मकर संक्रान्ति की एक घटना का उल्लेख यहाँ करना अनुचित न होगा । मकर संक्रान्तिके स्नान के लिये उपस्थित जनों में अखण्ड रामायण करने की अभिलाषा जागी । १३ ता. को रामायण प्रारम्भ की गयी । शीत अधिक थी रात्रि जागरण के लोगों का अभाव था । भोपाल, बैरागढ़ आश्रम से आये बालकों ने रात्रि जागरण का दायित्व लिया । अखण्ड रामायण की उद्योक्ता भोपाल के ही पण्डित स्व. श्री त्रिगुनायकजी की धर्म पत्नी थीं । आप के साथ एक और महिला थीं जो कि रात के १२ बजे तक रामायण का सस्वर गान कर रही थीं । अब बैरागढ़ आश्रम के पुजारी पं. श्री अशोक शर्मा को करना था । इतने में एक २०-२१ वर्ष का युवक आया, उसने आश्रम शिविर के द्वार पर उपस्थित पूना के श्री योगेन भाई से पूछा, "क्या मैं रामायण पढ़ सकता हूँ ? श्री योगेन भाई ने कहा, रामायण गान में सबका स्वागत है । वह युवक अत्यन्त प्रसन्न हुआ कहने लगा — मैं खेती किसानी करता हूँ कल संक्रान्ति का स्नान करने आया हूँ । मैं रामायण पढ़ना बहुत पसन्द करता हूँ । मैं मेला क्षेत्र में घूम रहा था और सोच रहा था कहीं अखण्ड रामायण हो रही होगी तो मैं भाग लूँगा । रात्रि की निःस्तब्धता में यहाँ का स्वर मुझे सुनाई दिया मैं उसी अन्दाज से यथास्थान पहुँच गया । अब मुझे कुछ नहीं चाहिए मैं रामायण गान करूँगा । उस युवक ने १२ बजे से प्रातः ४ बजे तक मधुर स्वर से रामायण का सस्वर पाठ किया एवम् ५ बजे ही चला गया । यही है माँ की महिमा सभी की सद् इच्छा इसी प्रकार पूर्ण कराती हैं ।

२४ जनवरी को कुम्भ क्षेत्र का तिलार्द्ध स्थान भी खाली नहीं था । शाम के ३ बज कर १७ मिनट पर अमावस्या लग चुकी थी । दूरध्वनि यन्त्रों पर (माईक पर) पुलिस विभाग की ओर से स्नानार्थियों को अमावस्या स्नान प्रारम्भ करने के लिये कहा जा रहा था । साथ ही स्नान करके तुरन्त घाट को खाली करने का निर्देश देने के साथ-साथ आस पास के क्षेत्रों से आये नर नारियों को उनके गन्तव्य स्थान पर पहुँचाने वाली गाड़ियों का भी व्यौरा दे रहे थे ताकि लोग स्नान कर-कर के चलते बनें । मेला क्षेत्र में भीड़ न हो । जनता की अपार श्रद्धा थी । खुले में आसमान के नीचे शीत की परवाह न कर लोग सपरिवार उस पुण्य क्षण की प्रतीक्षा कर रहे थे, जिस क्षण में त्रिवेणी संगम में एक डुबकी लगा कर वे सभी दोषों से मुक्त हो जायेंगे । उनकी मनोकामनाएँ पूरी हो जायेंगी । आज ऊँच-नीच कुछ नहीं अधिकारी कर्मचारी एकाकार हो गये हैं । सभी का एक ही लक्ष्य है । धन्य है भारत आत्मा । धन्य है तीर्थराज । धन्य है माँ की वाणी "जन समुद्र का दर्शन करो" ।

हम लोगों में से कुछ लोग शाम को भी स्नान कर आये । त्रिवेणी संगम में तिलार्द्ध स्थान नहीं उसी में लोग नहाते जा रहे हैं पश्चिमाकाश लाल हो गया भगवान् भास्कर अस्त हो जा रहे हैं करोड़ों की भीड़ एकत्र हो रही है पर गगन निस्तब्ध । मानों भारत की आत्मा को देवगण एकटक देख रहे हैं । पुण्यकाल प्रारम्भ होने की सूचना पुनः पुनः दी जा रही है । हम लोगों को नहाकर एक अद्भुत आनन्द का अनुभव होने लगा ।

मकर संक्रान्ति के स्नान की भाँति अमावस्या के स्नान की भी व्यवस्था की गयी । भक्त गण एवं आश्रम के साधु ब्रह्मचारी गण निरञ्जनी अखाड़े की शाही शोभायात्रा के साथ स्नान करने गये । अपरम्पार भीड़ थी । श्री श्री माँ की अहैतुकी कृपा से स्नान करके सभी समस्वर से कीर्तन गाते गाते लौट आये । कीर्तन के पद थे "आनन्द कुम्भ जय, कुम्भजय ब्रह्म जय, ब्रह्ममय कुम्भ जल" ।

महाकुम्भ के मुख्य पर्व का स्नान सम्पन्न हुआ । जिधर देखो केवल विशाल जन समुद्र ।

उपस्थित भक्त गण विदा लेने लगे । स्वामी भास्करानन्द जी भी बड़ोदा की ओर रवाना हो गये । इस महाकुम्भ में भाग लिया था श्रीमती इन्दिरा सक्सेरिया ने भी । आप आश्रम के शिविर में ठहरी थीं । आपने अन्न भण्डार में विराट सहयोग प्रदान किया साथ ही आश्रम में उपस्थित आश्रम-वासियों कर्मचारियों सभी को कम्बल आदि प्रदान किया ।

२९ जनवरी को वसन्त पञ्चमी के दिन सरस्वती पूजा का आयोजन किया गया । सरस्वती प्रतिमा दो दिन पहले ही लायी गयी थी । श्री श्री माँ की कुटिया में ही पूजन की पूरी व्यवस्था की गयी थी । प्रातः काल त्रिवेणी स्नान करके सभी लोग पूजन कार्य में व्यस्त हो गये । पूजा के आसन पर कन्यापीठ की वरिष्ठ अध्यापिका ब्रह्मचारिणी गीता बनर्जी पूजा कर रही थीं । अध्यापिका ब्रह्मचारिणी सन्ध्या बनर्जी व्याकरणाचार्य, पूजा के मंत्र पाठ में सहयोग दे रही थीं । आगरतला से आयी श्रीमती आलपनाजी सुमधुर संगीत से परिवेश को भक्तिरसमय बना रही थीं । बीच-बीच में भजनानन्द जी के भजन भी सुने जाते थे । आज रामकृष्ण मिशन के साधुओं को भण्डारे के लिये निमन्त्रित किया गया था । प्रायः ग्यारह बजे मिशन के महाराजगण उपस्थित हो गये । आप ने पूजा में भी योगदान किया । पूजनोपरान्त स्वामीजी ने पुष्पाञ्जलि प्रदान की । तत्पश्चात् भोग एवं आरती हुई । हवन द्वारा पूजन की पूर्णाहुति हुई । श्री श्री माँ की अहैतुकी कृपा से महाकुम्भ का यह अंतिम पर्व निर्विघ्न समाप्त हुआ ।

३० जनवरी तक ही आश्रम के शिविर की व्यवस्था थी । अतः धीरे-धीरे लौटने की व्यवस्था होने लगी । महाकुम्भ का महानन्द सभी के मन प्राण में समा गया था । क्षण-क्षण में यह स्वर मन ही मन गूँज उठते थे -

"गंगा की वन्दना, यमुना की वन्दना, सरस्वती मैया तेरी

बारम्बार वन्दना ।

संगम की वन्दना, त्रिवेणी की वन्दना

हे तीर्थराज तेरी बारम्बार वन्दना

हे तीर्थराज तेरी बारम्बार वन्दना ।



आश्रम संवाद

9 भीमपुरा:-

पूज्य स्वामी श्री भास्करानन्दजी महाराज की उपस्थिति में गीता जयन्ती निमित्त दिनांक 4, 5, व 6 दिसम्बर को प्रतिदिन प्रातःकाल श्रीमद्भगवद्गीता के खण्ड पारायण एवं सायंकाल गीता पर प्रवचन हुए। दिनांक 7 दिसम्बर को गीता का सम्पूर्ण पारायण व तत्पश्चात् भगवान श्रीकृष्ण का एवं गीताजी के प्रत्येक अध्याय का पूजन सम्पन्न हुआ।

भीमपुरा आश्रम को श्री श्री सरस्वती पूजा के साथ विशेष लगाव रहा है। पूज्य माँ के सान्निध्य में आश्रम में तीन बार सरस्वती पूजन एवं हवन का आयोजन हुआ।

श्री संतराम मन्दिर, नाडियाद के महन्त परम पूज्य श्री नारायणदासजी महाराज की परमाराध्या श्री श्री माँ के प्रति विशेष श्रद्धा है। आश्रम में निर्मित श्री आनन्देश्वर महादेव के शिवालय की अर्पण विधि एवं प्रतिष्ठा विधि पूज्य महाराज श्री द्वारा दि. 29, 30 व 31 जनवरी को सम्पन्न हुई। मातृभक्त स्वर्गीय श्री रमेशभाई पटेल के परिवार की ओर से इस प्रतिष्ठा-उत्सव का सेवा सहयोग प्राप्त हुआ। दि. 31 जनवरी को श्री नर्मदा जयन्ती निमित्त विशेष पूजा सम्पन्न हुई।

26 जनवरी को गुजरात की प्रजा ने प्रकृति का भीषण स्वरूप प्रचण्ड भूकम्प के रूप में अनुभव किया। इस रौद्रे स्वरूप ने समस्त विश्व में करुण इतिहास का सर्जन किया। हजारों की संख्या में इसकी सन्तानें संसार छोड़कर अतीत को पहुँच गई। ऐसे ज्ञात-अज्ञात हजारों जीवों की आत्मा की सद्गति हेतु इस घटना के बारहवें दिन 6 फरवरी को आश्रम की ओर से चाँदोद में नर्मदा तट पर सामूहिक तर्पण-विधि रखी गई।

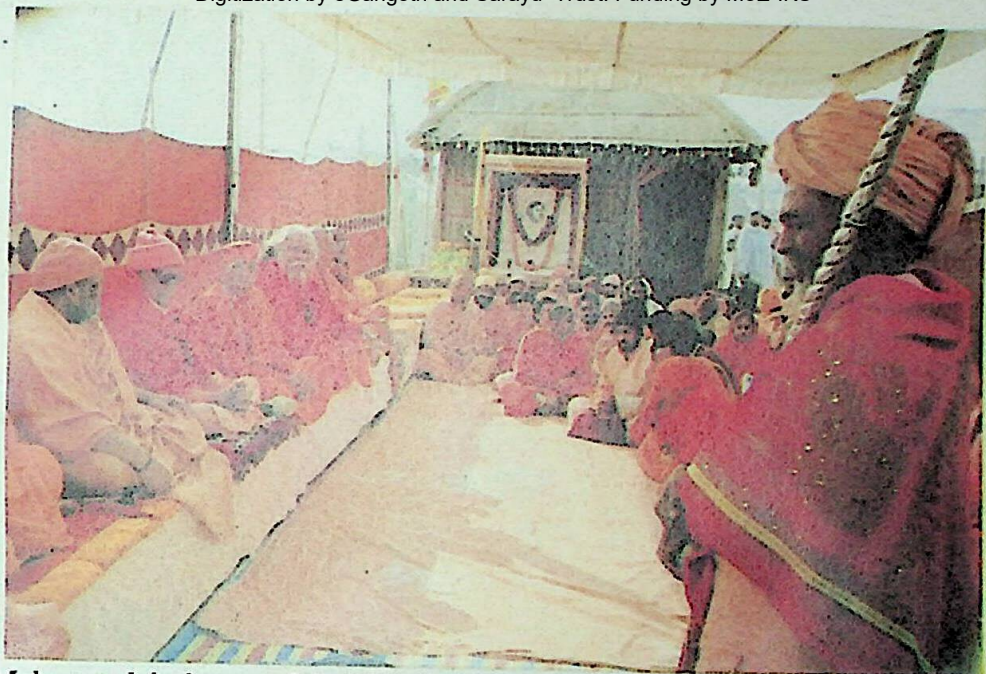
दि. 12 से 17 फरवरी तक आश्रम में संयम महाव्रत का अनुष्ठान हुआ। पूज्य माँ के आश्रम की परिपाटी का सम्पूर्णतया पालन करके व्रती भक्तों ने स्वामीजी की उपस्थिति में तपश्चर्या की। म. मं. स्वामी श्री दयानन्दजी महाराज तथा पूज्य स्वामी श्री हरिप्रसाद शास्त्रीजी ने उत्सव के समय आश्रम में निवास करके गीता का मर्म समझाया। रामचरितमानस पर प्रोफेसर रमणभाई तलाटी ने एक दिन अत्यन्त रसप्रद व्याख्यान दिया।

दि. 21 फरवरी को महाशिवरात्रि के मंगलमय दिन रोगियों की सेवार्थ आश्रम में "श्री श्री माँ आनन्दमयी चिकित्सालय" का उद्घाटन सबेरे 11 बजे पूज्य स्वामी भास्करानन्दजी के करकमलों द्वारा हुआ। चिकित्सालय में अवैतनिक सेवाकार्य का प्रारम्भ डॉ. कान्तिभाई शाह द्वारा किया गया।

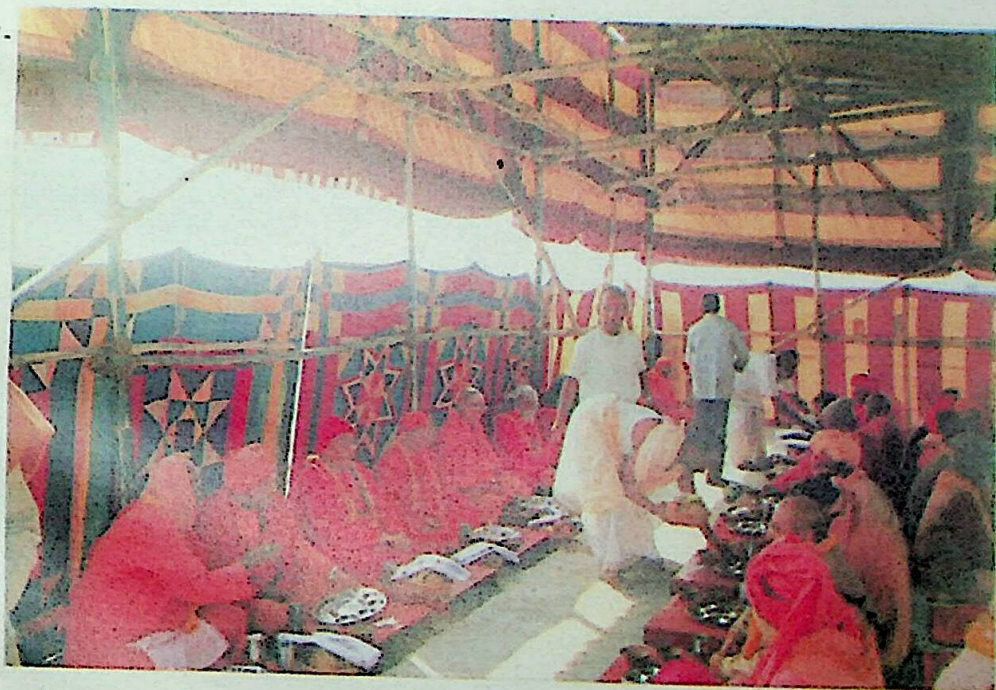
महाशिवरात्रि निमित्त रात्रि को भगवान शिवजी की चार प्रहर की पूजा सम्पन्न हुई, जिसमें लगभग 60 भक्तों ने शिवपूजा में भाग लिया।

आगामी उत्सवों की सूचना :

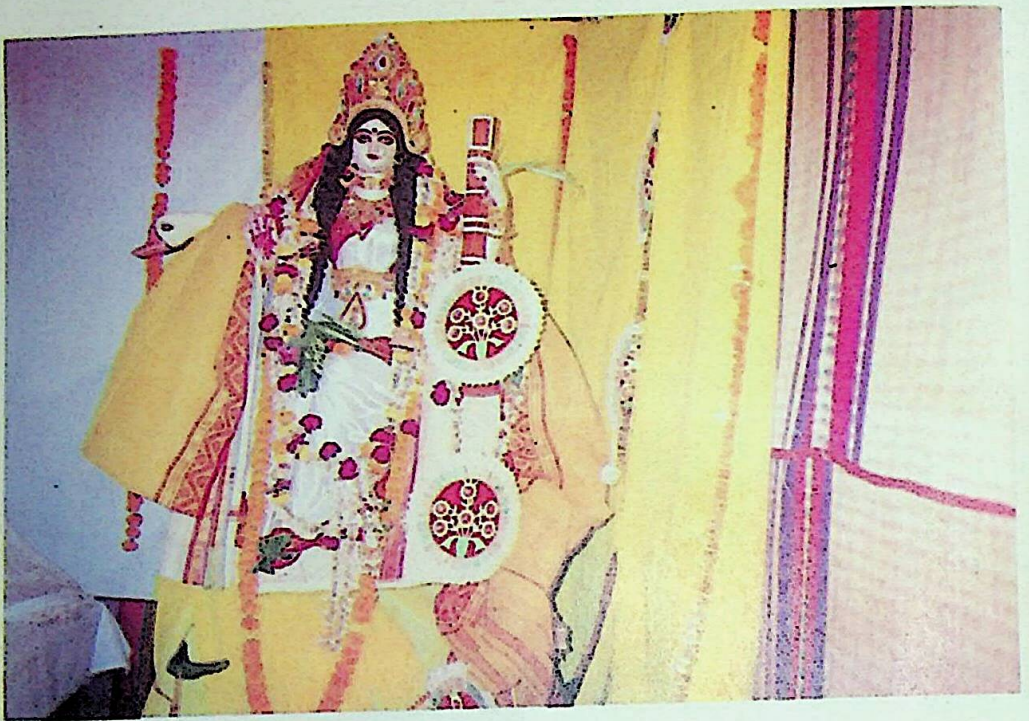
1. श्री श्री हनुमान जयन्ती पूजा : दि. 8-4-01 प्रातः 7 बजे।



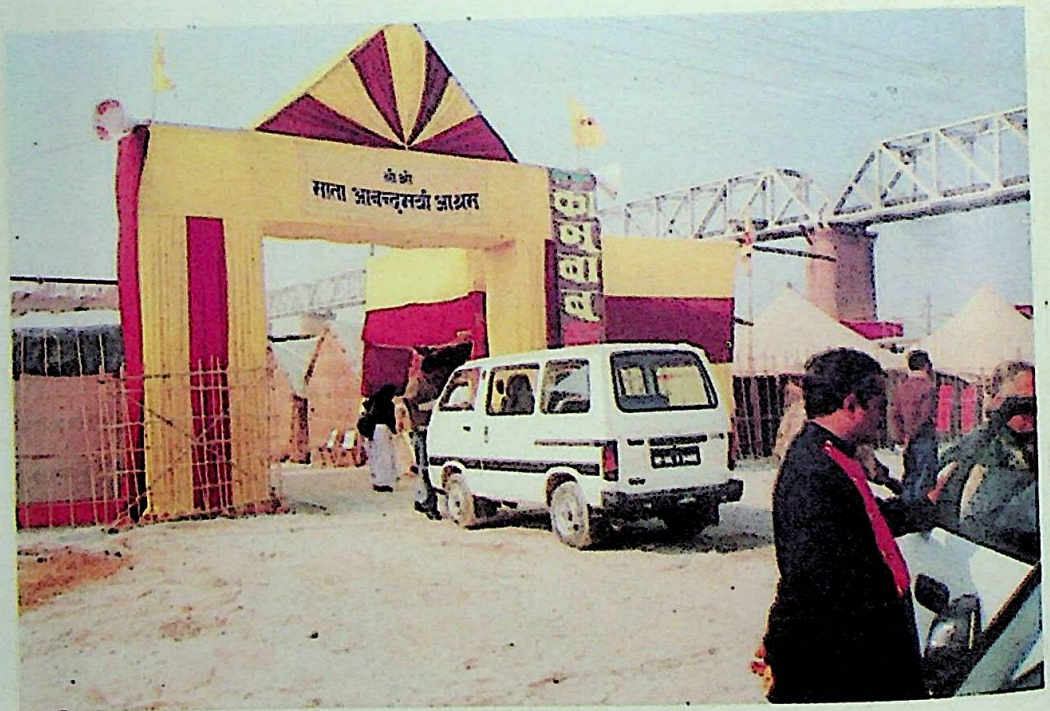
Mahamandaleshwars of the Niranjani Akhara sitting in the pandal in front of Sri Ma's cottage.



Distinguished mahatmas of the Akharas having their meals in the dining pandal.



A view of the Saraswati Puja inside Sri Ma's cottage—29th January, 2001



Entrance gate of the Ashram camp in Kumbh Mela ground.

2. श्री श्री माँ का जन्मोत्सव : पूजन दि. 10-5-01, मध्यरात्रि 3 बजे (दि. 11-5-01 की प्रातःकाल) ।

२ वृन्दावनः—

वृन्दावन आश्रम में विगत दि. २१ फरवरी को श्री महाशिवरात्रि महोत्सव तथा फाल्गुनी पूर्णिमा के अवसर पर ६ मार्च से ९ मार्च तक होली-महोत्सव भली-भाँति सुसंपन्न हुआ ।

श्री धीरुभाई पटेल के परिवार तथा अन्य मातृभक्तवृन्द की ओर से २५ फरवरी से ५ मार्च पर्यन्त श्रीमद्भागवत सप्ताह ज्ञानयज्ञ संपन्न हुआ । श्रीधाम वृन्दावन के सुप्रसिद्ध भागवत व्यास परम भागवत स्वामी श्री रुद्रदेवानन्द सरस्वतीजी महाराज व्याख्याकार थे ।

३ पूनाः—

माँ आनन्दमयी आश्रम पूना में भी गत २९ जनवरी को श्री महासरस्वती पूजा विशेषरूप से अनुष्ठित हुई । दि. २९ फरवरी को महाशिवरात्रि पूजा मोर्वी परिवार की ओर से सुसंपन्न हुई । इस अवसर पर अनेक भक्त सम्मिलित हुए एवं सबने प्रसाद पाया ।

४ राँचीः—

श्री श्री माँ की असीम अनुकंपा से राँची आश्रम में स्वामी मुक्तानन्द गिरिजी महाराज का संन्यास उत्सव आगामी १३ अप्रैल (चैत्र संक्रान्ति) को सुसंपन्न होगा ।

इस अवसर पर कीर्तन पूजा आरती, पुष्पाञ्जलि गीता एवं सप्तशती पाठ सत्संग भोग, एवं साधुभंडारा भी होगा ।

५ वाराणसीः—

इस वर्ष मकर संक्रान्ति १४ जनवरी एवं वसन्त पञ्चमी २९ जनवरी को प्रयाग क्षेत्र में विशेष रूप से मनाये जाने के कारण वाराणसी आश्रम में प्रतिवर्ष की भाँति यद्यपि धूम-धाम से सम्भव नहीं हो पाया, पर विधिवत सभी अनुष्ठान नियमित रूप से अनुष्ठित हुए एवं उपस्थित भक्तों ने योगदान किया एवं प्रसाद पाया ।

८ फरवरी को माघी पूर्णिमा पर सत्यनारायण पूजन एवं कथा चण्डीमण्डप में विशेष रूप से आयोजित हुई ।

२१ फरवरी महाशिवरात्रि पर इस वर्ष भक्तों का काफी जमावट था, महाकुम्भ पर्व रहने के कारण जो भक्त पहले स्नान में योगदान नहीं कर पाये थे उन्होंने महाशिवरात्रि के दिन प्रयाग में त्रिवेणी संगम में स्नान करके वाराणसी में महाशिवरात्रि में पूर्ण योगदान किया । दिल्ली, पटना, बम्बई एवम् इलाहाबाद से भक्त गण आये थे ।

२३ फरवरी प्रातः दिव्यजीवन संघ के परमाध्यक्ष श्री १००८ स्वामी चिदानन्द जी महाराज सुदूर दक्षिण भारत से पधारे । आप माँ आनन्दमयी कन्यापीठ के वार्षिक उत्सव के उपलक्ष में आये थे । आपका काशीवास का सप्ताह व्यापी कार्यक्रम था ।

पूज्य स्वामी चिदानन्दजी महाराज का शरीर स्वस्थ न होने के कारण आपने किसी भी प्रकार के प्रवचन तथा बाहर किसी कार्यक्रम में जाना अस्वीकार कर दिया था। स्वामीजी गोपाल मन्दिर के तीन मंजिल में श्री हरिबाबाजी के कमरे में ठहरे थे। यहीं पर प्रतिवर्ष रहते हैं।

२५ फरवरी को कन्यापीठ के वार्षिकोत्सव का कार्यक्रम था। इस कार्यक्रम में उत्तरप्रदेश के महामहिम राज्यपाल डा. श्री विष्णुकान्त शास्त्री मुख्य अतिथि के रूप में भाग लेने वाले थे। अतः सुरक्षाकर्मियों का आवागमन दो दिन पहले से ही प्रारम्भ हो चुका था। कार्यक्रम का समय अपराह्न तीन से चार रखा गया था।

समय पर सब आयोजन सम्पूर्ण था। आनन्दज्योतिर्मंदिर के हॉल में कार्यक्रम का आयोजन किया गया था। चारों ओर सुरक्षा कर्मियों की भरमार थी। अतिथिगण उपस्थित हो रहे थे। कन्यापीठ की बालिकाएँ कार्यक्रम के लिये प्रस्तुत थीं। ठीक पौने तीन बजे समय के अत्यन्त पाबन्द पूज्य स्वामीजी महाराज ने उपस्थिति से सभापति के आसन को अलङ्कृत किया। स्वस्ति वाचन से स्वामीजी का स्वागत किया गया। ठीक तीन बजे महामहिम राज्यपाल महोदय ने हॉल में प्रवेश किया। आपके स्वागत के लिये आश्रम की ओर से श्री पानु ब्रह्मचारीजी एवं कन्यापीठ की ओर से सचिव सुश्री कान्ति गुर्दू तथा प्रधानाचार्या जया भट्टाचार्य उपस्थित थीं। प्रवेश करते ही आप श्री माँ के मन्दिर के गर्भगृह के समीप गये। आज मन्दिर की शोभा कुछ और ही थी। श्री श्री माँ के कण्ठ में कुन्द गुलाब और गेंदे का गजरा सुशोभित हो रहा था। माँ की करुणापूर्ण दृष्टि एवं मधुर मुस्कान से महामहिम राज्यपाल भी अभिभूत हो गये। माँ का दर्शन कर आपने अपने मुख्य अतिथि के आसन पर विराजने से पूर्व पूज्य स्वामी चिदानन्दजी महाराज को प्रणाम निवेदन किया। मुख्य अतिथि के पास ही विशिष्ट अतिथि के रूप में काशीनरेश की भूमिका में महाराजकुमार श्रीमन्त अनन्तनारायण सिंह वर्तमान काशी महाराजा के रूप में विराजमान थे। इनके अतिरिक्त अन्य अधिकारी गण, एवं विशिष्ट विद्वज्जन सभा का शोभावर्द्धन कर रहे थे।

प्रधानाचार्य के स्वागत भाषण एवं माल्यार्पण के अनन्तर कुलगीत द्वारा कार्यक्रम का शुभारम्भ हुआ। कन्यापीठ की विशेषता पर दो चार शब्द कहने के उपरान्त ब्रह्मचारिणी डा. गीता बनर्जी द्वारा कार्यक्रम का संचालन किया गया।

आज के कार्यक्रम का प्रथम विषय था महामहिम काशीनरेश डा. विभूति नारायण सिंह के प्रति सस्वर श्रद्धाञ्जलि। तदनन्तर मराठी में समर्थ रामदासजी की हरिगीता के दोहों को भी बालिकाओं ने गा कर सुनाया। कुम्भ महापर्व की झलक भी दिखाई गयी।

महामहिम राज्यपाल जी को समयाभाव था अतः कार्यक्रम यहीं समाप्त करना पड़ा। गुजरात भूकम्प पीड़ित छात्र-छात्राओं के निमित्त प्रधानमन्त्री राहत कोष में छात्राओं ने स्वेच्छा से अपनी छात्रवृत्ति का संकलन कर अर्थराशि का ड्राफ्ट राज्यपाल महोदय को अर्पित किया।

कन्याओं के कार्यक्रम से राज्यपाल महोदय अत्यन्त प्रसन्न हुए। उनकी प्रसन्नता उनके आवेग पूर्ण शब्दों में प्रकट हुई। आपने कहा, "मैं अपनी बेटियों के संस्कृत उच्चारण, उनके मधुर कण्ठ स्वर से निकले सुमधुर संगीत, एवं बोलने के ढंग से अत्यन्त प्रसन्न हुआ। मैं चिन्तित था हमारी

बेटियों के लिये कोई ऐसी जगह नहीं है जहाँ उन्हें अपनी संस्कृति का परिचय प्राप्त कराया जा सके। आज मैं निश्चिन्त हुआ। यहाँ भारतीय संस्कृति की रक्षा हो रही है। वाराणसी को गर्व है ऐसी संस्था पर। श्री श्री माँ की ही महिमा है यह। उन्होंने कहा, मेरे गुरुदेव श्री १००८ स्वामी अखण्डानन्द जी के साथ श्रीधाम वृन्दावन में मुझे श्री श्री माँ के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मेरी और भी ठहरने की इच्छा थी पर कार्यवश मुझे जाना पड़ रहा है। अतः मैं पूज्य स्वामी जी से क्षमा याचना चाहता हूँ।" आपके विदा होने के पूर्व श्री पानु ब्रह्मचारीजी ने आश्रम की ओर से आपको चन्दन की माला, चादर, फल एवम् माँ का साहित्य भेंट किया।

राज्यपालजी के चले जाने के बाद भी पुरस्कार वितरण का अवशिष्ट कार्यक्रम चलता रहा। विशिष्ट अतिथि के रूप में महाराज अनन्त नारायण सिंह जी भी उपस्थित थे। कार्यक्रम में विद्वज्जन एवं काशी के प्रमुख चिकित्सक गण आदि उपस्थित थे। स्वामीजी के प्रवचन के अनन्तर स्तवगान एवं उपस्थित जनों में प्रसाद वितरण के साथ सभा की समाप्ति हुई।

पूज्य स्वामीजी अभी पहली मार्च तक रुकने वाले थे अतः आश्रम में भक्तों की चहल पहल थी। यद्यपि पूज्य स्वामी जी विश्राम में ही थे। बम्बई से भी कुछ भक्त गण श्री श्री माँ के साथ पूज्य स्वामीजी के अनुभवों की रिकार्डिंग करने आये थे। पूज्य स्वामीजी एक नियत समय पर ही गोपालजी के सामने आकर बैठते थे। जहाँ भक्तगण उनका दर्शन पाते तथा समस्याओं का समाधान कर सकते थे।

२८ फरवरी को दोपहर ११ बजे आनन्दमयी करुणा की ओर से प्रति वर्ष की भाँति गरीब बच्चों को पूज्य स्वामी जी के कर कमलों से वस्त्र दिलवाया गया।

१ मार्च दोपहर को पूज्य स्वामीजी कलकत्ते की ओर रवाना हो गये। वहाँ से उड़ीसा होते हुए आप सुदूर दक्षिण प्रान्त में गुरुदेव श्री १००८ स्वामी शिवानन्दजी के जन्मस्थान में कुछ समय व्यतीत करेंगे।

पूज्य स्वामीजी ने अन्तर को स्पर्श करने वाले कुछ प्रार्थना वाक्य कहे थे। पहली प्रार्थना स्वामीजी ने आनन्द ज्योतिर्मन्दिर के हाल में प्रवेश करके श्री श्री माँ के चरणों में प्रणाम निवेदन करने के उपरान्त कही थी, "मैं विश्वनाथजी के चरणों में प्रार्थना करता हूँ आप सब विद्या से सम्पन्न सच्चरित्र से सम्पन्न तथा सदाचार से सम्पन्न हों तथा आप में ज्ञान की तीव्र जिज्ञासा हो, आप सब सात्विक हों सदा सद्भाव रखें।" २३-२-२०२०१

१-३-२००१ को जाते समय स्वामीजी के शब्द इस प्रकार थे मैं माँ से प्रार्थना करता हूँ 'हे माँ कन्यापीठ की सब कन्याओं को ज्ञान भक्ति तथा आनन्द से भर दो।'

फाल्गुन पूर्णिमा आने वाली थी, गोपालजी का अभिषेक एवं वेश परिवर्तन होना था। अतः तैयारियाँ प्रारम्भ हो गयीं। ८ मार्च को सन्ध्या के समय कन्यापीठ के आँगन में स्थित दोलमंच पर "श्री राजराजेश्वर नारायण" जी का अधिवास तथा कागज के डिब्बों से बनाये गये होलिका के घर में "नारायण" पूजा के उपरान्त होलिका दहन किया गया।

फाल्गुन पूर्णिमा के प्रातः नारायण पूजा के अनन्तर श्री गोपालजी के मन्दिर में सबने गोपालजी को स्पर्श करके अबीर लगाया । वर्ष में आज के ही दिन गोपाल जी को थोड़े समय के लिये गर्भगृह से बाहर लाया जाता है । अबीर लगाने के अनन्तर गोपालजी का पञ्चामृत से महाभिषेक होता है तथा उन्हें नये वस्त्र धारण कराये जाते हैं । षोडशोषचार पूजन आरती के द्वारा पूजा समाप्त हुई । सबने प्रसाद पाया । रंगों के आनन्द में दोलोत्सव समाप्त हुआ ।

२५ मार्च से नवरात्र प्रारम्भ होगा, नवरात्र के उपलक्ष में वाराणसी आश्रम में श्री वासन्ती दुर्गापूजा प्रारम्भ होगी । आगामी अंक में विस्तृत वर्णन दिया जायगा ।

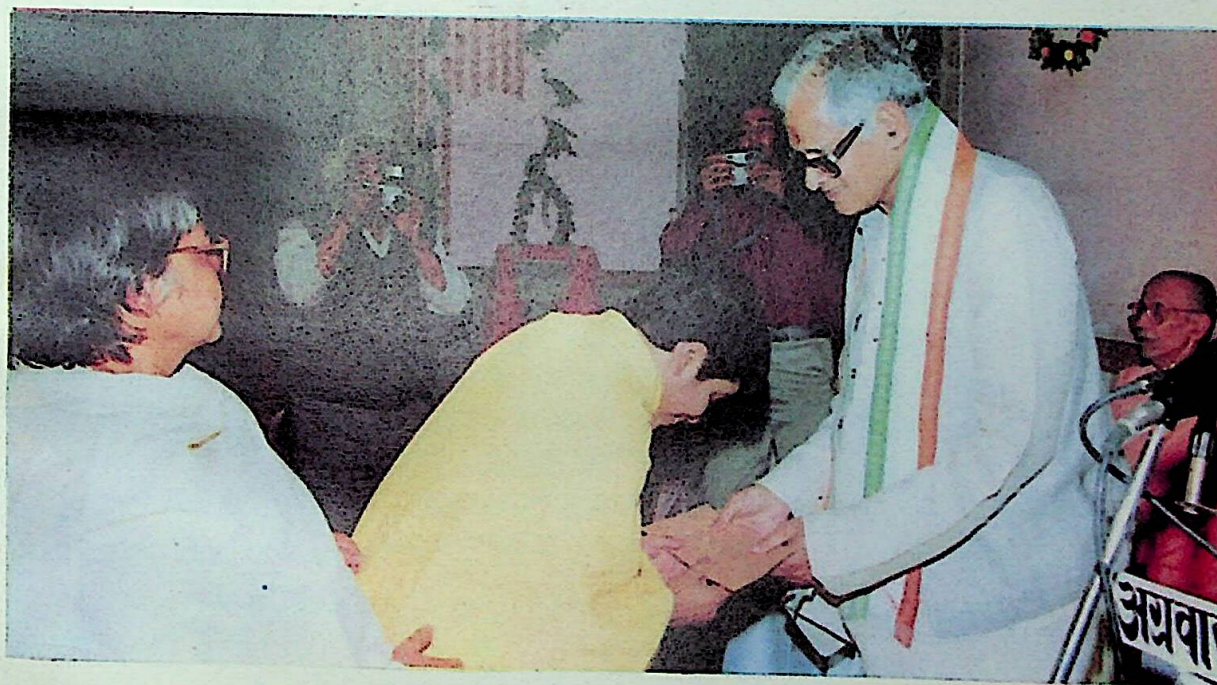


आगामी उत्सव एवम् त्योहारों की तालिका

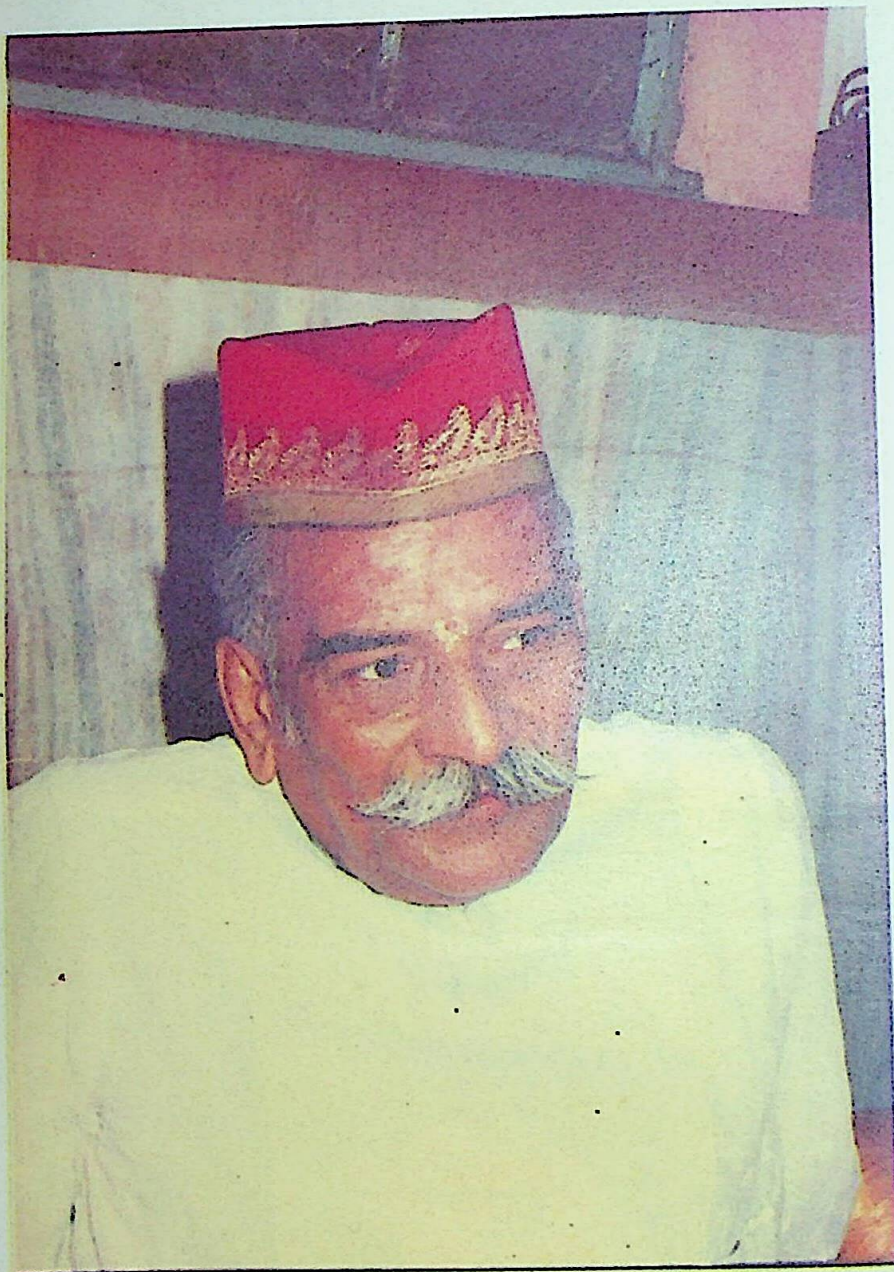
१. स्वामी मुक्तानन्द गिरिजी का संन्यासोत्सव—१३ अप्रैल
२. अक्षय तृतीया — २६ अप्रैल
३. बाबा भोलानाथ का तिरोधान — १ मई
४. श्री श्री माँ का शुभ जन्मदिन — २ मई
५. वैशाखी पूर्णिमा (बुद्ध पूर्णिमा) — ७ मई
६. श्री श्री माँ की शुभ जन्म तिथि — ११ मई (प्रातः ३ बजे)
७. गंगा दशहरा — १ जून
८. गुरुपूर्णिमा — ५ जुलाई



A scene from the annual function of the Ma Anandamayee Kanyapeeth. Pujya Swami Chidanandaji sitting on the left, H.E. Dr. Vishnu Kant Sastri, Governor, U.P. in the middle and Maharaja Anant Narain Singh on the extreme right — all keenly observing the girl's programme. —February, 25, 2001



Km. Santoshi Suvedi, an Acharya student of the Kanyapeeth, offering a Bank draft for Rs. 11,001/- to the Governor out of their merit scholarship amounts for the Gujarat Relief Fund. Km. Jaya Bhattacharya, Principal, also on the scene.



Late Dr. Vibhuti Narain Singh, Maharaja Benares —a man *par excellence*,
loved and respected by thousands.

श्रद्धाञ्जलि

महामहिम काशीनरेश डा. विभूतिनारायण सिंह ने गत २५ दिसम्बर २००० को ७३ वर्ष की अवस्था में स्वधाम गमन किया। श्री आनन्दमयी संघ में व्यापक रूप में परिचित न होने पर भी आपकी माँ के प्रति आन्तरिक श्रद्धा व्यापक थी। माँ से आपका परिचय पुराना था।

काशीनरेश होने के नाते श्री श्री माँ के वाराणसी स्थित आश्रम के प्रति आप अपना उत्तरदायित्व अनुभव करते थे। सावित्री महायज्ञ, श्री श्री माँ की हीरक जयन्ती आदि महान् अनुष्ठानों में आपने योगदान किया था। सन् १९६८ में वाराणसी में माता आनन्दमयी अस्पताल की उद्घाटन तिथि से ही आपने इसकी अध्यक्षता का पदभार सँभाला एवम् अन्तिम श्वास तक आपने इसकी कर्तव्य परम्परा को निभाया।

आनन्दमयी संघ के वर्तमान सभापति श्री गोविन्द नारायण जी काशीराज ट्रस्ट के मुख्य ट्रस्टी थे। महाराज आपसे सर्वदा आश्रम सम्बन्धी जानकारी लेते थे। विशेषतः माँ आनन्दमयी कन्यापीठ के सम्बन्ध में आपकी विशेष दृष्टि थी। आप संस्था के सांस्कृतिक एवम् वार्षिक अनुष्ठानों में सर्वदा उपस्थित रहकर कन्याओं को सदा प्रोत्साहित करते थे। आपने अपनी बड़ी महाराज कुमारी विष्णु प्रियाजी को कन्यापीठ की कार्यकारिणी समिति में सदस्य बनाने की इच्छा प्रकट की थी। कन्यापीठ की कार्यकारिणी समिति ने आपके इस आग्रह को सहर्ष स्वीकार किया। श्री श्री माँ के प्रति आपकी श्रद्धा आपके इन शब्दों में प्रस्फुटित होती है जो कि उन्होंने कन्यापीठ के वार्षिकोत्सव में सभापति के पद से कही थी "श्री श्री माँ की शिक्षा की ज्योति से ज्योति स्वरूप होकर यहाँ की एक एक कन्या समाज को, देश को, राष्ट्र को उसी प्रकार उद्भासित करे जिस प्रकार एक ज्योति अनेक को प्रकाशित करती है।"

महाराज पिछले कुछ वर्षों से चैत्र नवरात्र पर होने वाली वासन्ती पूजा के दशमी के दिन अवश्य ही पधारते थे। गत वर्ष अखण्ड सावित्री महायज्ञ के अर्धशताब्दी के सप्ताह व्यापी उत्सव में आपने पूर्ण योगदान किया था। गत चैत्र नवरात्र की दशमी पूजा में आप सपरिवार उपस्थित थे। उसके थोड़ेही दिन बाद आप अचानक अस्वस्थ हो गये। पर उस अस्वस्थता में भी आप माँ के आश्रम की याद करते थे "ओम् माँ श्री माँ जय जय माँ" यह पद उन्हें अतीव प्रिय था। इन पदों को सुनाने के लिये वे कन्यापीठ की कन्याओं को रामनगर दुर्ग में आमन्त्रित करते थे। पूरे छः महीने के उपरान्त थोड़ा सा स्वस्थ होने पर उन्होंने माता आनन्दमयी अस्पताल में होने वाली बैठक में भाग लेने तथा आश्रम में माँ के कक्ष में प्रणाम निवेदन की इच्छा प्रकट की। आपको आश्रम लाया गया। आप माँ के कमरे में आकर बैठे। कन्यायों ने "ओम् माँ श्री माँ जय जय माँ" की धुन सुनायी। भाव विभोर होकर आप स्वयं भी इन पदों का कीर्तन करने लगे। थोड़ी देर बाद आप माता आनन्दमयी अस्पताल में होने वाली बैठक में योगदान करने के लिये उठे। जाते समय कहा,

"मेरी तो इच्छा होती है यहाँ आने की, पर शरीर साथ नहीं देता ।" खराब स्वास्थ्य के बावजूद भी आपने अस्पताल की बैठक की अध्यक्षता की । शायद यही उनकी अन्तिम बैठक थी ।

महाराज को चिकित्सा के लिये दिल्ली ले जाया गया । जाते समय भी उन्होंने माँ के आश्रम का स्मरण किया । एक महीने के उपरान्त वहाँ से आकर भी उन्होंने माँ को याद किया । माँ के प्रति उनकी इस अगाध निष्ठा ने हम सबके लिये एक आदर्श स्थापित किया ।

कन्यापीठ की ओर से इस वर्ष वार्षिक उत्सव में महामहिम काशीनरेश के प्रति एक भावभीनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित की गयी थी, उसी के द्वारा हम महामहिम काशीनरेश डा. श्री विभूति नारायण सिंह जी को अपनी हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं ।

"भारत की भूमि निराली, जहाँ त्याग तपस्या की हरियाली,

ऐसा निदर्शन देखा है हमने ।

महामहिम काशीनरेश पाया है तुममें ॥

भारत की भूमि निराली

काशी की विभूति थे तुम विभूति नारायण ।

काशीपति के चरणों में था पूर्ण समर्पण ॥

भारत की भूमि निराली

भारत की संस्कृति को अपनाया तुमने ।

राजर्षियों की परम्परा को निभाया तुमने

काशी के राज पथ से जब निकलती सवारी

हर हर महादेव की गूँज उठती भारी ॥

भारत की भूमि निराली

काशी ने पतित पावनी को पाया,

काशी में शिवशंकर ने डमरू बजाया ।

काशी ने सत्यवादिता का यश गाया ।

काशी में महामना ने ज्ञान का दीपक जलाया,

काशी की परम्परा को महामहिम

तुमने अमर बनाया ।

हे भारतीय संस्कृति के अमर पुजारी

श्रद्धाञ्जलि स्वीकार हो हमारी ।

राजमाता विजयाराजे सिन्धिया

भारत के इतिहास में तो यह नाम परिचित है ही साथ ही आनन्दमयी संघ के इतिहास में भी ग्वालियर की राजमाता विजयाराजे की निर्मलभक्ति की गाथा स्वर्णाक्षरों में लिखी हुई है ।

श्री धाम वृन्दावन में प्रतिष्ठित छलिया मन्दिर आपकी ही भक्तिभावना का प्रत्यक्ष स्वरूप है यह सर्वविदित है। दिनांक २४.९.२००९ को राजमाता विजयाराजे ने इस धराधाम से सदा के लिये प्रस्थान किया।

धर्म परायण राजमाता ने श्री श्री माँ को ग्वालियर राज प्रासाद में उस समय निमन्त्रित किया था जब महाराज जियाजी राव सिन्धिया जी थे एवं आप महारानी कहलाती थीं। ग्वालियर राज्य में श्री श्री माँ के पदार्पण एवं भव्य राजोचित स्वागत एवं आतिथेयता की कहानी आज भी प्रत्यक्षदर्शियों के मानसपट पर अङ्कित है साथ ही दीदी गुरुप्रिया की दैनन्दिनी इसमें प्रमाण हैं।

महाराज के स्वर्गवास के उपरान्त आप ने अपने शोकाकुल चित्त की सान्त्वना के लिये श्री श्री माँ के शोकानल-शमन करने वाले श्री चरणों का सहारा लिया था। महाराज की स्मृति में प्रतिष्ठित शिवमन्दिर के उद्घाटन तथा श्रीमद्भागवत सप्ताहपारायण में भी राजमाता ने श्री श्री माँ को अपने पास चाहा था। भक्त मनोवाञ्छापूर्वक करने वाली करुणामयी माँ राजमाता के इस सप्ताह परायण में उनके बम्बई स्थित प्रासाद में निर्मित कुटिया में विराजमान रहीं।

राजमाता अपने पारिवारिक अनुष्ठानों में भी माँ को स्मरण करना न भूलती थीं। अपने पुत्र महाराज श्री माधवराव सिन्धिया के विवाहोपरान्त नववधू सहित आप माँ के पास पूना आश्रम में आयी थीं। अपने जीवन की जटिल समस्याओं के समाधान के लिये आप सदा श्री श्री माँ के पास अपने निकट आत्मीय के समान आती जाती थीं जहाँ किसी प्रकार का आडम्बर नहीं था। बाद में अवश्य राजनीतिक दबाव से प्रत्यक्षरूप से पूर्ववत् आना जाना सर्वदा सम्भव नहीं हो पाने पर भी पत्राचार के माध्यम से श्री श्री माँ के साथ आपका अविच्छिन्न सम्पर्क था।

राजमाता के महाप्रयाण से हम एक शून्यता का अनुभव अवश्य कर रहे हैं। श्री श्री माँ के चरणों में आपकी अमर आत्मा की शान्ति की कामना करते हैं। साथ ही भारत की भूमि पर धर्मपरायणा आजीवन देश हित के लिये संघर्षरता इन महनीयनारी का आदर्श चरित्र आने वाली पीढ़ियों के लिये एक ज्वलन्त दृष्टान्त बना रहे इन शब्दों से श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

डा. श्रीमती सुशीला नायर—

एक आदर्श देश सेविका की भूमिका को निभाने वाली डा. सुशीला नायर ने ८६ वर्ष की अवस्था में ३ जनवरी, २००९ को सेवाग्राम आश्रम वर्धा में ही अपने जीवन की अन्तिम श्वास छोड़कर अपनी देशभक्ति की पराकाष्ठा को यथार्थ रूपान्वित किया।

महात्मा गान्धी के पद चिन्हों पर चलने वाली श्रीमती नायर श्री श्री माँ के सम्पर्क में आ चुकी थीं। श्री श्री माँ के साथ आपका सम्पर्क बहुत पुराना था। विविध स्थानों में विविधकार्यों के उपलक्ष्य में श्री श्री माँ के पास आने का सौभाग्य आपको प्राप्त हुआ था।

साठ के दशक में जब आप भारत की स्वास्थ्य मन्त्री थीं तब आपके ही विशेष आग्रह से वाराणसी में माँ आनन्दमयी चिकित्सालय का निर्माण कार्य प्रारम्भ हुआ। विख्यात इन्जीनियर तथा

आर्किटेक्ट्स "कोठारी एसोशियेट्स" को आपने ही स्वतः प्रेरित होकर माँ के नाम पर सर्वविध आधुनिक सुविधाओं से सम्पन्न एक अस्पताल वाराणसी धाम में बनाने के लिये उत्साहित किया था। श्रीमती नायर के कहने पर ही उन दिनों भारत सरकार के मुख्य आर्किटेक्ट श्री जनार्दन शास्त्री जी ने भी इस अस्पताल को निःस्वार्थ सेवा प्रदान की। इतना ही नहीं आपके ही प्रयास से अस्पताल के निर्माण कार्य तथा आधुनिक चिकित्सा उपकरणादि (मशीन) की खरीददारी के लिये भारत सरकार से अर्थराशि भी अनुदान के रूप में प्राप्त हुई थी। डा. नायर का यह अमूल्य योगदान माता आनन्दमयी अस्पताल के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा रहेगा।

श्री श्री माँ के चरणों में इन महान् निःस्वार्थ सेविका की अमर आत्मा की चिरशान्ति की कामना करते हैं।



विशेष सूचना

गुजरात भूकम्प-पीड़ितों की सहायता हेतु जो भक्त दान देने की इच्छा रखते हैं, उन सबसे प्रार्थना है कि चेक या ड्राफ्ट कृपया इस नाम से भेजे।

-"श्री श्री आनन्दमयी संघ-भीमपुरा"

सचिव

श्री श्री माता आनन्दमयी आश्रम,

भीमपुरा, पोस्ट चाँदोद, जिला बडोदरा, गुजरात।

"हरि कथा ही कथा, और सब वृथा व्यथा"

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

अमेरिका के पेन्सिलवेनिया राज्य में स्थायी रूप से पंजीकृत संस्था माँ आनन्दमयी सेवा समिति (Mass, INC) के स्वयं सेवकों की ओर से परमाराध्या श्री श्री माँ के सभी भक्तजनों को सप्रेम "जय माँ" ।

इस संस्था का उद्देश्य श्री श्री माँ की जीवन लीला रहस्य की सेवा, धार्मिक कार्य, सत्संग एवं जनसेवा सहित सनातन धर्म तथा श्रीमद् भागवत् धर्म युक्त प्रक्रिया है ।

अमेरिका सरकार द्वारा इस समिति के लिये सम्पूर्ण कर मुक्ति (Tax - exemption) प्राप्त है । जिसका नम्बर है 23-2967597 जो IRS Code 501 (C) (3) के अनुसार कार्यों के लिये है ।

अमेरिका एवं आस-पास के देशों में स्थायी रूप से निवास करने वाले मातृभक्तों से विनती है कि "माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता" (त्रैमासिक पत्रिका) जो चार भाषाओं (हिन्दी, बंगला, गुजराती एवं अंग्रेजी) में श्री श्री माँ की दिव्य जीवन लीला सम्बन्धी गाथा एवं अमूल्य वाणी के संकलन के रूप में प्रकाशित होती है MASS, INC से प्राप्त कर सकते हैं । पत्रिका का वार्षिक चन्दा 12/- बाहर डॉलर मात्र है ।

अन्य विस्तृत जानकारी के लिये निम्नलिखित पते पर कृपया सम्पर्क कीजिये :-

Mahadev R. Patel
President, Ma Anandamayee Seva Samiti, INC
212, Moore Road
Wallingford, PA 19086-6843
Tel : 610-876-6862 Fax : 610-876-1351
email : devpatel @ netscape. net.

जय माँ

With Best Compliments From :

**"Endeavour to go through life
leaving your burdens in His
hands."**

—Ma Anandamayee

UNIQUE ELECTRONICS (Regd.)

16, Central Market,
Lajpat Nagar
New Delhi—110024
Phone : 6834559, 6836475

With best compliments from :

*"The pilgrimage to the goal
of human existence is the
only path to Supreme happiness."*

—Sri Ma

M/s. Sugam Parivahan Ltd.
43, Lekh Ram Road
Daryaganj, New Delhi-110002
Ph. 3257581/3268459 Fax : 3267462

With best compliments from :

*"Abandaon yourself to God
in all matters without exception."*

—Sri Ma

M/s Anandamayee Forgings (Pvt) Ltd.
A-5, Site-IV, Industrial Area
Sahibabad, Ghaziabad-201010
Ph : 770064 - Fax : 770427

व्यापारी मित्र

आयकर, बिक्रीकर और व्यापार संबंधी कायदेकानून के बारे में पूर्ण जानकारी देनेवाला केवल एकमात्र मराठी मासिक पत्रिका, सुवर्ण महोत्सव वर्ष में प्रकाशित !

" व्यापारी मित्र " की स्थापना १९५०

वार्षिक शुल्क केवल रु. १२०

पता :- "व्यापारी मित्र पब्लिकेशन्स प्रा. लि.

नरपतगीर चौक, साई निकेतन,

३९३ नया मंगलवार पेठ, पूना ४११ ०११.

फोन : [०२०] ६३७२००, ६३१३५५, ३३१०९४

फैक्स नं. : [०२०] ६३७३६८

With Best Compliments from

At the lotus feet of Shree Shree Ma

B.K. Jhala & Associates

"NIRMAL" Commercial Complex

***158, M.G. Road,
Pune.***

MA ANANDMAYEE MEMORIAL SCHOOL
RAIWALA—249205

District : Dehradun

An English Medium Residential School for Boys only.
Affiliated to Council for the
Indian School Certificate Examination : New Delhi.

A complex for the Children from Standard 1 to XII.

The School is situated at a picturesque site. Enviably hostel facilities in a calm pleasant and pollution free *Vanasthali* setting 2 km away from Haridwar-Rishikesh Road. It is designated to impart integrated education to children, drawing the best from Indian culture and traditions of the past, instructing and helping them to acquire knowledge in Humanities, Arts, Science and co-curricular activities.

The campus was once Shree Shree Ma Anandamayee's Agnatavas (Retreat) and now a Memorial School.

Registration will soon open for the academic session 2001-2002 for the Classes 1 to XII.

Admission forms, Prospectus and other information can be had from the office on payment of Rs. 100/-.

Apply to Principal.

PHONE : 0135—484232/484292

FAX : 0133—426001

With best compliments from

RAM PANJWANI & COMPANY

Timber Importers & Financiers
1—Birla Road
Harwar—249401

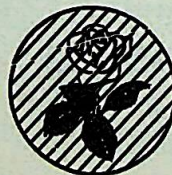
 : 427266, 424272, Fax : 0133—426001

Suppliers of :
Best Quality Himalayan Pine Timbers

Branches :

Jammu (J & K)
Parwanoo (H.P.)

Yamuna Nagar (Haryana)
Gandhi Dham (Gujrat)



*** Branch Ashrams ***

15. NEW DELHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalkaji, New Delhi-110019 (Tel : 011-6826813)
16. PUNE : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Ganesh Khind Road, Pune-411007, (Tel : 020-5537835)
17. PURI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Swargadwar, Puri-752001, Orissa.
18. RAJGIR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Rajgir, Nalanda-803116, Bihar (Tel : 06112-55362)
19. RANCHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Main Road,
P.O. Ranchi-834001, Bihar (Tel : 0651-312082)
20. TARAPEETH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Chandipur-Tarapeeth, Birbhum-731233, W.B.
21. UTTARKASHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kali Mandir, P.O. Uttarkashi-249193,
22. VARANASI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhadaini, Varanasi-221001, U.P.
(Tel : 0542-310054+311794)
23. VINDHYACHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Ashtabhuja Hill,
P.O. Vindhyachal, Mirzapur-231307, (Tel : 05442-42343)
24. VRINDAVAN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Vrindavan, Mathura-281121 U.P. (Tel: 0565-442024)

IN BANGLADESH :

1. DHAKA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
14, Siddheshwari Lane, Dhaka-17 (Tel : 405266)
2. KHEORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Kheora, Via-Kasba, Brahmanbaria.

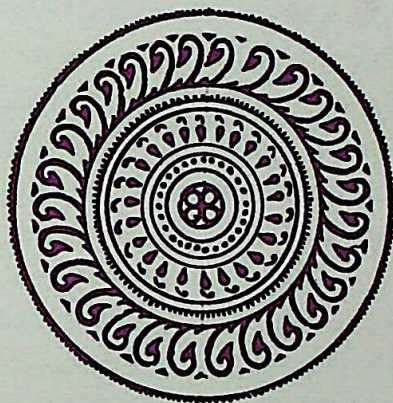


REGISTERED WITH THE REGISTRAR OF NEWSPAPERS
FOR INDIA AS NO. 65432/97



माँ आनन्दमयी

अ मृत वार्ता



SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

✽ Branch Ashrams ✽

1. AGARPARA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P. O. Kamarhati ,
Calcutta-700058 (Tel : 033-5531208)
2. AGARTALA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Palace Compound,
P.O. Agartala-799001. West Tripura (Tel : 0381-208618)
3. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Patal Devi,
P.O. Almora-263602, (Tel : 05962-33120)
4. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Dhaul-China,
Almora-263881, (Tel : 05962-62013)
5. BHIMPURA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Bhimpura,
P.O. Chandod, Baroda-391105, (Tel : 02663-833208)
6. BHOPAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P. O. Bairagarh,
Bhopal-462030, M.P. (Tel : 0755-521227)
7. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Kishenpur,
P.O. Rajpur, Dehradun-248009 (Phone : 0135-734271)
8. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalyanvan, 176, Rajpur Road, P.O. Rajpur,
Dehradun-248009, (Phone : 0135-734471)
9. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram.
P.O. Raipur Ordnance Factory, Dehradun-248010
10. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
47/A Jakhan, P.O. Rajpur, Dehradun,
11. JAMSHEDPUR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Near Bhatia Park, Kadma, Jamshedpur-831005, Bihar
12. KANKHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Kankhal,
Hardwar-249408, (Tel : 0133-416575)
13. KEDARNATH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Near Himlok,
P.O. Kedarnath, Chamoli-246445,
14. NAIMISHARANYA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Puran Mandir,
P.O. Naimisharanya, Sitapur-261402, U.P.

माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता

श्रीश्री माँ आनन्दमयी के दिव्यजीवन

तथा

दिव्यवाणी की वाहिका त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष-५

जुलाई, २००१

सं.-३

सम्पादक मण्डली

- ❖ डा. श्रीनारायण मिश्र
- ❖ डा. राममोहन पाण्डे
- ❖ डा. बीधिका मुखर्जी
- ❖ डा. गायत्री शर्मा
- ❖ ब्रह्मचारिणी गुणीता



कार्यकारी सम्पादक

श्री पानु ब्रह्मचारी



वार्षिक चंदा (डाकव्यय सहित)

भारत में - ६० रुपये

विदेशों में - १२ डॉलर/या ४५० रुपये

एक प्रति - २०/- रुपये

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा—हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है। वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है। इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख, किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलियों का भी पत्रिका में स्वागत है।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकलित कर सकते हैं जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये। लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें। मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है। सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C". नाम पर भेजें।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"

माता आनन्दमयी आश्रम

भदौनी, वाराणसी - २२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :-

सम्पूर्ण पृष्ठ - २०००/- पूरे वर्ष के लिये

आधा पृष्ठ - १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदौनी, वाराणसी-२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमछा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित।
सम्पादक—श्री पानु ब्रह्मचारी।

विषय-सूची

१.	मातृ-वाणी		1
२.	श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग —श्री अमूल्य कुमार दत्तगुप्त		4
३.	मेरे आश्रम आने का छोटा सा इतिहास —स्वामी नारायणानन्द तीर्थ		10
४.	आनन्दमयी स्मृति —कु. चित्रा घोष		15
५.	वाङ् माधुरी		20
६.	नृसिंह अवतार रहस्य —'परिव्राजक'		22
७.	"जय जय वृन्दावन रजधानी" —प्रेमानन्द गिरि		28
८.	धर्म का सम्यक मूल्यांकन —डा. प्रेम नारायण सोमानी		32
९.	आश्रम संवाद		35
१३.	श्रद्धाञ्जलि		39

"हरि कथा ही कथा, और सब वृथा व्यथा"

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

अमेरिका के पेन्सिलवेनिया राज्य में स्थायी रूप से पंजीकृत संस्था माँ आनन्दमयी सेवा समिति (Mass, INC) के स्वयं सेवकों की ओर से परमाराध्या श्री श्री माँ के सभी भक्तजनों को सप्रेम "जय माँ" ।

इस संस्था का उद्देश्य श्री श्री माँ की जीवन लीला रहस्य की सेवा, धार्मिक कार्य, सत्संग एवं जनसेवा सहित सनातन धर्म तथा श्रीमद् भागवत् धर्म पुंक्त प्रक्रिया है ।

अमेरिका सरकार द्वारा इस समिति के लिये सम्पूर्ण कर मुक्ति (Tax - exemption) प्राप्त है । जिसका नम्बर है 23-2967597 जो IRS Code 501 (C) (3) के अनुसार कार्यों के लिये है ।

अमेरिका एवं आस-पास के देशों में स्थायी रूप से निवास करने वाले मातृभक्तों से विनती है कि "माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता" (त्रैमासिक पत्रिका) जो चार भाषाओं (हिन्दी, बंगला, गुजराती एवं अंग्रेजी) में श्री श्री माँ की दिव्य जीवन लीला सम्बन्धी गाथा एवं अमूल्य वाणी के संकलन के रूप में प्रकाशित होती है MASS, INC से प्राप्त कर सकते हैं । पत्रिका का वार्षिक चन्दा 12/- बाहर डॉलर मात्र है ।

अन्य विस्तृत जानकारी के लिये निम्नलिखित पते पर कृपया सम्पर्क कीजिये :-

Mahadev R. Patel
President, Ma Anandamayee Seva Samiti, INC
212, Moore Road
Wallingford, PA 19086-6843
Tel : 610-876-6862 Fax : 610-876-1351
email : devpatel @ netscape. net.

जय माँ



मातृ-वाणी

स्वरूपज्ञान जहाँ है, वहाँ नाना ज्ञान या क्रम कहाँ ? वहाँ तो एकमात्र ज्ञान स्वरूप है । क्रम का अर्थ है विषयों की ओर से हटकर बिल्कुल भगवदुन्मुख होना । भगवत् प्राप्ति नहीं हुई, परन्तु इस पथ का पथिक होना भला प्रतीत हो रहा है ।

*

*

*

जिस धारा में चल रहे हो - वह है ध्यान, धारणा, समाधि । इस प्रत्येक स्थिति के अनुभव भी अनन्त हैं । यहाँ मन है, इस कारण अनुभव होते हैं । हर एक स्थिति में अनुभव की, ज्ञान की इच्छा होती है ।

*

*

*

जहाँ पर व्यक्ति है वहीं न सुख दुःख की बात होती है । स्त्री, पति, पुत्र, कन्या आदि संसार अपने ऊपर लेकर जो आसक्ति में डूबा है, वह जिस समय कठिन रोगग्रस्त होता है, उस समय भीषण दुःख ज्वाला से छटपटाता है, स्त्री, पति, पुत्र कन्या की ओर ध्यान देने का अवसर कहाँ रहता है ? उस समय उसका यह मोह का बन्धन प्रधान नहीं है । देह के ऊपर जो मोह होता है वही प्रधान होता है । स्वयं है इसी कारण सब कुछ है । इस तरफ से इसी को लेकर जीव के आने-जाने की आवागमन की बात उठती है ।

*

*

*

इष्ट जैसे स्वयं है, नाश भी वह स्वयं है, नष्ट भी वह स्वयं है । जहाँ पर एकमात्र स्वयं शब्द रह जाता है । वहाँ पर फिर किसका संग ? इसीलिए निःसंग असंग यह बात कही जाती है । छद्मवेशी जिसे कहा जाता है, छन्द्वेश क्या है ? वही तो ।

*

*

*

जिसे जगत् कहते हो जगत् माने है गति, और जो बद्ध है वहीं जीव है । कहते हो न, 'यत्र जीवस्तत्र शिवः' 'यत्र नारी तत्र-गौरी' जहाँ गतागति का प्रश्न नहीं रहता, बन्धन का प्रश्न नहीं रहता, उसी को तो नित्य कहते हो ।

*

*

*

देखो यह जो विश्व ब्रह्माण्ड है, तुम कहोगे एक आत्मा है । फिर वे साकार रूप में भी 'स्व' आकार हैं । 'स्व' अर्थात् जो नित्य वर्तमान हैं वे आकार रूप में हैं । उनमें क्या है ? अक्रिया । कौन सी अक्रिया ? भगवत् कर्म ही कर्म है । और सब अकर्म है । तुमलोग जगत् के दृष्टिकोण से

कहते हो न । क्रिया का वहाँ प्रश्न नहीं उठता । वहाँ क्या है ? 'स्व' क्रिया, यानी स्वयं क्रिया के रूप में हैं, स्वयं आकार में हैं, इसीलिए साकार कहते हैं । स्वयं गुणरूप में हैं, इसीलिए सगुण कहते हैं, ईश्वर, ईश्वरीय जहाँ पर प्रकाश स्वयं क्रियमाण अकर्ता होकर भी । वही वे सत्य स्वरूप हैं ।

*

*

*

तुम नित्य मुक्त हो, क्योंकि कर्म सदा ही मुक्त है, वह बाँध नहीं सकता । संसार में भी रस्सी से किसी को यदि बाँधते हो तो देखो न सड़ कर खिसक जाता है । लोहे की जज़ीर अथवा सोने की जज़ीर से बाँधो, वह भी एक न एक दिन टूट जाती है, नष्ट हो जाती है । ऐसा कौन सा जागतिक बन्धन है, जिससे तुम बाँधोगे वह कभी टूटेगा नहीं, नष्ट नहीं होगा ? सामयिक बन्धन में केवल हाहाकार होता है, मन का बन्धन इसी तरह का होता है । क्योंकि मन एक जगह बँधा रहने वाला नहीं है ।

*

*

*

मन चंचल बालक के समान है । उसमें कोई भले-बुरे का विचार नहीं है, केवल आनन्द ही उसका लक्ष्य है । क्षणिक आनन्द से वह तृप्त नहीं होता, इसीलिए वह चञ्चल है । किन्तु जब तक वह उस परम तत्त्व का पता नहीं पायेगा तब तक उसे चैन कहाँ ? समाहित आत्मस्थ है । अपने में ही आप हैं ।

*

*

*

मुक्त होने के कारण ही तुम ऐसा समझते हो । मुक्ति चाहना ही तुम्हारा स्वभाव है । अतएव कर्मरूप में यदि किसी के भाग्य से वे प्रकट होते हैं, तब कर्म-त्याग हो जाता है । गति का रुकना मृत्यु का पथ है । केवल उसके त्याग के लिये ही मनुष्य नाना उपायों का अवलम्बन करता रहता है । जो त्याग हो जाता है, वही तो त्याग करना है ।

*

*

*

गुरु शक्ति से ही सब कुछ होता है । गुरु बनाओ, फिर सब नाम उनके नाम हैं । सब रूप उनके रूप हैं कोई एक चुन लो । उनका नाम नहीं है और उनका रूप नहीं है, वे अनामी और निराकार हैं । "कुछ नहीं" और "है भी" यह भगवान् में ही सम्भव है । जब तक गुरु नहीं मिलते, जो रूप और जो नाम अच्छा लगे करो । नित्य प्रार्थना करो आप हमारे सद्गुरु के रूप में प्रकट होओ ।

नयी सदी को नयी रोशनी

दुनिया की रोशनी आती है, जाती है, और बुझती है । नित्य जो रोशनी, वह कभी नहीं जाती । जिस रोशनी से इस रोशनी को देखते हो विश्व ब्रह्माण्ड में जो है सब कुछ देखते हो, वह रोशनी तुम में नित्य रहती है । इसलिए इस रोशनी को देखते हो । इस विश्व ब्रह्माण्ड में जो कुछ तुम बोध करते हो, तुममें वह महाबोध है, इसलिए न ? वह महाज्ञानस्वरूप ज्ञान नित्य तुम में है तभी न इस ज्ञान का परिचय मिलता है ।

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

"अमृत धारा"

भक्ति से गलाओ या ज्ञान से जलाओ
हरिनाम की महिमा से अपने को पाओ ।
सब तो उनके हाथ है, वे तो तुम्हारे साथ हैं ।
अपना ही तो सब काम है, पर यह समझ तुममें कहाँ है ।
सारी दुनिया ही तो अपनी है, स्वयं और निजी है
क्या गलेगा और क्या जलेगा !
जो गलने वाला है गल जायेगा
जलने वाला जल जायेगा
भेद बुद्धि दूर हो जायेगी
द्वैत का द्वन्द्व टूट जायगा ।
मैं - मैं तू - तू का विकार हट जायेगा
नित्य रोशनी चमक उठेगी
ज्ञान की आभा दमक उठेगी ।
सद्गुरु का प्रकाश हो जायेगा ।
अपने में आप, अपने को पा जायेगा ।
भक्ति से गल जायेगा ज्ञान से जल जायेगा ।
माँ की महिमा का दिव्य प्रकाश लहरायेगा ।

"जय माँ जय माँ जय जय जय माँ"

[श्री श्री माँ की वाणी के आधार पर]

—ब्र. गुणीता

श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग

—स्व. अमूल्य कुमार दत्त गुप्त

माताजी— जब हमलोग कैलास जा रहे थे तब उस दुर्गम मार्ग को देखकर स्वामी अखण्डानन्द जी ने कहा था, "माँ, कितना भयंकर मार्ग है। एक बार यदि ध्यान चूक जाय या किसी और कारण से पैर फिसल जाय तो उसका बचना नामुमकिन है।" यह सुन कर ज्योतिष ने कहा था, "इसमें डरने की क्या बात है। कैलास के मार्ग में यदि माँ के सामने देहत्याग हो तो इससे बढ़कर खुशी की बात और क्या हो सकती है। मैं तो ऐसी मृत्यु की कामना करता हूँ।" मैंने तुरन्त उसको अपनी बात वापस ले लेने को कहा। वह मेरी बात सुनकर हँसने लगा। पर बाद में मेरे बार-बार कहने पर उसने बात वापस लौटा ली। मैंने और भी कहा, "तुम कहो तुम अलमोड़े में मंगलमय लौट जाओगे।" उसने वही कहा। देखो, उसे अलमोड़े तक भलीभाँति लौटने को कहा गया था। उससे अधिक नहीं एवं अलमोड़े ही में उसका देहत्याग हुआ था।

ज्योतिष ने कौन से संकल्प के लिए चावल खाना छोड़ दिया था वह तुमलोगों को कहा था। कुछ दिनों के बाद वह स्वयं ही भूल गया था कि उसके चावल न खाने का कारण क्या है। कैलास से लौटते समय इस शरीर को ख्याल आया कि ज्योतिष को चावल खिलाना ही पड़ेगा। जिसका संन्यास हो चुका है उसके लिये कोई वैषयिक संकल्प का रहना उचित नहीं है। इसीलिए दीदी से चावल और सब्जी बनवाकर खिलाया था। इस बात को जब मैं सोलन में कह रही थी तब यह सुनकर कृष्णानन्द अवधूतजी ने कहा था, "माँ तो ऐसा करेंगी ही, बाद में कहीं भाईजी की जड़भरत जैसी दशा न हो।"

पहला संयम सप्ताह—काशी आश्रम

२३ श्रावण (८-८-५२) २१ सावन से संयम सप्ताह प्रारम्भ हुआ है। इस संयम सप्ताह की प्रेरणा सोलन के राजासाहब की ओर से आयी। आनन्दमयी संघ के सभी सदस्य इसमें योगदान करें राजा साहब की ऐसी इच्छा है। संघ सदस्यों के अलावा अन्य साधना प्रेमी जन भी निर्बाध इस सप्ताह में भाग ले सकेंगे। विविध तीर्थ स्थानों में छह महीनों के अन्तराल पर यह संयम सप्ताह माताजी के सान्निध्य में अनुष्ठित हो राजासाहब ऐसा चाहते हैं। सोलन में जब राजासाहब ने यह प्रस्ताव रखा था तब अवधूत जी आदि संत जनों ने इसे सानन्द स्वीकार किया था। अवधूत जी के प्रस्ताव के अनुसार संयम महाव्रत में योगदान करने वाले व्रतियों को तीन श्रेणी में विभक्त किया जाना चाहिये। जो व्रती प्रथम श्रेणी में आना चाहते हैं उन्हें सात दिन में दो दिन केवल गंगा जल पर रहना पड़ेगा। एक दिन चरु (दूध से पका चावल), एक दिन खिचड़ी, एकदिन केवल सब्जी

इस प्रकार एक समय स्वल्पाहार पर रहना पड़ेगा। द्वितीय श्रेणी के व्रतियों के लिये एक समय एक चीज से भोजन करेंगे रात को केवल दूध लेंगे। तृतीय श्रेणी के व्रती जन चावल के साथ दाल, एवं सब्जी ले सकते हैं तथा रात को दूध लेंगे। दूसरे एवं तीसरे श्रेणी के व्रती दोपहर को भोजन के साथ दही भी ले सकते हैं।

आहार संयम के अतिरिक्त व्रतियों को निम्नलिखित नियमों का भी पालन करना पड़ेगा। इसके बाद गीता पाठ, कीर्तन एवं सदालोचना दिन के बारह बजे तक चलेगी। दोपहर को भोजन एवं सामान्य विश्राम के अनन्तर अपराह्न के तीन बजे से चार बजे तक माताजी के सामने बैठकर ध्यान होगा। इसके अतिरिक्त व्रतियों को प्रतिदिन ५ हजार जप करना होगा। मिथ्या वचन (झूठ) न निकल जाय अतः वाक् संयम भी आवश्यक है। जो लोग इस व्रत में व्रती हुए हैं, वे उत्साह से तीन दिन पर्यन्त जपध्यान इत्यादि कर रहे हैं।

श्री श्री माँ का अलौकिक दर्शन तथा श्रवण—

आज शाम को ध्यान के बाद श्रीमान् विभु जब "हे भगवान्, हे भगवान्" की धुन गा रहा था, माताजी अचानक उठ बैठी और भावगम्भीर एक नैसर्गिक तन्मयता से गाने लगीं—"हे पितः हे हितः हे ब्रह्मतत्त्वम्"। इस पद के आखिरी शब्द काफी अस्पष्ट थे; कभी तो ऐसा लग रहा था माताजी मानो "ब्रह्मभूतम्" इस प्रकार का कुछ कह रही हों। कुछ देर गाने के बाद माताजी ने कहा, "तुमलोग जब ध्यान कर रहे थे तब देखा कि एक ५-६ वर्ष का बालक, सिर के घुँघराले बाल कन्धों तक लटक रहे थे, तन्मयता से इस पद को गा रहा था। उसके मुँह के शब्द भी मानो फूट नहीं रहे थे। उस गान को तुमलोगों के पास रखने का ख्याल हो रहा था, अतः खुद ही गाया। इस प्रकार कितना ही देखा व सुना जाता है। हर समय तो कहा नहीं जाता। आज ख्याल आया अतः उसे गाकर तुमलोगों के पास रख दिया।

"और एक बार वृन्दावन में भी ऐसा हुआ था। हमलोग वृन्दावन से मथुरा की ओर जा रहे थे। विश्रामघाट के पास एक जगह पर थे। रात के १२ बजे थे, सुना गया कोई एक गाना गाते गाते जा रहा है। योगेश, अभय, ब्लैका आदि साथ थे। उन्होंने भी उस गाने को सुना था। चिड़िया गा कर उड़कर चली जाने पर धीरे-धीरे जैसे वह स्वर अस्पष्ट होता हुआ बन्द हो जाता है यहाँ भी उसी प्रकार हुआ था। लग रहा था मानो कोई गलियारों में गाते हुए जा रहा था। कभी तो यह गान काफी स्पष्ट और अस्पष्ट होते होते वह मानो शून्य में मिल गया। इस गाने का स्वर जैसा मधुर था वैसा ही स्पष्ट था। आज जिस बालक को देखा उसका भी कण्ठ स्वर बहुत ही मधुर था; पर इतनी तन्मयता से गा रहा था कि इसके शब्द भी अच्छी तरह स्पष्ट नहीं हो रहे थे। शिशु की बोली जैसे अस्पष्ट रहती है यह भी ऐसे ही था। इसके अलावा तुमलोगों का ध्यान के समय इसका प्रकाश हुआ था न इसीलिये उनका इसप्रकार गम्भीर एवम् तन्मयभाव था।"

डॉ. पन्नालाल और कमलाकान्त ब्रह्मचारी ने बालक के सम्बन्ध में प्रश्न करके भी विशेष कुछ बात निकाल न सके। केवल यही पता चला कि बालक के शरीर का रंग खूब काला भी नहीं था

और खूब उज्ज्वल भी नहीं था । उसने साधारण वस्त्र पहन रखा था । माताजी ने कहा, "इसका (अर्थात् बालक का) परिचय और क्या होगा ? एकमात्र वे ही तो, मथुरा में उन्होंने अपने को शब्द रूप में प्रकाश किया था । आज यहाँ बालक रूप में प्रकाश किया । राम कहो, काली कहो, कृष्ण कहो, एकमात्र वे ही तो, भिन्न भिन्न रूप में अपने को प्रकाश करते हैं ।

आज रात को भी उस गाने की बात उठी । माताजी ने कहा, "गाने के पद थे" हे पितः हे हितः, हे ब्रह्मतत्त्वम्, हे पितः, हे हितः, हे ब्रह्मभूतम् ।" गाते समय मैंने ही "तत्त्व" की जगह तत्त्वम् कहा था । बालक अनुस्वार का उच्चारण बड़े ही अस्पष्ट रूप से कर रहा था । गाते समय माताजी के शब्द भी खूब स्पष्ट नहीं थे । इस बात को कहने पर, माताजी ने कहा, "उस समय बालक के स्वर की ओर ही मेरा लक्ष्य था, अतः तब ये पद उस प्रकार अस्पष्ट हुये थे ।

माताजी ने जो नयापद कहा वह पहले के स्वर में गाया जायगा या नहीं इस प्रकार का सन्देह प्रकाश करने पर माताजी श्रीमान् विभु को लेकर कमरे में गयीं ।

संयम सप्ताह में प्रतिदिन रात को ११-४५ से १२-१५ तक माताजी को लेकर ध्यान किया जा रहा है। इस समय माताजी आकर आंगन में बैठती हैं । आज ग्यारह बजे ही माताजी विभु को साथ लेकर आँगन में चौकी पर बैठीं । गाने का स्वर माताजी ने जिस प्रकार विभु को दिखा दिया था उस स्वर में विभु ने कुछ देर तक गाया । इसके बाद माताजी ने उसे और एक गाना गाने को कहा। इस गाने के बारे में मैंने जो सुना वह इस प्रकार है; गत ग्रीष्म काल में माताजी जब शिमला-सोलन के पहाड़ी क्षेत्र में थीं उस समय एकदिन प्रातः काल माताजी तन्मय होकर इस पद को गा रही थीं— "आओ मेरे सलोना छलिया रे, बनवारी रे, आओ मेरे सलोना छलिया रे ।" इस एक ही पद को माताजी बहुत करुण स्वर से बार-बार गा रही थीं । माताजी ने कहा, "मैं सुन रही थी कोई तन्मय होकर इस पद को गा रहा है ।" श्रीमान् विभु उस समय माताजी के साथ थे अतः विभु को माताजी ने उस पद को सिखाया । आज पुनः माताजी ने विभु को उस पद को गाने को कहा । वह गाने लगा । थोड़ी देर बाद उसका स्वर मानो करुणा के सागर में हिलोरें लेने लगा । तब माताजी ने कहा, "अभी कुछ कुछ आ रहा है । विभु ने कहा, जब ठीक-ठीक माताजी के सिखाये स्वर से गाया जाता है तब आँखों में पानी आने लगता है उसे रोका नहीं जा सकता । माताजी ने उसे पुनः गाने को कहा । विभु ने गाने का प्रयास किया पर थोड़ा गाते ही वह फूट-फूट कर रोने लगा । उसकी हालत देख कर मुझे लगा माताजी की कृपा से ही विभु को यह अवस्था प्राप्त हुई । प्रायः दस मिनट रोने के बाद शान्त होने पर माताजी ने कहा, "हृदय जब तक पिघलता नहीं है तब तक यह गाना ठीक से नहीं हो पाता जब मैंने इस गाने को सुना था तब ऐसा लग रहा था मानो राधा अपने प्रियतम को व्याकुल होकर पुकार रही है । कभी-कभी तन्मयता के लिए उनका स्वर बन्द हो रहा है ऐसा लगता था । आज जैसे बालक को देखा एवं गाना सुना, उस दिन कोई मूर्ति नहीं देखी थी । पर गाने के स्वर से ही गायक का भाव तथा मूर्ति पकड़ में आ रही थी । अमूल्य, समझे?"

मैं— जी, माताजी ।

२४ श्रावण, शनिवार (९-८-५२)

रात के साढ़े नौ बजे माताजी आँगन में आकर बैठीं । नाना प्रसंगों में माताजी ने हमलोगों को पूछा, "आज ध्यान के समय तुम लोगों ने कोई आवाज सुनी?" उपस्थित सबने कहा, नहीं माँ, हमलोगों ने तो कुछ नहीं सुना, माताजी ने कहा, "प्रातः काल तुम लोग जब ध्यान में बैठे थे तब अपने आप यह शब्द सुनने में आये। गले की आवाज कुछ-कुछ कान्तिभाई की तरह थी । देखा एक व्यक्ति ने एक थैला लाकर इस शरीर के सामने खोला । थैले में कुछ रंग-बिरंगे कपड़े थे । तब ख्याल हुआ कि जो लोग बैठकर ध्यान कर रहे थे यह कपड़े उनके आवरणों के प्रतीक हैं । किसका कितना आवरण हटा है यही इस शरीर को दिखा रहा था । सब का आवरण तो एक जैसा नहीं है । किसका कितना आवरण हटा है वह देखना हो गया । जिस आवरण के हटने पर उनका प्रकाश होता है, वह आवरण अवश्य किसी का भी हटा नहीं है ।"

एक सज्जन- माताजी, किसका आवरण कितना हटा है ?

माताजी-वह यह शरीर किसी को प्रकाश नहीं करेगा ।

कुसुम ब्रह्मचारी- हम जब ध्यान में बैठते हैं तब हमलोगों को कुछ हो रहा है ऐसा बिल्कुल ही समझ नहीं आता ।

मैं- माताजी कल कृपा करके विभु को जैसा स्पर्श दिया था, वैसा स्पर्श ध्यान के समय सबको कृपा करके दे सकती हो ?

मेरी बात को सुनकर माताजी हँसने लगीं । मैंने पुनः कहा, "कल विभु को गाना गाते गाते श्री राधा के महाभाव का जो थोड़ा सा स्पर्श मिला था वह कभी भी उसके प्रयास से नहीं हुआ था । सांसारिक किसी दुःख दर्द को याद करके श्री राधा का भाव नहीं लाया जा सकता । मुझे लगता है किसी के भीतर जीवभाव के रहते वह राधाभाव की कोई अनुभूति ही नहीं पा सकता । पर आप के कृपा करने पर या शक्ति देने पर सब सम्भव हो सकता है ।

माताजी- (हँसकर) तुमलोगों को तो कहा है कि इस गाने का स्वर विभु के पास रखा हुआ है । पर वह अपनी इच्छा करने पर जब कभी इस स्वर को ला सकेगा ऐसी बात नहीं है । जब उसके आने का होगा तब अपने से ही आयेगा । इसीलिये कहा गया है कि यह गाने का स्वर साधारण नहीं है । उसे कहकर सिखाने पर लोग उसे सीख जायेंगे ऐसी बात भी नहीं है । यथार्थ विरह का भाव भीतर न आने पर यह स्वर नहीं निकलेगा ।

मैं- बात तो एक ही हुई । आपने विभु को आपकी शक्ति दी है इसीलिए विभु कल गाते हुए विह्वल हो गया । कल जब आपने विभु को गाना गाने को कहा तब ही समझ गया था ऐसा कुछ हुआ ।

माताजी मेरी बात सुनकर हँसने लगीं ।

२५ श्रावण, रविवार, (१०-८-५२)

आज दिन के साढ़े दस बजे संयुक्त प्रदेश के गर्वनर श्रीयुत के. एम. मुंशी सपत्नीक माताजी के साथ मुलाकात करने आये थे । उनकी उपस्थिति में अवधूत जी निष्काम कर्म के सम्बन्ध में एक

छोटा सा प्रवचन दिया । श्रीयुत मुंशी जी माताजी के साथ एकान्त वार्ता करना चाहते हैं अतः माताजी हाल से उठ आयीं ।

२९ श्रावण, बृहस्पतिवार (१४-८-५२)

आज मौन के बाद माताजी ने अपने हाथों से प्रसाद बाँटा । यह प्रसाद खाने में अत्यन्त स्वादयुक्त है । सुना इस प्रसाद का नाम रखा गया है "अमृत" । रात के साढ़े नौ के बाद माताजी आँगन में टहलते-टहलते मुझको कहने लगीं "एक दिन देख रही हूँ कि आज तुम लोगों को जो चीज दी गयी वह बनायी जा रही है । अवधूत जी वगैरह भोजन के लिए बैठे हैं । उनको यह चीज परोसने के पहले ही उन्होंने अपनी पत्तल उठाने की तैयारी कर ली । यह देख इस शरीर ने दीदी से कहा, "अवधूत जी को यह चीज नहीं दी गयी ।" दीदी ने कहा "उनको लेने को कहूँ ।" मैंने कहा "नहीं रहने दो" । परन्तु दीदी मेरी बात न सुन सकीं । उसने अवधूत जी से उस प्रसाद को खाने को कहा पर वे दीदी की बात की परवाह न कर उठ पड़े, उनके बैठने का ढंग कुछ-कुछ महावीर की तरह देखा गया ।

भाद्र की पहली तारीख (१७-८-५२)

झूलन जन्माष्टमी के उपलक्ष में जो लोग यहाँ आये थे उनमें से काफी लोग चले गये हैं । आज भी कुछ लोग नाना स्थानों को रवाना हो गये हैं । प्रातः गीता पाठ के उपरान्त कुछ देर कीर्तन हुआ । माताजी ने स्वयं थोड़ी देर तक गाया । उसके बाद बात-चीत प्रारम्भ हुई । कमलाकान्त ब्रह्मचारी प्रश्न कर रहे थे । कमलाकान्त के प्रश्न एवं माताजी का जवाब सुन कर सब हँसने लगे ।

शाम को प्रोफेसर याज्ञिक ने रामचरित मानस का पाठ किया । पहले श्रीयुत याज्ञिक महाशय श्री श्री माँ के पास आना जाना करते थे । पर बाद में छोटी माताजी के विश्व-उद्धार प्रयास के साथ संयुक्त रहने के कारण वे इतने दिन माताजी के पास नहीं आये । मैंने आज ही उनको आश्रम में आकर पहली बार पाठ करते देखा । विदा लेने से पहले माताजी ने भी कहा, "कुछ वर्षों के बाद पिताजी को देखा गया ।"

सूक्ष्म देह में गोपीबाबू का माताजी के पास आगमन

शाम को पाठ के बाद आकर हमलोग जब आँगन में खड़े हुए तब माताजी वहाँ कुछ देर टहलने के उपरान्त अपने कमरे में चली गयीं । थोड़ी ही देर बाद माताजी के पास जाने के लिए मेरा बुलावा आया । माताजी के पास खुकुनी दीदी एवं कमल ब्रह्मचारी थे । जिस बात को लेकर मुझे बुलवाया गया था उसी प्रसंग को लेकर गत शुक्रवार रात के १० बजे से ११ बजे तक माताजी के साथ बातचीत हुई थी । घटना यह थी— जन्माष्टमी के दो एक दिन पहले माताजी ने गोपीबाबू को सूक्ष्म में देखा था । उस समय उनके साथ अखण्ड महायोग के प्रसंग में आलोचना हुई थी । यह बात माताजी ने गोपीबाबू को कही, तथा सूक्ष्म में उनके साथ जो भी आलोचनायें हुई हैं वह उनको लिख कर भेजा जायगा यह कहा गया । माताजी ने खुकुनी दीदी से इस प्रसंग में कुछ-कुछ लिखवाया भी है । उसे सुनने के लिये मुझे रात्रि में बुलवाया गया था उस समय उस लेख

में कुछ परिवर्तन व परिवर्द्धन किया गया था। परिवर्तित आकार में उस लेख को सुनने के लिए माताजी ने आज मुझे पुनः बुलाया।

माताजी ने जो जो लिखाया उसकी पुनरावृत्ति मेरे द्वारा सम्भव नहीं है। विषय अत्यन्त जटिल था एवं माताजी का उसको स्पष्ट करने का तरीका अनन्य साधारण था। उसे सुनकर मेरी जो धारणा बनी उसे ही अपनी याददाश्त के लिए यहाँ लिख कर रख रहा हूँ।

गोपीबाबू सूक्ष्मदेह में आकर जहाँ बैठ कर माताजी के साथ बातचीत कर रहे थे वह स्थान कुछ-कुछ जंगल जैसा था। घास, पत्ते इत्यादि थे एवं आस पास कुछ लोग भी थे। पर गोपी बाबू का उस ओर लक्ष्य नहीं था। वे अपने ही भाव में तन्मय थे। श्री श्री माँ के प्रति उनका भाव भी परम आत्मीय भाव था साथ ही वह गम्भीर श्रद्धा युक्त था। छोटी माताजी के सस्पर्श में आने के उपरान्त गोपीबाबू कभी भी माताजी को भूमिष्ठ (धरती पर सिर टेक कर) होकर प्रणाम नहीं करते थे, केवल हाथ जोड़ कर प्रणाम किया करते थे। पर उस दिन सूक्ष्मदेह में आकर माताजी को भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया। माताजी ने कहा "सूक्ष्म में जो होता है यद्यपि स्थूल देह में उसका प्रकाश नहीं है, तथापि उसका कुछ फल स्थूल में भी रह जाता है।" आश्चर्य की बात तो यह है कि माताजी के उस दर्शन के बाद जिस दिन गोपीबाबू माताजी के साथ भेंट करने आये थे उस दिन उन्होंने माताजी को दो बार भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया था।

माताजी ने सूक्ष्म देह में गोपीबाबू के अखण्डयोग के सम्बन्ध में जो कहा था वह इस प्रकार है—लोग किसी एक धारा को लेकर साधन करते करते कभी-कभी ऐसी स्थिति प्राप्त करते हैं जिसको अतिक्रम करके अग्रसर होना उनके लिये कठिन हो जाता है। अवश्य ही यह स्थिति साधक को गुरु की इच्छा से मिलती है एवं गुरु कृपा करके यदि उसे उस अवस्था से उद्धार न करें तो उसके लिए उस स्थिति से मुक्त होना कठिन है। साधक में व्यक्तिगत प्रशंसा का भाव सूक्ष्म रूप से क्रिया करता रहता है अतः वह इस स्थिति में आबद्ध हो जाता है। वह स्वयं यह समझ नहीं सकता है कि उसमें समष्टि कल्याण की भावना ही प्रधान हो जाती है। साधक साधन पथ में जिन क्रियाओं के द्वारा अग्रसर होता है, अनेक समय उस क्रिया का फल भी प्रत्यक्ष होता रहता है। इस अवस्था में यदि समष्टि कल्याण की ओर उसका लक्ष्य चला जाय तब वह उसके कर्म एवं कर्मफल के साथ युक्त होने के कारण परमानन्द लाभ होता है। अतिशय आनन्द के उद्रेक में वह अनेक समय उस भाव को प्रकाशित कर देता है। जगत् में जो समष्टि मुक्ति की बात उठी है वह इस प्रकार ही हुई है। इस अवस्था में साधक के भविष्य की ओर लक्ष्य नहीं पड़ता। यदि पड़ता तो वह समष्टि मुक्ति के आनन्द में एक जगह पर रुक नहीं सकता। स्वभाव से भी यह समष्टि मुक्ति का प्रतिबिम्ब आकर साधक के ऊपर आ सकता है, कारण स्वभाव में ही समष्टि मुक्ति, व्यष्टि मुक्ति, सब कुछ ही तो है। पर स्वभाव का स्पर्श लगकर यदि समष्टि मुक्ति का भाव साधक में जाग उठे, तब साथ ही साथ उसकी दृष्टि भविष्य की ओर भी पड़ जाती है, जिसके फलस्वरूप वह लक्ष्य भ्रष्ट न होकर साधन पथ पर चलते रहते हैं एवं समय पर इस समष्टि मुक्ति का यथार्थ मर्म समझ सकते हैं।

इस सम्बन्ध में माताजी ने काफी बातें लिखवायी हैं, आज भी माताजी के पास प्रायः एक घंटा रहकर घर चला आया।

(क्रमशः)

मेरे आश्रम आने का छोटा सा इतिहास

—स्वामी नारायणानन्द तीर्थ

आश्रम में श्री चण्डीमण्डप के बनने पर उसकी दो मंजिल पर नारायण जी के लिए, कमरा, मंदिर और रसोईघर बना तब श्री श्री माँ ने नारायण विग्रह को लेकर स्थायीभाव से रहने के लिए मुझे निर्देश दिया। इस प्रस्ताव पर मेरे आपत्ति करने पर माँ ने एक दिन मेरे सामने स्वामी परमानन्द जी से कहा, देखो परमानन्द यह जब नारायण लेकर आश्रम में नहीं आयेगा तब मंदिर रखने की जरूरत ही क्या? उसे तोड़ दो। "यह सुनकर मुझे लगा कि माँ ने असन्तुष्ट होकर ही ऐसा कहा होगा। श्री श्री माँ को असन्तुष्ट करने का थोड़ा भी उद्देश्य या साहस मुझमें नहीं है। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि उनके असन्तोष के द्वारा मेरा मंगल नहीं होगा। वरन् उनको प्रसन्न करना ही मेरे जीवन का लक्ष्य है। श्री श्री माँ के आदेशानुसार बंगाल 1353 के 2 अगहन (18 नवम्बर सन् 1946) सोमवार को श्री नारायण जी को लेकर माँ का यह अधम पुत्र स्थायीभाव से आश्रमवासी हुआ। इस प्रकार आज श्री श्री माँ का आदेश पालन करने पर मेरे मन की ग्लानि थोड़ी दूर हुई। वह शालिग्राम शिला अब भी श्री श्री माँ के काशी आश्रम में श्री अन्नपूर्णा जी के मन्दिर में विराजमान है। उनकी सेवा पूजा के लिए मेरी क्षुद्र शक्ति के अनुसार दिये हुए दो हजार रुपये आश्रम कोष में रक्षित हैं। आश्रम की संचालन-व्यवस्था के साथ किसी प्रकार का सम्पर्क न रखकर मैं स्वतंत्र भाव से ही आश्रमवास करने लगा। जैसे पहले मैं स्वयं रसोई करके ठाकुर के भोग के बाद प्रसाद ग्रहण करता था, आश्रम में आकर भी वैसा ही चलने लगा।

श्री श्री माँ प्रायः ही कहती थीं इस शरीर का तो जगत व्याप्त एक ही आश्रम है। तुम लोग इस शरीर को जहाँ रखते हो तुम लोग भी वहाँ रहो। इस शरीर की यही बात है कि माँ के सन्तानगण मिलकर एक जगह रहें। यही वह चाहती हैं। हम लोगों की आपस में जो मनोमालिन्य की सृष्टि होती है उसका प्रभाव श्री श्री माँ की दिव्य श्री देह के ऊपर पड़ता है, यह मैं 50 साल से देखता आ रहा हूँ। अतः एक हम यदि श्री श्री माँ को इस प्रकार के अप्रीतिकर दृश्य अवलोकन का अवसर प्रदान न करें तो माँ को और भी अंतरंग के रूप में पायेंगे एवं माँ की इस प्राकृत चिन्मय देह को स्वस्थ रखने में सहायता करेंगे।

दीदी गुरुप्रियादेवी के साथ मेरा मनमुटाव श्री श्री माँ ने किस प्रकार दूर किया उसको न लिखने से यह प्रसंग आसम्पूर्ण रह जायेगा। इसके अलावा जो इस घटना को पढ़ेंगे वे सोचेंगे कि शायद यह मनमुटाव अभी तक चल रहा है। अप्रीतिकर वाद-विवाद को मिटाने का अनोखा कौशल श्री श्री माँ का है उसे ही दिखाने के लिए स्मृति की घटना को लिपिबद्ध करने का प्रयास कर रहा हूँ।

सन् 1946 के अगस्त महीने में सोलन के राजा साहब श्री दुर्गासिंह जी ने अपनी राजधानी सोलन में राजोचित उपचार के साथ श्री शारदीया दुर्गापूजा की थी। उसी उपलक्ष में दुर्गा सिंह जी के विशेष आग्रह और प्रार्थना पर उनकी इष्टरूपिणी श्री श्री माँ सन्तान की मनोकामना पूरी करने के लिए ही अपने भक्तों सहित वहाँ पधारीं काशी से सोलन रवाना होने के थोड़े पहले उन्होंने मुझे भी अपने साथ जाने का आदेश दिया। अपनी आर्थिक व्यवस्था एवं दीदी के साथ मनोमालिन्य होने के नाते मुझे उनके साथ जाने की कोई इच्छा नहीं थी। मानसिक अशान्ति लेकर किसी भी आनन्दोत्सव में योगदान देना शोभा नहीं देता और अपने को भी अच्छा नहीं लगता। परन्तु माँ के बार-बार कहने पर मुझे जाना ही पड़ा। दैवेच्छा परेच्छा एवं प्रारब्ध बहुत कुछ करा लेता है जो मनुष्य सोच भी नहीं सकता।

षष्ठी के दिन प्रातः मैं श्री दुर्गा प्रतिमा के सामने खड़े होकर ठाकुर दर्शन कर रहा था। श्रीमान विशुभट्टाचार्य (विश्वेश्वरभट्टाचार्य, माँ उनको पुजारी नियुक्त कर काशी से सोलन ले गयी थीं) वे आकर मुझसे कहा कि माँ आपको बुला रही हैं। माँ कहाँ हैं पूछने पर उन्होंने कहा कि उत्तर की ओर कोने के कमरे में माँ बुला रही हैं सुनकर मैं जल्दी से गया और देखा कि कमरे में माँ और दीदी आमने-सामने खड़ी हैं। उनका हाव-भाव देखकर लगा कि मानों मेरे लिए ही प्रतीक्षा कर रही हैं। मेरे माँ के पास जाते ही उन्होंने किसी प्रकार की भूमिका न कर मेरा हाथ और दीदी का हाथ अपने दोनों हाथों के अन्दर लेकर बोलीं तुम लोग पहले जैसे भाई बहन की तरह रहते थे, आज से वैसे ही भाई बहन की तरह रहना जो कुछ हो गया है, उन अतीत की घटनाओं को भूल जाओ। इन थोड़े शब्दों के साथ ही माँ की आँखों में पानी छलकने लगा। दीदी और मैंने और कीई भी बात न कहकर माँ के श्री चरणों में भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया एवं उनका आदेश मान लिया। हमारे आपसी वाद विवाद एवं मन-मुटाव देखने से ही महाभावमयी श्री श्री माँ की चिन्मय देह में भाव-वैलक्षण्य दृष्टिगोचर होता है, इसे सभी भक्त देखते आ रहे हैं। इस प्रकार श्री श्री माँ हमारा परस्पर मनमुटाव एक क्षण में मिटा देती हैं। करुणामयी माँ मुझको क्यों काशी से सोलन दुर्गापूजा में इतना आग्रह कर ले आयीं, वह मैं अब समझा।

*

*

सन्तान के प्रति श्री श्री माँ का असीम स्नेह

परम स्नेहमयी श्री श्री माँ अपनी सन्तानों की सुविधा असुविधा एवं खान-पान के सम्बन्ध में भी कितना सोचती हैं। उदाहरणस्वरूप एक छोटी सी घटना यहाँ दे रहा हूँ। बहुत पुरानी कहानी है पश्चिम में जेठ और आषाढ़ के महीने में बहुत गर्मी पड़ती है। उस गर्मी में माँ के साथ हम लोग अल्मोड़ा जा रहे थे। अल्मोड़ा जाने पर काठ गोदाम तक रेलगाड़ी से जाना पड़ता है, फिर चौरासी मील मोटर या बस द्वारा जाना पड़ता है। इस चौरासी मील जाने में इतनी परेशानी होती है कि

लगता है मानों चौरासी योनि घूमकर आये हैं इसीलिए हम लोग कहा करते हैं कि अल्मोड़ा जाने से अर्ध मृत होना पड़ता है ।

काशी से दिन के दस बजे भोजनार्द्रि कर हमलोग देहरादून एक्सप्रेस से रवाना होकर रात के प्रायः बारह बजे बरेली जंक्शन पहुँचे । वहाँ से कुछ घंटे विश्राम कक्ष में रहकर सुबह पाँच बजे छोटी लाइन की गाड़ी से दिन के 11 बजे काठगोदाम पहुँचे । बरेली जंक्शन में हम लोगों में से कईयों ने रात रहते ही सन्ध्यादन्दनादि समाप्त कर लिया था । प्लेटफार्म के आखिर में एक वड़ा पेड़ था उसके नीचे बैठकर नित्यकर्म समाधान किया, क्योंकि काठगोदाम स्टेशन में धूप में सन्ध्या आदि की कोई सुविधा नहीं थी । काठगोदाम से अल्मोड़े के लिए दोपहर के साढ़े बारह बजे वस चलेगी । स्टेशन पर उतर कर देखा कि बहुत गर्मी है । सिर पर सूर्य की प्रचण्ड गर्मी और रास्ते की जमीन भी तप रही है । रास्ते पर पैर रखा नहीं जा रहा था । अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँचने में हमें कम से कम सात घंटे लगते हैं । अतः सायंकाल सात से पहले हम लोग किसी प्रकार भी अल्मोड़ा नहीं पहुँच पायेंगे । इसीलिए काठगोदाम स्टेशन पर पहुँचते ही हम में से कोई कोई मुँह हाथ धोकर बाजार में पूड़ी, सब्जी दही चटनी और मिठाई खाने गये । किसी किसी ने फल खाया और बरफ डाला हुआ शरबत पिया । जो लोग रास्ते में कुछ नहीं खाते हैं वे निरम्बु उपवास रहेंगे । माँ के साथ नाना संस्कार के लोग हैं ।

माँ गाड़ी से उतरकर सीधा बस में जाकर बैठी क्योंकि रास्ते में खड़े होने का उपाय नहीं था । विश्राम गृह में भी लोगों की भीड़ थी । वहाँ सुविधाएँ-असुविधायें अनेक थीं ।

माँ ने दीदी से कहा-देख तो खुकुनी, यहाँ दही तरबूज और चीनी मिलती है या नहीं (दीदी के घर का नाम खुकुनी था) श्री श्री माँ की कृपा से खुकुनी दीदी में अद्भुत शक्ति है । यह महिला जिसे न कर सके, ऐसा कोई काम नहीं है । माता जी बाघ की आँखें माँ में तब भी ये ला सकती हैं । कहीं से दही और तरबूज तो दीदी ले आयीं पर स्टेशन के आस पास कहीं चीनी नहीं मिली । इसीलिए चीनी लाने के लिए बाजार चलीं । उनको बाजार जाते देख मैं भी उनके साथ चला । बाजार से चीनी खरीद कर दही एवं तरबूज लेकर हम लोग माँ के पास गये । मैं समझ नहीं पा रहा था कि दीदी को इतनी तकलीफ देकर माँ ने ये सब चीजें क्यों मंगायी ? माँ ने दीदी से कहा कि माँ के मुरादाबादी लोटे में तरबूज, दही और चीनी से शरबत बनाओ । दीदी जब ये शरबत बना रही थीं तब मैं पास खड़ा होकर यह सोच रहा था कि इस शरबत के लिए माँ ने दीदी को कितना कष्ट दिया फिर सोचा कि शायद इस प्रकार माँ दीदी का प्रारब्ध कर्म खण्डन कर रही हैं ।

कुछ लोग कहते हैं कि जीव का कर्म भोग के बिना समाप्त नहीं होता, यह बात मुझे असम्भव सी प्रतीत होती है । कोटि कोटि जन्मों का कर्मफल क्या जीव, भोग द्वारा समाप्त कर सकता है । एक जन्म के विविध कर्मों के फल मनुष्य दस जन्मों में भी भोग करके समाप्त नहीं कर सकता है । ऐसा न होने पर बहुजन्मों के फल जीव किस प्रकार भोग से सम्पन्न करेगा ? इससे निष्कृति पाने का कोई उपाय नहीं है ? जीव क्या अनन्त काल इस प्रकार भोग करता जायेगा ? चिन्ता का कोई

कारण नहीं है। इसका उपाय श्री भगवान ने गीता में कहा है "ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा ।" ज्ञानाग्नि सब प्रकार के कर्म अर्थात् प्रारब्ध, संचित व क्रियमाण कर्मसमूहों को जलाकर भस्मसात् कर देती है। किसी किसी के मत में ज्ञान क्रियमाण व संचित कर्मों का नाश करता है पर प्रारब्ध कर्म जिसके द्वारा वर्तमान देह प्राप्त हुई है, वह भोग बिना नष्ट नहीं होती। हमारी ब्रह्मविद्या स्वरूपिणी श्री श्री माँ कहती हैं "ज्ञानाग्नि के द्वारा क्रियमाण, संचित और प्रारब्ध तीनों प्रकार के कर्म ही विनाश को प्राप्त होते हैं। ऐसा न होने पर गीता में श्री भगवान 'कर्मणि' इस बहुवचन का प्रयोग न करते। जैसे फूस में या जूट में आग लगने पर वह पूरा का पूरा ही भस्मीभूत होता है यहाँ भी वैसा ही होता है। सब कुछ भस्मीभूत हो जाता है। अज्ञान या अविद्या से ही कर्म की उत्पत्ति होती है। अब प्रश्न यह उठता है कि इस अज्ञान या अविद्या का नाश किस प्रकार होगा ? मैं ही एक हूँ, केवल मैं कर्ता नहीं भोक्ता नहीं। मैं निष्क्रिय आत्मा ब्रह्म, मेरा कर्म कैसे रह सकता है। जिसका कर्म नहीं उसका कर्म भोग भी नहीं। आचार्य शंकर ने अपने विवेक चूड़ामणि नामक ग्रन्थ में स्पष्ट किया है कि प्रारब्ध तब तक ही सिद्ध होता है जब तक देह में आत्मबुद्धि या आत्म भावना है। देह में आत्म भावना मुमुक्षु का काम्य नहीं है। इसीलिए ज्ञानी का भी प्रारब्ध कर्म भोग होता है, इस प्रकार की धारणा करनी उचित है।

प्रारब्ध सिदध्यति तदा यदा देहात्मना स्थितिः ।

देहात्मभावो नैवेष्टः प्रारब्धः त्याज्यतामतः ॥ 46 ॥

मुझे से पृथक् कोई वस्तु नहीं है 'अहमेव परं ब्रह्म' मैं ही एकमात्र परमात्मा, 'एकमेवाद्वितीयम्' दूसरा कोई नहीं है, इस प्रकार शुद्ध ब्रह्मज्ञान ही इस अज्ञान या अविद्या की निवृत्ति कर सकता है, दूसरा कोई नहीं। और एक उपाय भी भगवान ने गीता में निर्दिष्ट किया है वह है आत्मसमर्पण-योग। उनके श्रीमुख की वाणी—

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।

अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

तुम सब प्रकार के धर्म व कर्म का परित्याग कर केवल मुझे ही आश्रय बनाओ, मेरे शरणागत हो, तुम शोक मत करो, मैं तुमको सब प्रकार के पापों अर्थात् कर्मों से मुक्त करूँगा।

प्रसंगान्तर में चल गया। कहाँ दीदी से माँ शरबत तैयार करा रही थीं। उस प्रसंग में प्रारब्ध भोग की बात उठी थी उसी सूत्र को लेकर कर्म फल खण्डन की व्याख्या हुई। शरबत तैयार होने पर दीदी से शरबत थोड़ा उनके मुँह में डालने को कहा।

श्री श्री माँ प्रायः पचास वर्षों से भी अधिक, अपने हाथों से नहीं खातीं, उनको खिलाना पड़ता है। इस सम्बन्ध में वे कहती हैं, जगत में जितने हाथ हैं सब ही उनके हाथ हैं। कितनी व्यापक उनकी दृष्टि है। बस में बैठकर थोड़ा सा शरबत पीकर माँ ने लोटे को अपने हाथ में लेकर मुझे

बुलाया । मेरे पास जाते ही माँ ने मुझको कहा मुँह खोलो तो, बच्चों की तरह मेरे मुँह खोलते ही माँ ने अपने कपड़े के आँचल को पानी में धोकर उससे लोटे का मुँह ढक दिया और छानकर शरबत मेरे मुँह में डालने लगीं । माँ बस में बैठी थीं और मैं नीचे खड़ा था इसीलिए मेरे मुँह में शरबत डालने की असुविधा नहीं हुई । श्री श्री माँ के श्री हस्तों से उनका प्रसाद अमृत तुल्य पानीय मेरे मुँह में गिरने लगा और मैं तृप्ति के साथ उसे पान करने लगा । दीदी के लिए थोड़ा भी प्रसाद लोटे में बचा था कि नहीं यह कह नहीं सकता । रहने से भी वह थोड़ा सा ही था । आनन्दातिरेक में उधर मेरा लक्ष्य ही नहीं था, प्रसाद पर प्रीति तब ही अधिक होती है जब प्रसाद सुस्वादु होता है एवं अधिक मात्रा में पाया जाता है । यह मेरा जन्मगत स्वभाव है । कणिका में तृप्ति नहीं है । उपनिषद् में शायद इसीलिए कहा गया है कि "यत् वै भूमा तत् सुखम् नाल्पे सुखमस्ति" भूमा में ही सुख है, थोड़े में सुख नहीं है । इसीलिए सब भूमा को ही चाहते हैं ।

"सेवा उसको कहा जाता है जो परमार्थ के रास्ते में ले जाय, सेवक वही है जो परमार्थ में ले जाये । वहीं असली बन्धु, असली सेवा, निष्काम सेवा ।"

-श्री श्री माँ

आनन्दमयी स्मृति

[पूर्वानुवृत्ति]

—कु. चित्रा घोष

माँ के साथ २४ घंटा

ग्यारह बजे के करीब नीचे कोलाहल सुनायी पड़ा। जाकर देखा श्री श्री माँ आ गयी हैं। हम लोगों को बहुत खुशी हुई। अवधूत जी को साथ लेकर माताजी ने प्रवेश किया एवं नाटमन्दिर में बैठीं। अवधूत जी से हमलोग काफी डरते हैं। अतः लड़कियाँ नीचे ही नहीं उतरतीं। मैं हिम्मत बाँधकर नीचे जाकर नाटमन्दिर के दरवाजे के किनारे बैठी। कल शाम को माँ को देखा था। अब तक आँखें तड़प रही थीं इस मधुर मूर्ति के दर्शन के लिये अतः बिना पलक गिराये एकटक माँ को निहारती रही। माँ मेरी तरफ देख रही थीं पर लग रहा था दृष्टि और ख्याल दूसरी ओर है। बाद में माँ ने मुझे बुलाया। माँ तो कहती हैं, "सब को ही पहचानती हूँ पर बाबा लोगों के सामने पहचानने का व्यवहार नहीं कर सकती।"

अवधूत जी को माँ यहाँ के मन्दिर के बारे में समझा रही थीं। बाद में मन्दिर के पुजारी को बुलाकर कहा, "बाबा को सब समझाओ।" माँ की दृष्टि आस-पास के देवी-देवताओं के चित्रों पर थी ऐसा लग रहा था। यद्यपि श्री श्री माँ का दिव्य मुखमण्डल अलौकिक भाव से प्रकाशित था।

अवधूत महाराज जी कच्चे नारियल का पानी पीने बाहर गये। इसी बीच माँ ने मुझे बुलाकर पूछा—"कब आये? मन्दिर दर्शन हुआ? यह कहकर माँ मधुर हँसीं। इतने में अवधूत जी लौट आये। माँ अवधूत जी से विदा लेकर ऊपर आ गयीं। महाराज जी श्रीवास आंगन में चले गये। हरिबाबा भी अपने भक्तों के साथ वहीं पर हैं।

ऊपर आते ही माताजी बरामदे में टहलने लगीं। लम्बे काले बाल पीठ पर लहरा रहे थे। पर माँ के भाव में बेचैनी परिलक्षित हो रही थी। मैं कमरे की चौखट पर खड़े होकर माँ को देखने लगी। अवधूत जी गोविन्दजी का प्रसाद नहीं लेंगे अतः माँ का ऐसा भाव है। करीब दस बार टहलने के उपरान्त माँ ने अचानक मुझे पूछा—"तूने कुछ खाया?" मैंने जवाब दिया—"आपके दर्शन के बिना कैसे खाती?" माँ ने अन्दर आकर पुष्पा से कहा—"उसे पूरी हलुआ दो।" नीचे जो लोग आये थे पुष्पा ने उनको जलपान दे दिया था। हलुआ बचा नहीं था। इसलिए उसने मुझे पूरी के साथ मिठाई दी। माँ पुष्पा से हलुआ देने को कहने लगीं। पुष्पा ने कहा, "हलुआ नहीं है।" माँ ने कहा, "तुम केलापत्ता उठाकर देखो तो हलुआ है या नहीं?" आश्चर्य की बात थी। देखा ठीक मेरे ही लायक हलुआ थाली के एक ओर पड़ा हुआ है। माँ तब मेरी ओर देखकर हँसने लगीं, माँ ने मुझे बाहर जाकर खाने को कहा एवं पुष्पा से मुझे पानी देने को कहा।

माँ थोड़ा घूम फिरकर अपने कमरे में आयीं। माँ ने बुनिदी को अवधूतजी के लिये रसोई बनाने भेजा। अचानक माँ ने हमारे कमरे में आकर हमको अपना सामान बड़े कमरे में ले जाने को कहा। माँ इस कमरे में सोयेंगी। हमलोग कुछ कह नहीं सके। माँ के कथनानुसार जिस कमरे में माँ की व्यवस्था की गयी थी उस कमरे में लाकर हमने सामान रखा। मेरे हाथ में बिन्दु का बिछावन देखकर माँ ने कहा, "तेरा बिछौना ला" मैंने उसे ही अपना बिछावन कह कर रखा। मैं तो बिछावन ले ही नहीं गयी थी। माँ ने स्वयं खड़े रहकर पानी की सुराही से लेकर सभी कुछ करीने से रखवाया।

जल्दी से माँ का कमरा साफ करके माँ का बिस्तर लगा दिया। इतने में अवधूत जी आकर घुटने टेककर भोजन के लिये बैठे। भोजन में सिके आलू और अँगूर था। माँ और दीदी ने सामने खड़े रहकर भोजन करवाया। महाराज जी के भोजन के उपरान्त माँ ने दीदी से कहा, "दीदी मैं स्नानघर में जाऊँगी।" माँ नीचे गयीं हमलोग माँ की पानी की बाल्टी वगैरह सब रखकर प्रसाद लेने गये।

नाटमन्दिर में बैठकर करीब पच्चीस प्रकार के विविध व्यञ्जनों के साथ भात व पुलाव आदि भलीभाँति प्रसाद पाकर ऊपर आयी। आकर देखा माँ भोग में बैठी हैं। माँ ने मुझे देखते ही कहा, "खाना खाकर आयी हो अब तखत पर लेट जा।" यह कहकर माँ अपने कमरे में विश्राम के लिये गयीं।

दीदी भी सो गयीं। दीदी एक कपड़े से आयी हैं अपने कपड़े का सूटकेस भूल आयी हैं। चुपके चुपके दीदी की नयी धोती लाकर उसे पीली मट्टी में रंगकर के सुखा लिया गया। हमलोग थोड़ा विश्राम करने लगे।

चार बजते न बजते माँ के गले की आवाज सुनकर हम उठ गये। माँ के कमरे में जाकर देखा माँ तखत पर बैठकर कमलदा, स्वामीजी तथा अन्यान्य सबके साथ बात कर रही थीं। मेरे दरवाजे पर जाते ही माँ ने कहा, "अकेलापन लग रहा है क्या? चाय पियोगी? इत्यादि।

इसके कुछ देर बाद ही माँ उठ पड़ीं, नंगे पाँव ही छत पर टहलने लगीं। पीठ पर हर समय की तरह खुले बाल लहरा रहे थे। हमलोग पीछे-पीछे टहल रहे थे।

अचानक माँ ने कहा, "पञ्जाब में साधु-सेवा बड़ी अच्छी तरह होती है। यहाँ साधुसेवा ठीक से नहीं होती। योगीराज (सोलन महाराज) आ रहे हैं देख माताजी बोल उठीं—"योगीराज-योगीराज-राजा पर योगी एक ही ऐसे हो सकते हैं सब नहीं होते। सुन्दर भाव है।

अभी चर्चा हो रही थी, दूसरे दिन प्रातः लड़कियाँ चली जायेंगी। माताजी शाम के तीन बजे मोटर से रवाना होवेंगी। लड़कियाँ प्रातः छः बजे की गाड़ी से रवाना होवेंगी तथा उसी रात जगन्नाथ पुरी जायेंगी। मैं सोच रही थी प्रातः छः बजे चले जाने से तो माँ का संग तो आज तक के लिये ही रहा। मेरे मन की बात को समझते हुये मानो माँ ने कहा, "चित्रा एक बजे की गाड़ी से जायेगी। वह तो पुरी नहीं जा रही है। (किसी भक्त को) ज्योतिष तुम उसे पहुँचा देना।" इतना

सुनना था कि मेरे आनन्द का ठिकाना न रहा । माँ आप कितना स्नेह रखती । मन ही मन बोल उठी ।

बिन्दु ने मुझसे कहा था उसने सुरधनी के दर्शन नहीं किये थे । (सुरधनी गंगा जी का पर्यायवाची है) माँ से मैंने कहा, "माँ हमलोगों ने सुरधनी के दर्शन नहीं किये ।" माँ-"अच्छा, तुमलोगों ने सुरधनी के दर्शन नहीं किये । जाओ अभी जाकर देख-आओ ।" इतना कहकर एक वृद्ध सज्जन को हमारे साथ कर दिया ।

उन वृद्ध के साथ हम पैदल ही सुरधनी के तट पर गये । सुरधनी की महिमा अपार है । इसी के तट पर महाप्रभु श्री गौराङ्ग अपनी मण्डली के साथ कीर्तन करते थे । बिन्दु ने अवगाहन स्नान किया था । पुष्पा, गंगा, और मैंने नहाया नहीं । जब लौटकर आ रही थी तब उन सबने कहा, "माँ जरूर बाबा लोगों के साथ दर्शनों के लिए निकल गयी होंगी । पर गोविन्दजी के मन्दिर में पहुँचकर देखती हूँ कि दीदी चिड़ियों का बन्डल लेकर माँ के कमरे से निकल रही हैं । थोड़ी ही देर बाद माँ हमारे कमरे में आयीं । मैंने माँ को देखते ही कहा, "माँ क्या आप दर्शनों को जा रही हैं ? हम लोग क्या आपके साथ जायेंगे ? वैसे ही माँ ने दोनों हाथों से चल, चल नीचे जा । कहकर हमलोगों की माँ के साथ मन्दिर-दर्शन की अभिलाषा को सार्थक कर दिया ।

नीचे आकर किञ्चित् प्रतीक्षा करते ही माँ आ गयीं । तीन रिक्शे किराये पर लिये गये । हम लड़कियाँ कौन किस पर बैठेंगी सब माँ ने ही ठीक कर दिया । गंगा-पुष्प एक में बिन्दु व चित्रा दूसरे में माँ एवं पैरों के पास दीदी तीसरे में बैठे । माँ का रिक्शा आगे जाना चाहिये । पर आज तो माँ अभिभाविका की भूमिका निभा रही हैं । कुछ अल्पवयस्क कन्यायें माँ के साथ हैं । इनके माता-पिता ने माँ पर पूर्ण भरोसा कर इन्हें माँ के साथ किया है । माँ के सभी कार्य लोकशिक्षा के लिये त्रुटिहीन होते हैं । आज पहले रिक्शे पर हमलोग बीच में माँ एवं आखिर में गंगा व पुष्प इस प्रकार हमलोग रवाना हुए । साथ के साधु ब्रह्मचारी पैदल चल रहे थे । मैंने एकबार पीछे मुड़कर देखा रिक्शे पर माँ कैसी दीख रही हैं ? माँ का बैठने का ढंग बड़ा ही अनोखा था । माथे पर जूड़ा बँधा था । माँ महारानी के जैसे लग रही थीं । माँ के नेत्रों की दृष्टि आस-पास के परिदृश्यों पर नहीं थी । न जाने माँ किस अदृश्य लोक में विराजमान थीं ।

पहले हमलोग श्रीवास आँगन में महात्माओं को लेने गये । पर महात्मा लोग तब तक तैयार नहीं हुए थे । विग्रह दर्शन के लिए माँ आगे बढ़ीं । माँ के साथ हमलोग भी पीछे-पीछे हो लिये । श्रीवास आँगन के मन्दिर में सब अवतारों की मूर्तियाँ हैं । सभी मूर्तियाँ एक दीर्घा में पास-पास सजाकर रखी-हुयी थीं ।

माँ ने मन्दिर के सेवक को बुलाकर कहा, "सब समझा दो ।" वें भी माँ को मूर्तियों के बारे में समझाने लगे माँ भी बच्चों की भाँति बड़े ध्यान से सुन रही थीं । इतने में अचधूत जी और हरिबाबा उपस्थित हुए । अचधूत जी को लड़कियों की उपस्थिति नापसन्द थी । अतः उनको देखकर हमलोग जरा सहम गये ।

श्रीवास आँगन से हमलोग सोने के गौराङ्ग मन्दिर में गये। वहाँ पहुँच कर देखा कि तब आरती हो रही थी। मन्दिर में घुसने के पहले ही माँ ने अपना ऊनी चप्पल उतार दिया। मन्दिर में प्रवेश करते ही श्री गौराङ्ग महाप्रभु की मूर्ति के सामने एक तरफ खड़ी होकर आरती देखने लगीं। माँ के दिव्य नयनों की भावपूर्ण-दृष्टि तथा मुख के दिव्य भाव की अपूर्व शोभा हो रही थी। उसका वर्णन शब्दों द्वारा सम्भव नहीं है। जिसने देखा वह कभी उसे भूल नहीं सकता। प्रातः काल हमलोग विग्रह दर्शन करके गये हैं, अतः इस समय श्री श्री माँ के दिव्यरूप का दर्शन ही मेरा मुख्य उद्देश्य था। अतः माँ को भलीभाँति देखने के लिये मैं लड़कों की तरफ जाकर खड़ी हो गई। तभी माँ की दृष्टि इधर-उधर मानो किसी को खोजने लगी। जैसे ही मेरी तरफ दृष्टि पड़ी। माँ ने हाथों के इशारे से मुझे अपने पीछे आकर खड़े होने को कहा। इतने में हरिबाबा एवं अवधूत जी आकर पहुँचे। माँ की कितनी ही सतर्कता।

सोने के श्री गौराङ्ग महाप्रभु की आरती समाप्त हुई। हरिबाबा ने खींचनेवाले पंखों से कुछ देर तक ठाकुर जी को पंखा झला। आरती समाप्त होने के बाद माँ ने खम्भे पर अपना गाल घिसकर ठाकुर जी को दुलार करके दोनों हाथों की मुड़ी बाँधकर धीरे-धीरे बाहर निकल आयीं। खम्भे के साथ जब माँ सटकर खड़ी थीं तब उनकी शोभा बाल गोपालके जैसे हो रही थी।

सोने के गौराङ्ग महाप्रभु का दर्शन करके रास्ते में निकलकर माँ को रिक्शे पर चढ़ाकर हमलोग पीछे-पीछे चलने लगे। माँ के रिक्शे के साथ-साथ चलने के उद्देश्य से हमलोग रिक्शे को पकड़कर दौड़ने लगे। ऐसा लग रहा था मानो महाप्रभु पुनः नवद्वीप में आविर्भूत हुए हैं। दीदी भी इस उग्र में हमारे साथ पैदल चल रही हैं। इस आनन्द की व्याख्या नहीं हो सकती। दोनों ओर रास्ते के लोग गद्गद् होकर कह रहे हैं "ढाका की माताजी आयी हैं रे, आयी हैं।"

अब हमलोग जिस मन्दिर में गये वहाँ पर ललिता सखी निवास करती थीं। मन्दिर में तब आरती हो रही थी। यहाँ भी महाप्रभु एवं नित्यानन्द प्रभु की विशाल द्वैत मूर्ति थी। बहुत ही सुन्दर श्रृंगार था। माला भी बड़े ही करीने से गूँथी गयी थी। महाप्रभु के हाथों में खिला हुआ गन्धराज था एवं गले में चार तरह की माला थी। नित्यानन्द प्रभु का श्रीविग्रह का वर्ण कच्ची हल्दी के समान था। गौराङ्ग महाप्रभु का ताम्रवर्ण था। दोनों के ही कन्धे तक घुँघराले बाल थे। आँखें बड़ी-बड़ी थीं। माँ एवं महात्माओं को ठाकुर जी के सामने ले जाया गया। हमलोग आँगन में खड़े होकर देखने लगे। वैष्णव गण हरि संकीर्तन कर रहे थे। घड़ियाल घन्टा बजाकर प्रायः १५ मिनट तक आरती हुई। माँ का वही एक भाव था। घूम फिर कर माँ ललिता सखी के कमरे की ओर गयीं। सखी के कमरे के पास एक बरामदा था जहाँ माँ एवं सखी में वार्तालाप होता था। हमने वह स्थान देखा। सुबह यह जगह हमने देखी नहीं।

बरामदे में गद्दे के ऊपर चादर बिछा हुआ एक छोटा सा बिस्तर है उसके ऊपर गद्दे से टिकी हुई साड़ी पहनी हुई ललिता सखी का चित्र है। माँ हँस हँस कर महात्माओं को ललिता सखी की सब बातें बताने लगीं। माँ मानों सखी को सामने देख रही हों।

ज्योतिषदा हमलोगों को एक तरफ लाकर कहने लगे, सखी माँ को कृष्ण भाव में देखती थीं । उनके साथ माँ का अपूर्व मधुर भाव था । माँ को देखते ही सखी घूँघट डालकर सलज्ज भाव से व्यवहार करती थीं । सखी ने एक दिन अभय से कहा था, "यह जो माँ को देख रहे हो । इनकी बात की कभी अवहेलना नहीं करना । वे यदि कहें गंगा में कूद पड़ो तो बिना कुछ सोचे उसी समय गंगा जी में कूद पड़ना ।"

हमलोग यह सब सुन रहे हैं—अचानक माँ ने आगे आकर मेरी पीठ पर हाथ रखते हुए अपने साथ चलने को कहा । पर भाग्य ने साथ नहीं दिया पास ही एक Packing Box रखा था जिसमें मेरी साड़ी फँस गयी । फलस्वरूप मैं माँ का साथ न ले सकी । साड़ी को निकालने के तुरन्त बाद मैं माँ के पास दौड़कर आयी । माँ तब दीदी की पीठ का सहारा लेकर चपल पहन रही थीं । उसके बाद हम फिर रिक्शे के साथ दौड़ने लगे । रिक्शा तेजी से आगे बढ़ गया किधर गया हम समझ नहीं सके । हमलोग इधर देखने लगे इतने में ज्योतिषदा आकर हमें मार्ग दिखाकर और एक मन्दिर में ले गये । हमने पहुँच कर देखा कि माँ रास्ते में खड़ी होकर हमलोगों की प्रतीक्षा कर रही हैं । हमलोगों को देखकर दूर से ही हाथ के इशारे से बुलाया । हमलोग पुनः माँ के साथ मन्दिर में गये । प्रातः काल भी हमने महाप्रभु का-यह मन्दिर देखा था । श्रीविग्रह छोटे होने पर भी बहुत ही सुन्दर थे । माँ काफी देर तक श्री विग्रह के सामने खड़ी रहीं एवं ठाकुर को दुलार करते हुए बाहर-आयीं ।

पुनः हम रिक्शे पर सवार हुए । मार्ग में एक विशाल वट वृक्ष देखा । हमने सुबह भी इस वट वृक्ष को देखा था । बहुत वर्षों के पहले पेड़ के खोखले में काली माता का आविर्भाव हुआ था । इसीलिये इस स्थान को सीमेंट से पक्का बना दिया था । पास ही कालीमन्दिर था । माँ काली पद्मासन में बैठी हैं लम्बी जिह्वा निकली हुई है ।

नित्यानन्द महाप्रभु जिस मन्दिर में आकर छिपे थे, हम उस मन्दिर में आये । मार्ग में माँ का रिक्शा आगे बढ़ गया था माँ-बार-बार पीछे मुड़कर हमारी प्रतीक्षा कर रही थीं । माँ का आश्रम की लड़कियों पर कितना ख्याल रहता है यह शब्दों में बाँधा नहीं जा सकता । एक क्षण भी आँखों की ओट नहीं हो इस पर ख्याल रखतीं । मन्दिर के भीतर टार्च द्वारा माँ सब चित्रों को बाबा लोगों को दिखा रही थीं । अवधूत जी माँ के साथ हैं अतः हम माँ के पीछे-पीछे नहीं गये । हमलोग नाटमन्दिर में बैठ गये ।

अब सबके लौटने की बारी है अतः रिक्शे पर बैठ कर लौट आये ।

वाङ् माधुरी

माँ-गुरु जिस तरीके से कहें उसी तरीके से करना । नाम से काम बन जाता है । नाम अगर कहो गुरु अपने आप आ जायेगा ।

प्रश्न-हमने संयम सप्ताह में जो सीखा उसे कैसे चलाते रहेंगे ?

सुन्दरलाल जी-जो अनुभव हुआ उसे रेकार्ड कर लें ।

माँ-अनुभव की बात तो कुछ ही बताते हैं । सब लोग समुदाय के बीच कहना नहीं चाहते । पिताजी ने कहा जिसको जो अनुभव हुआ इस शरीर को लिखकर दे दें ।

सुन्दरलाल-आप कहती हो अपना अनुभव न कहे । कहने पर लाभ चला जायेगा । इसका अर्थ है संयम सप्ताह में लोगों को लाभ हुआ है मैं चाहता हूँ दुनिया संयम सप्ताह करे ।

माँ-संयम तो सभी साधु महात्मा करने के लिये कहते हैं । एक डंडा लेकर यही कपड़ा पहनना, इसी ढंग से ही कहना । यह संयम नहीं है । बहुत सुन्दर बात है न । अलोम-विलोम, अपने स्थान को जाना । अपना स्थान जो प्रकट हो जाय । यह जो अलोम-विलोम की बात प्रकट होती है इसके बीच में ही तुम्हारा प्राकृत जगत् का सम्बन्ध इसी ढंग का सम्बन्ध रहे । कपड़ा पहनना आराम से चलना आराम से खाये । व्यापार-जिस का पार नहीं । व्यापार का कार्य कर्म चले । एक व्यापार बनिया का । एक (विशेष) ढंग से चलना यह भी एक व्यापार है । ढंग से चलने से दुनिया में फँस जाते हैं । यहाँ तो दुनिया का व्यवहार । दो लेकर रहा सुख दुःख । यहाँ दुःख लगा । सुख ढूँढ़ते हो दुनिया का जो सुख चाहते हो । तुम जो सुख चाहते हो वह इस प्रकार है । तुमने मकान बनाया है, सारा इन्तजाम किया । आग न लगे यह फिकर किया । मकान मन से बनायेगा मन की फुर्ती के लिये । जो करा-दो है ना-बनना और बन गया । फिर उसकी गति है टूट जाता है । दुनिया में जो कुछ बनता है टूटता है । दुःख-सुख, पाप-पुण्य, रोशनी-अन्धेरा दुनिया बन रहा । फिर दुनिया से युक्त जब तक है तब तक द्बद्ध रहता है । फिक्र रहता है । बेफिक्र नहीं होता । जो क्रिया है । कुछ टूट गया दुःख होता है । दो से जो क्षरण होता है उसका नाम है दुःख । यह जो दुनिया की चीज है दुनिया की बात है, दुनिया कर लिया । वह जो कुछ करेगा दुःख सिवाय और कुछ देगा ही नहीं । प्राकृत जगत् है और प्राकृत जगत् का स्वभाव है द्बद्ध ।

क्षणिक सुख-क्षणिक दुःख । जैसे सूरज-चंद्र प्रकाश वे नहीं घूमते छाया घूमती है । चलायमान जो है उसमें परम सुख, परम शान्ति । चाहे जो चीज लो । मनुष्य मकान, मनुष्य है तो लड़ाई हो जाती है । पैसा है तो डर है । डाकू चोरी न कर ले तो आनन्द ही नहीं आता । दुनिया में संसार में संशय का स्थल है । इससे सुख की आशा करें तो हम बेवकूफ हैं । इसलिये मूल बात तो यह है दुनिया में आशा करना वृथा है । बिल्कुल फजूल है । यह बात समझ में नहीं आती है । अगर इस बात को समझ जाये तो जैसे आग है पैर न डालें जल जायेगा ऐसा सोचकर सम्भल सम्भल कर

चलते हैं। जो सुख नहीं दे सकता। इस बात के प्रत्यक्ष होने पर देखते-देखते रमते रमते राम हो जाता है। कैसा सुन्दर भगवान का राज्य। यत्र यत्र नेत्र स्फुरे तत्र तत्र शिव स्फुरे। यत्र यत्र नेत्र स्फुरे तत्र तत्र गौरी स्फुरे। क्षणिक सुख में भी लिपट जाता है। अपना ही है ना—यह प्राकृत जगत किसका है। मेरा बनाया हुआ है। मैं अहंकार। मैं बोध। मैं जो इच्छा करता हूँ। मेरी क्रिया बन जाती है। बनाने की इच्छा हुई बना लिया। रक्षा की फिक्र। शादी कर लीया। दो हो गया। फिर दस हो गया। किसी किसी को १८-२० भी है। दुनिया में हैं। यह जो दुनिया का दुःख है। सृष्टि किसने दिया भगवान ने सृष्टि किया भगवान हटायेंगे। भगवान को दोष लगाया।

अगर ख्याल करो तो देखोगे तुम्हारी जो दुनिया है उसमें विचार करो—तुम खाते हो। तुम पढ़ते हो। मैं लिखता हूँ। मैं पास करता हूँ। मैं सुख भोग करता हूँ मेरी क्रिया से धन रहता है। मैं सुखी रहता हूँ। ध्यान किसका करते हो। अपना ध्यान आप करते हो। बिल्कुल सच बात, एकमात्र अपना ही है। और कोई नहीं।

आगामी उत्सव-तालिका

१. गुरुपूर्णिमा	५ जुलाई
२. स्वामीमुक्तानन्द गिरिजी तिरोधान तिथि	२७ जुलाई
३. स्वामी मौनानन्द पर्वत (भाईजी) तिरोधान तिथि	३१ जुलाई
४. झूलन एकादशी	३० अगस्त
५. झूलन पूर्णिमा	३ अगस्त
६. जन्माष्टमी	११ अगस्त
७. दीदी गुरुप्रिया तिरोधान तिथि	२५ अगस्त
८. भागवत जयन्ती	२३ अगस्त से ३० अगस्त
९. स्वामी अखण्डानन्द जी की तिरोधान तिथि	२४ सितम्बर
१०. श्री शारदीया दुर्गापूजा	२२ अक्टूबर से २६ अक्टूबर

नृसिंह अवतार रहस्य

अनुवादक—'परिव्राजक'

हिरण्यकशिपु क्रोध में भरकर हाथ में तलवार लिये सिंहासन से कूद पड़ा तथा खम्भे पर बड़े जोर का प्रहार किया। उसके प्रहार करते ही बड़े जोरों का भयंकर नाद हुआ तथा भगवान नृसिंह उस खम्भे से प्रकट हुए। भगवान नृसिंह का मुख तो विकराल सिंह का था पर शरीर मानव का। उनकी भयंकर गर्जना से सारा ब्रह्माण्ड कांप उठा। उन्होंने अपनी भयंकर लाल लाल आँखों से हिरण्यकशिपु की ओर देखा। गर्दन के बालों को लहराते हुए विशाल जबड़ों को फैलाया तथा तलवार की तरह अपनी लाल जिह्वा को निकाला। उनके पास उनका विद्युत के समान चमकता हुआ नाखून ही सबसे बड़ा आयुध था। अन्य कोई आयुध नहीं था। नृसिंह भगवान ने हिरण्यकशिपु पर प्रहार करने के लिए जोरों की छलांग लगाई बदले में हिरण्यकशिपु भी भगवान पर प्रहार करने के लिये हाथ में गदा लेकर दौड़ा। भगवान के सम्मुख उसका बल व प्रताप बौना साबित हुआ तथा वह लाख प्रयास करने पर भी अपने को भगवान के चंगुल से छुड़ा नहीं पाया। अंततोगत्वा नृसिंह भगवान ने अपने विकराल नखों से वैसे ही उसको विदीर्ण कर वक्षस्थल चीर डाला जैसे—गरुड़ सर्प को।

हिरण्यकशिपु की इह लीला समाप्त होते ही ब्रह्मर्षियों, देवों तथा पितरों ने भगवान नृसिंह की स्तुति की। उनका रूप इतना उग्र व विकराल था कि किसी को भी उनके समीप जाने का साहस न हुआ। हिरण्यकशिपु के मरते ही भगवान नृसिंह उसके सिंहासन पर विराजमान हो गये जो साक्षात् प्रज्वलित देदीप्यमान अग्नि ज्वाला से दीखते थे। उनकी ऐसी विकराल क्रोधाग्नि को शांत करने का साहस किसी में नहीं था। अंत में ब्रह्मा ने प्रहलाद से भगवान की क्रोधाग्नि शांत करने को कहा।

प्रहलाद बड़ी विनम्रता पूर्वक भगवान के सम्मुख गये जिसको देखते ही भगवान ने वात्सल्य से उसको अपनी गोद में बैठाया तथा वरदहस्त उसके सिर पर फेरने लगे। श्रीमद् भागवत की उक्ति कितनी यथार्थ है —

"स्वपादमूले पतितं तमर्भकं

विलोक्य देवः कृपया परिप्लुतः"

उक्त अवसर पर एक ओर भगवान का उग्र भीषण रूप देखने को मिला तो दूसरी ओर सहसा प्रहलाद की भक्ति ने उनको वात्सल्य व प्रेम से परिप्लावित कर दिया। भगवान नृसिंह ने उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर वर मांगने को कहा। प्रह्लाद तो उनके दर्शन मात्र से कृतकृत्य हो गया था। कामना हृद्यसंरोहं भवतस्तु वृणे वरम्। उसने भगवान से कामनारहित हो जाने की कामना की जबकि हिरण्यकशिपु ने ब्रह्माजी से अपने को सर्वोपरि व अपनी सभी कामनाओं की पूर्ति की मांग की।

ब्रह्माजी ने भगवान नृसिंह की स्तुति करते हुए कहा कि जो भी भगवान के इस रूप का एकाग्र चित्त से ध्यान करेगा वह सभी त्रासों से मुक्ति तथा मृत्यु के ग्रास से मुक्त होगा। भगवान ने ब्रह्माजी यह भी कहा कि असुरों को भविष्य में ऐसा वरदान न दें क्योंकि वे स्वभावतः क्रूर होते हैं। तत्पश्चात् भगवान नृसिंह अन्तधान हो गये।

श्रीमद् भागवत् के सप्तम स्कन्ध के प्रह्लाद उपाख्यान का सार भी यही है। प्राण में जब भक्तिका प्रादुर्भाव होता है तब प्रह्लाद रूपी आह्लाद का जन्म होता है। ऐसी भक्ति से आप्लावित व्यक्ति सभी प्राणियों में भगवान को देखने लगता है। उसका अहंकाररूपी शत्रु सदैव के लिये विदीर्ण हो जाता है। अहंकार रूपी असुर से मुक्त कराकर भगवान द्वारा भक्ति को अपने गोद में ले लेने की यह कलापूर्ण कथा है। भगवान का मानसरोवर अवतार प्राण साधना को उद्घाटित करता है। प्रह्लादको माँ के गर्भ में ही नारद द्वारा नारायण नाम प्राप्त हुआ था। यह प्राण स्पंदन की ऊर्ध्वगति का प्रथम सोपान है। नाभि प्रदेश से यदि प्राणों का स्पन्दन न हो तो कोई भी भक्त, ज्ञानी व कर्मयोगी अपने चरम लक्ष्य तक नहीं पहुँच सकता।

मनुष्य सामान्यतया मन व वाणी की ही दुनिया में विचरण करता है। जब तक मन व वाणी से परे न जाया जाय तब तक भक्ति का प्रादुर्भाव नहीं होता। मनुष्य ही अपने मन द्वारा मनोराज्य का निर्माण करता है अतः हृदयस्थ विश्वव्यापी प्राण की धारा से भक्ति का मिलन नहीं होता और परिणामस्वरूप भगवान का दर्शन नहीं होता। मनोराज्य में व्यक्ति वृत्तियों के घेरे में ही रहता है। मनोराज्य की अवस्था में सद्वृत्ति के जागरण पर शांति पर असद्वृत्ति के झंझावात से वह मुक्त नहीं होता। प्रह्लाद को भक्ति मार्ग से विचलित करने के लिये गुरु पुत्र शंड मर्क का प्रयोग करता है जिनके नाम का तात्त्विक भाव महत्वपूर्ण है। यज्ञ अवशिष्ट का जब ऋत्विज पान करते हैं तो कहा जाता है "निरस्तः शंडः निरस्तो मर्कः।" मन की उपमा शण्ड (सांड) व मर्क (बंदर) से दी गई है। मनोराज्य में मानव व्यग्रता व उग्रता से किसी भी क्षण उद्वेलित हो सकता है। शण्ड क्रोध द्वारा गिरा सकता है तथा मर्क काम से व्यथित कर सकता है। प्रह्लाद में भय, प्रलोभन, संशय, विद्वेष आदि नहीं हैं क्योंकि उसकी भक्ति ने उसको मनोराज्य की वृत्तियों से परे पहुँचा दिया है। वाणी का मन में तथा मन का जब प्राण में लय होता है तभी ऐसी निर्भय अवस्था आती है। प्राण का जब महाप्राण में लय होता है तब अहंकार व मनोवृत्तियों की प्रहार से रक्षा हो जाती है।

प्रह्लाद के प्राण के साथ जो नारायण का कीर्तन जुड़ गया है वह एक प्रकार से उपनिषद् का उद्गीथ गान है। जब नाभि से प्राण की उर्ध्वधारा उत्पन्न होती है तब प्रणव अथवा नारायण का कीर्तन होता है। मंत्र व नाम का नाद में विलय हो जाता है। सुषुम्ना नादमयी है और नाद जब उर्ध्वगति को प्राप्त होती है तो पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश पंच भूतों पर विजय प्राप्त हो जाता है। परिणामस्वरूप, गंध, रस, रूप, स्पर्श और शब्द पंच तन्मात्राओं के प्रदूषण से आत्मा मुक्त हो जाती है। प्रह्लाद को पहाड़ की चोटी से नीचे गिराया गया, उबलते हुए जल में डुबाया गया, धधकती आग में फेंका गया तथा भयंकर झंझावात में धक्का दिया गया। इन सब वृत्तांतों से यही तथ्य उजागर होता है कि इन चार महाभूतों का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। ये महाभूत विकृत

स्वभाव वाले हैं। इनके कुपित या विकृत होने पर जिन निम्नवृत्तियों में मनुष्य का अधःपतन होता है उनसे प्रह्लाद प्रभावहीन रहे। अब मात्र एक उपाय आकाश के शब्द तन्मात्रा को भेदना शेष था। यहाँ अहंकार का अंतिम अंश अपना मस्तक ऊँचा करता है। लौह स्तंभ तोड़कर भयंकर नाद के साथ नृसिंह भगवान प्रकट हुए। यह मेरुदंड में हुये अंतिम विस्फोट की सूचना देता है। प्रह्लाद को नारायण का साक्षात्कार हुआ पर उनका स्वरूप कैसा था ? नृसिंह के विलक्षण स्वरूप में परमात्मा के अचिंत्यगहन शक्ति का दर्शन। उसकी व्याख्या वर्णनातीत है। मेरुदंड में जब विस्फोट होता है तब प्राण के गुंजार की अर्थात् नाद का ज्योति में लय होता है। माया को नष्ट करने वाली यही महा ज्योति नृसिंह है।

लोहे के स्तंभ का फटना, नृसिंह भगवान का प्रकट होना तथा हिरण्यकशिपु का विनाश इन तीनों घटनाओं में प्राणायोग में होने वाली प्रक्रिया का निरूपण है। अनुभवी संतों की वाणी के साथ उनका मेल देखने योग्य है।

राम सनेही संप्रदाय के संस्थापक रामचरण की "शब्द प्रकाश" एक पुस्तक है। इस पुस्तक में उनको "राम नाम तारक मंत्र" जपते हुए स्वयं को जो अनुभव हुआ उसका उल्लेख है। देहभाव का नाश होते समय जो विस्फोट होता है उसका उल्लेख उन्होंने इन शब्दों में किया है -

माया मच्छर इहां विलाया ।
रंकार एक गगन सिधाया ॥
पश्चिम दिशा मेर की घाटी ।
बीस गाँठ घोर सो फाटी ॥

"मैं देह हूँ" माया का यह आभास वहाँ विलीन हो गया। रोम रोम भयंकर आवाज करती हुई अनाहत ध्वनि भी चिदाकाश में समा गयी। उसके साथ ही मेरुदण्ड में स्थित सुषुम्ना में एक कड़के की ध्वनि के साथ बीसों गाँठें टूट पड़ी।

नृसिंह भगवान ने जिन नखों से हिरण्यकशिपु का वध किया उनका संबंध इन बीस गाँठों से है। नाखूनों की संख्या बीस होती है। उधर पाँच महाभूत उनकी पाँच मात्रायें, पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ तथा पाँच कर्म इन्द्रियाँ मिलकर ये बीस गाँठें जीवात्मा को देहभाव के साथ जोड़े रहती हैं।

बीस संख्या का संबंध मस्तक में रहने वाले सहस्रार चक्र के साथ भी है। 50 वर्णों के 20 आवर्तनों $50 \times 20 = 1000$ के कारण इसे यहाँ सहस्रार कहा गया है। ये आवर्तन पूर्ण शिवोदय और शक्ति विलय का है। मनुष्य के शरीर में रहनेवाला यह ब्रह्मधाम कैलास (निर्वाण पद) है।

महाप्राण जब ऊर्ध्वगति की ओर अग्रसर होता है तब जीवात्मा को बंधनों से मुक्ति प्राप्त होती है। अहंकार की अवस्था में जो बंधन का कारण है वही आत्मशक्ति के जागरण पर मुक्ति का दाता बन जाता है। इसको "उजान पंथ" या "उलटी" साधना भी कहते हैं। नृसिंह भगवान का नाखूनों से हिरण्यकशिपु को चीरना मानो जड़त्व को चीरकर चेतना की जागृति है। प्रकृति के बंधनों में से

आत्मा को सहज अवस्था में ले जाने की प्रक्रिया है। संत कबीर ने इस प्रक्रिया का वर्णन इन शब्दों में किया है -

"पृथ्वी का गुण पाणी सोष्या ।
 पाणी तेज मिला वहिगे ॥
 तेज पवन मिलि पवन सबद मिलि ।
 सहज समाधि लगावहिगे ॥"

नृसिंह के नाखून पृथ्वी से लेकर आकाश तक के बंधन तोड़ डालते हैं। नख का एक और यौगिक अर्थ होता है। "न खः विद्यते यस्मिन् तत्" जिसमें ख आकाश नहीं है। "ख" का अर्थ आकाश, शून्य, शब्द तनमात्रा पुर, क्षेत्र, बिन्दु, इत्यादि होते हैं। नखः शब्द का अर्थ नगः, नकुलः, नक्रः, नासत्यौ इत्यादि का विशेष यौगिक अर्थ भी ध्यान में लेने योग्य है।

बौद्ध भिक्षु चित्त की (आकाश जैसी) निर्मल अवस्था को "खसम-स्वभाव" कहते हैं। अवधूत योगियों ने उसी को "गगनोपम अवस्था" कहा है। परन्तु यह ख+सम अवस्था अंतिम अवस्था नहीं है। इसको भी अमन सम अवस्था या जहाँ मन पूर्णरूप से लय को प्राप्त होता है तक ले जाना पड़ता है। तत्पश्चात् मन तथा अमन दोनों से परे—"सहजावस्था" में प्रवेश करना है। नृसिंह भगवान का मन को सहजावस्था में स्थापित करने का कृत्य ही नखः कृत्य है। इस प्रक्रिया को उद्घाटित करने वाला निम्नपद इस प्रकार है -

"सर्व रूप तह ख + सम करी जै ।
 ख + सम स्वयावे मनहुँ धरी जै ॥
 सो भी मन तह अ + मन करी जै ।
 सहज स्वभावे सो पर कीजै" ॥

नृसिंह स्वरूप ऐसी सहज अवस्था में प्रकट हुआ आत्म प्रकाश है जिसको विरोधाभाषक शब्द में ही व्यक्त किया जा सकता है। यह ऐसी अवस्था है जो खाली होते हुए भी भरी, शून्य होते हुए भी पूर्ण तथा भक्षक होते हुए भी रक्षक है और सबके अंतःकरण में जो एक अविनाशी तत्व है उसका दर्शन भी कराती है। इस दर्शन का आनंद नृसिंह की गोद में रहने वाले प्रह्लाद का अक्षय आनंद है। भगवान नृसिंह उनकी कथा का किस प्रकार आस्वादन लेना चाहिये प्रह्लाद से कहते हैं -

"कथा मदीया जुषमाणः प्रियास्त्वम्
 आवेश्य मामात्मनि सन्तमेकम् ।
 सर्वेषु भूतेष्वधियज्ञमीशं
 यजस्व योगेन च कर्म हित्वन् ॥"

"मेरी प्रिय कथा तुम सुनते रहना और सभी प्राणियों में रहने वाले अधियज्ञ स्वरूप सृष्टि के संचालक मुझे ही अकेले हृदय में स्थापित करके योग युक्त होकर मेरी आराधना करना। कर्मों को मुझे अर्पण करके सभी काम्य कर्मों का त्याग करना।"

हिरण्यकशिपु का भगवान नृसिंह द्वारा बध प्रसंग का निरूपण भागवतकार ने बड़ी युक्ति के साथ किया है। हिरण्यकशिपु का भगवान कहाँ और किस प्रकार संहार करते हैं ?

"विष्वक्स्फुरन्तं ग्रहणातुरं हरिः
व्यालो यथाखुं कुलिशाक्षतत्वचम् ।
द्वार्यर आपात्य ददार लीलया
न खैर्यथाहिं गरुडो महा विषम ॥"

"सर्प द्वारा पकड़े गये चूहे की भाँति तड़पते हुए और इन्द्र के वज्र से भी जिसकी चमड़ी चीरी नहीं जा सकती थी उस असुर को भगवान ने दरवाजे के बीच अपनी गोद में डाल दिया और जिस प्रकार गरुड़ भयंकर विषैला सर्प चीर डालता है, वैसे ही चीर डाला" ।

यहाँ इतना समझ ले कि प्रणव के गुंजार से जो प्राण झंकृत होकर उठ गया वह गरुड़ है । "त्रिपाद विभूति महानारायण उपनिषद में उर्ध्ववायु के साथ जुड़ा हुआ प्रणव को गरुड़ कहा गया है । इस प्रणव गरुड़ का भागवत में भी दर्शन होता है । भगवान जिस गरुड़ पर सवार होकर गजेन्द्र को तारने आते हैं वह "छन्दोमय" है ।

"छन्दोमयेन गरुडेन समुह्यमानः
चक्रायुधोऽभ्यगमदाशु यतो गजेन्द्रः"

"वेद गान रूप गरुड़ पर आरूढ़ होकर चक्रायुधी भगवान गजेन्द्र के पास तुरन्त आये" ।

यह वेदगान वेदों का साररूप वेद "ऋचो अक्षरो परमे व्योमन" चिदाकाश में गूँजती ऋचा है । ओमकार का गुंजार है । प्रणव से विशुद्ध हुआ प्राण सर्प के समान विषधर, विषयों में आसक्त अहंकार का शत्रु है । इस शरीर में रहने वाली इन्द्रियाँ तथा नौ द्वार भी अहंकार की निर्मयता से डगमगा जाते हैं परन्तु सुषुम्ना के दसवें द्वार में आते ही महाप्राण रूपी गरुड़ उसे चीर डालता है । यहाँ देह भाव का किस प्रकार नाश होता है इसका मार्मिक रूप व्यक्त किया गया है ।

हिरण्यकशिपु ने ब्रह्मा के पास जाकर जो वरदान मांगा वह भी अहंकार के फलस्वरूप अभय वचन है । उसने मांगा था :-

"नान्तर्बहिर्दिवा नक्तमन्यस्मादपि चायुधैः ।
न भूमौ नाम्बरे मृत्युर्न नरैर्न मृगैरपिः ॥"

"अन्दर नहीं, बाहर नहीं, दिन में नहीं, रात में नहीं । कोई आयुध से नहीं, इसके उपरांत भूमि पर नहीं, आकाश में नहीं तथा किसी मनुष्य से नहीं, किसी पशु से नहीं, मेरी मृत्यु हो ।"

अहंकार किसी प्राणी से या शस्त्र से नहीं मरता है न रात में अर्थात् जहाँ तक काल का चक्र चलता है वहाँ तक उसका नाश नहीं होता है । भूमि व आकाश में भी नहीं मरता है अर्थात् जबतक भूमि का अवलंब व अस्तित्व है तब तक अहंकार नष्ट नहीं होता है । निरालंब अवस्था में

ही अहंकार का नाश होता है। हम लोगों ने देखा कि नृसिंह भगवान हिरण्यकशिपु का वध न अन्दर करते हैं न बाहर। इस द्वार का मध्य स्थान (संधि क्षेत्र) कैसे निर्धारित किया जाय ?

श्वांस व उच्छ्वास जीवन के द्वार हैं। अहंकार उसका सहारा लेकर शरीर रूपी घर में सुख से निवास करता है। अन्दर और बाहर जगत के बीच में श्वांस तंतु बराबर चलते रहते हैं। उसी प्रकार निमेष उन्मेष से दृष्टि की तथा संकल्प विकल्प से वृत्ति का आना जाना लगा रहता है। इन सब व्यवहारों से यह सृष्टि अन्दर व बाहर दो भागों में विभक्त है। परन्तु श्वांस उच्छ्वास, निमेष उन्मेष तथा संकल्प विकल्प के बीच ऐसा संधि पल भी है जहाँ बाह्यान्तर गति नहीं परन्तु स्थिति है। निर्गन्ध होना ही ग्रंथिभेद की पूर्णावस्था है। यह विश्रान्ति कहीं दूर नहीं परन्तु हृदय के मध्य है। हृदय भी दो धड़कनों के बीच में "शांताकार" की शरण में जाता है।

यह सामान्य लोगों को समझ में नहीं आता है। समअवस्था से उत्पन्न ही वास्तविक समझ है। परन्तु प्राण, दृष्टि तथा वृत्ति जहाँ चंचल है (विषम है) वहाँ उसकी उत्पत्ति कहाँ से हो? इस सामान्यावस्था में चित्त स्थिर हो सके तो ही अहंकार की समाप्ति हो सकती है। कबीर के "भजन भजन के बीच" तथा द्वंदों से परे की स्थिति ही यह स्थिति है। प्राण की निःस्पंद, नेत्रों को निष्पलक तथा चित्त की निर्विकल्प अवस्था एक ऐसा सिंह द्वार है जहाँ नृसिंह का पंजा पड़ता है।

प्रहलाद, हिरण्यकशिपु तथा नृसिंह इन तीनों पात्रों के माध्यम से भागवतकार ने मनुष्य की प्राणमयी अभिलाषा अहंकार का दुष्परिणाम तथा परमात्मा की जीवंत कृपा का निरूपण किया है। बालक प्रहलाद ने जो आनंद व अभय गान किया है वह कोई दूसरा भी कर सकता है परन्तु सामान्य मनुष्य का गान प्रहलाद की तरह प्राण से (गंभीरता से) नहीं निकलता इसलिये वह बीच की आसुरी शक्तियों को भेदकर परमात्मा के पास नहीं पहुँचता है। नृसिंह भगवान ने प्रहलाद को माध्यम बनाकर सभी मनुष्यों से कहा है -

"य एतत् कीर्तयेन्मह्यं त्वया गीतमिदं नरः।

त्वां च मां च स्मरन्काले कर्मबन्धाः प्रमुच्यते ॥

"जो मनुष्य इस स्तोत्र से मेरा कीर्तन करेगा वह तुम्हें व मुझे स्मरण करके अंत में कर्म बंधन से छूट जायेगा।"

मनुष्य को परम मुक्ति का सीधा मार्ग बताते हुए भगवान ने स्वयम् से भी पहले प्रहलाद को रक्खा है। जहाँ प्राण भेदक स्मरण है वहाँ परमात्मा प्रगट ही है।*

"जय जय वृन्दावन रजधानी

— प्रेमानन्द गिरि

श्याम-सगाई-लीला

रास के प्रसंग में 'श्यामा श्याम का दिव्य दरबार प्रदर्शित होता है । अनेक प्रकार के सरस रसिया गान से सम्पूर्ण वातावरण रसमय हो जाता है । जमुनाजी की लहरें तरंगित हो रही हैं । सखियाँ नाच-नाच कर गाती हैं —

'जय जय वृन्दावन रजधानी ।
जहाँ विराजत मोहन राजा,
श्री राधा सी रानी.....
कुञ्ज कुञ्ज बिहस्त दोऊ
महिमा निगम न जानी.....
सेवा कुञ्ज और बंसी बट
नित नित नूतन जानी.....

अब लोला प्रसंग में राधा रानी सखियों के साथ नन्द गाँव की ओर चलती हैं— चलते चलते सखियाँ राधे जू से आगे चलने के लिए मना करती हैं— राधे जू पीली पोखर पहुँच जाती हैं । वहाँ पर मैया यशोदा राधा रानी की रूप माधुरी पर मुग्ध होकर उनकी गोद भर देती हैं । हाथों में मेंहदी लगाकर उनके कान में 'मोहन-मन्त्र' का उच्चारण करती हैं ।

जब श्याम सुन्दर राधा रानी का दर्शन करते हैं तो पूछते हैं—

"बूझत श्याम कौन तू गोरी ?
कहाँ रहत काकी तू बेटी
रो चित्त चुरायो री.....

राधा रानी कहती हैं—

हम हैं सुनी एक नन्द जू को ढोटा
करत फिरत दधि माखन चोरी ।

इतने सम्भाषण से राधिका— श्याम मिलन होता है, यशोदा माँ, राधा रानी को वधू रूप में स्वीकार कर अमर सौभाग्य का आशीर्वाद देती है ।

इस प्रकार श्याम-सगाई पर घर घर बधाइयाँ और लड्डू बँटते हैं । व्रज की महिलायें गाती हैं—

"लाला कान्हा की सगाई आज, बिरज में लड्डूवा बटें ।

लड्डुवा बटें और गड्डुवा बटें ।
 बिरज में लड्डुवा बटें ।
 केशर कस्तूरी से भर दो तलैयाँ
 भर दो तलैयाँ और बाँटो मिठाइयाँ
 मेवा से भर दो मेरी गोद,
 बिरज में लड्डुवा बटें ।
 सौ मन दूध की खीर बनाओ
 खीर बनाओ उसमें मेवा डलाओ
 सब सखियाँ जिमावो आज...
 बिरज में लड्डुवा बटे....

इस प्रकार आमोद प्रमोद के रसभरे वातावरण में लीला संसिद्ध होती है । जय श्री राधे
 * * *

अष्टम दिवस-होली लीला

रास-नित्य की भाँति श्यामा श्याम का दरबार लगता है— सखियों द्वारा आरती सम्पन्न होती है ।
 संगीत की धुन पर आरती होती है ।

"हे श्याम सुन्दर तेरी आरती उतारूँ ।
 आरती उतारूँ तो पै तन मन बारूँ ।
 रतन सिंहासन राजत जोड़ी
 यदुकुल नन्दन भानु किशोरी....
 हे श्याम सुन्दर...
 पल पल छिन छिन रूप निहारूँ
 प्रभु पद पंकज नेकु न न बिसारूँ
 बाम भाग सोभित जग जननी
 कृष्ण राधिका है मन हरनी.....
 आरती के उपारान्त रास होता है ।

संगीत के धुन के साथ यमुना की लहरें गुञ्जायमान हो जाती हैं । वाद्य यन्त्र इनक उठते हैं ।

राधा नाचे कृष्ण भी नाचे नाचे गोपी जन
 मन मेरो बन गयो सखी री पावन वृन्दावन
 विष्णु नाचे शंकर नाचे नाचे देवगण,
 मन मेरो बन गयो सखी री पावन वृन्दावन
 गंगा नाचे यमुना नाचे नाचे ऋषिगण

मन मेरो बन गयो सखी री पावन वृन्दावन ।

अब लीला आरम्भ होती है—

श्याम सुन्दर ग्वाल बालों के साथ बरसाने गाँव में होली खेलने का कार्यक्रम निश्चित करते हैं श्रीदामा, सुदामा, सुबल आदि गोप कन्हैया से पूछते हैं ।

"लाला कन्हैया! बरसाने में तो लठामार होरी होवे ।

तू आगे आगे बरसाने की गुजरिन के लठा खड़यो—

हम तो तेरे पीछे चलेंगे— श्याम सुन्दर पीले-पीले वस्त्रों से सजे लाठी लिये ग्वालों के साथ नन्दगाँव से बरसाने की ओर चलते हैं । पीली पोखर पर पहुँच कर फागुन शुक्ला अष्टमी को रंग की फुहारें उड़ने लगती हैं, और अबीर गुलाल के बादल छा जाते हैं । सखियाँ तान छेड़ती हैं ।

"बरसाना बरसे रंग

गोकुल गुलाल उड़े

बाज उठी मोहन की बँसुरिया

गावे गोपी नाचे साँवरिया

जमुना की झूमी तरंग

गोकुल गुलाल उड़े ।

इतने में सखियों और सखाओं के साथ होली लीला आरम्भ हो जाती है । होली के हुड़दंग में किशोरी जी की मुँदरिया (अँगूठी) खो जाती है ।

इस पर सखियाँ श्याम सुन्दर को उलाहना देती हुई गाती हैं—

"मेरी गई है मुंदरिया खोय

लाला तो तें होरी खेलन में ।

मुँदरी के बदले तेरी मुरली चुराय लूँ ।

फिर जग बदनामी होय ।

सवा लाख की मुँदरी हमारी

तोपे कबहुँ न पैदा होय ।

लाला तो तै होरी खेलन में.....

ओछी बात करै मत, गुजरी,

एक मुँदरी को दो दो गड़ाय दूँ ।

हीरा पन्ना नग जड़वाय दूँ

झिल मिल झिलमिल होय....

'चन्द्रसखि' भज बाल कृष्ण छबि

तेने मन मेरो लीन्हों मोह.....

सखा व सखीन मध्य होली आरम्भ हो जाती है । श्याम सुन्दर दौड़-दौड़ कर मञ्च से नावों में बैठे भक्तों के ऊपर रंग की फुहार डालते हैं ।

इधर फूलों से भरी टोकरियों में पँखुड़ियों से बौछार होने लगती है ।

भक्त बलिहार जाते हैं । सभी श्याम व श्यामा पर पुष्प बिखेर कर अपना भाग्य सराहते हैं । व्रज मण्डल जय-जयकार से गुञ्जायमान हो जाता है ।

होरी के रसिया की जै ।

राधा रानी की जै ।

संगीत धुनि चलती है -

वृन्दावन फाग मच्यो भारी

कै मन केसर छोरी है लाला ।

कै मन उड़त अबीर...

नौ मन केसर छोरी है लाला

दस मन उड़त अबीर ।

नंदगाँव के कुँवर कहैया

बरसाने की राधा प्यारी ।

इस रंगीले रंग भरे वातावरण में होली लीला सम्पन्न होती है ।

जय श्री राधे

धर्म का सम्यक् मूल्यांकन

डॉ. प्रेम नारायण सोमानी

धरम धरम सब कोई कहे मरम न जाने कोय ।
मरम धरम का यही है कि चित्त शुद्ध हो जाय ॥

धर्म का सही मूल्यांकन करना सीखें और उसका अर्थ समझें । यदि सही मूल्यांकन करते रहेंगे तो नीर क्षीर विभाजन विवेक कायम रहेगा । धर्म पथ पर अपना संतुलन बनाये रख सकेंगे । लोकीय क्षेत्र में काँच और हीरे का, मिट्टी और सोने का एक जैसा मूल्यांकन नहीं किया जाता । इसी प्रकार धर्म के क्षेत्र में सब धान बाइस पसेरी नहीं तोले जाने चाहिये । अन्यथा या तो किसी निस्सार छिलके को ही धर्म मान बैठेंगे अथवा धर्म के किसी नन्हें प्राथमिक कदम को ही सब कुछ मान कर शुद्ध धर्म की उच्चतम अवस्थाओं तक नहीं पहुँच सकेंगे ।

समग्र धर्म शरीर के स्वस्थ सबल रखने के लिए आवश्यक है कि धर्म के सभी अंगों— शील, समाधि एवं प्रज्ञा का समुचित विकास हो । अन्यथा धर्म का कोई एक अंग आवश्यकता से अधिक महत्व पाकर धर्म-शरीर की सर्वांगीण उन्नति में बाधक बन जायेगा ।

इसी प्रकार उपवास भी धर्म का एक अंग है । हम उपवास द्वारा शरीर को स्वस्थ रखते हैं । स्वस्थ शरीर से ही धर्म का सुगमतापूर्वक पालन किया जा सकता है । मानसिक संयम के लिये भी उपवास उपयोगी है । उपवास करें और मन भिन्न-भिन्न पकवानों में रमता रहे तो ऐसा उपवास हीन कोटि का होगा । शरीर के साथ मन को भी संयमित करें तो उपवास उच्चकोटि का होगा । उच्चकोटि के उपवास को ही सब कुछ मान बैठेंगे तो अहं भाव के शिकार हो जायेंगे । उपवास करने वाला शील सदाचार के क्षेत्र में दुर्बल हो तो वह शीलवान व्यक्ति से हीन है । भोजन में मात्रा एवं गुणज्ञ होगा यानी उतना ही और वैसा ही भोजन करना जितना और जैसा हमारे शरीर के लिये उपयोगी और आवश्यक है— धर्म का एक अंग है । सामिष भोजन से निरामिष भोजन, चटपटे मिर्च— मसाले वाले भोजन से सात्विक भोजन करने वाला व्यक्ति उत्तम है । परन्तु सात्विक निरामिष भोजन करने वाला व्यक्ति इसी एक गुण के कारण अपने को अन्य सभी से श्रेष्ठ मानने लगे तो मिथ्या अहं के कारण धर्म में उन्नति से भटक जायेगा ।

अपना अधिकांश समय आलस्य, प्रमाद, तंद्रा में गवाने वाले व्यक्ति की अपेक्षा यथावश्यक कम से कम समय सोकर, अधिक से अधिक जागरूक रहने वाला व्यक्ति निश्चित रूप से अच्छा है । परन्तु ऐसे व्यक्ति को भी धर्म पथ की बहुत सी मंजिलें प्राप्त करनी होती हैं— यह न वह भूल जाय ।

टहलना-दौड़ना, तैरना, व्यायाम करना और इसी तरह आसन प्राणायाम करना शरीर को स्वस्थ एवं फुर्तीला बनाये रखने के लिये आवश्यक एवं लाभदायक है। इसी प्रकार रोज गंगा स्नान, शरीर को स्वच्छ रखना, साफ सुथरे कपड़े पहनना अच्छा है। परन्तु केवल इन्हीं को संपूर्ण धर्म मान बैठे और शरीर की बाहरी सफाई में ही लगे रह कर भीतरी सफाई रोक दे तो अपनी हानि ही होगी।

कोई व्रत पालन करता है तो इसलिये कि मन संयमित निगृहीत, सबल सुदृढ़ हो, धर्म मार्ग पर अविचल आरुढ़ हो परन्तु इन व्रत अनुष्ठानों को ही सब कुछ मान बैठे तो यह ही बंधन बन जायेंगे।

कोई माला फेरता है और मन ही मन किसी मंत्र का जाप करता है तो मन को एकाग्र करने के लिये ही परन्तु मन की एकाग्रता का जरा भी अभ्यास करे नहीं पर यंत्रवत माला फेरने की रूढ़ि को ही धर्म मान बैठना, भटकाव है। कोई मन्दिर जाकर अपने उपास्य देव की मूर्ति के दर्शन करता है। इससे मन में श्रद्धा जागती है। श्रद्धा से सौमनस्य जागता है जो चित्त को एकाग्र करने में सहायक होता है। अपने उपास्य देव की मूर्ति खुली आँखों देखता है और फिर आँख बन्द कर बार बार उसका ध्यान करता है। इस प्रकार चित्त को एकाग्र करने का एक साधन प्राप्त हो जाता है। आकृति का ध्यान करते करते उपास्य देव के गुणों का ध्यान करने लगता है और उन गुणों को जीवन में उतारने का प्रयत्न करने लगता है। यह सचमुच कल्याणकारी है। परन्तु यह सब तो करे नहीं, केवल मन्दिर जाने और मूर्ति के सामने 'यंत्रवत सिर झुकाने को ही सम्पूर्ण धर्म मान ले तो वह गलत मूल्यांकन के कारण रूढ़ियों में उलझता है।

इसी प्रकार भजन-कीर्तन तल्लीनता के लिये है। चित्त को एकाग्र करने के साधन हैं। परन्तु इससे अधिक कुछ और मानने लगे तो फिर भुलावे में पड़ जाते हैं। किसी गुरु या संत का दर्शन, उसको किया गया नमन उसके प्रति श्रद्धा जगाने के लिये है। उसके गुणों को देखकर मन में प्रेरणा जगाये और वे गुण धारण करे, इसी निमित्त हैं। परन्तु इसका इससे अधिक मूल्यांकन करने लगते हैं तो विवेक खो बैठते हैं, अंधश्रद्धा के कारण बुद्धि जड़ होने लगती है। किसी धर्म ग्रन्थ का पाठ करते हैं अथवा श्रवण करते हैं तो इसलिये कि उससे बुद्धि को प्रेरणा मिले, मार्ग दर्शन मिले जिससे धर्म जीवन में उतार सके परन्तु इसे भुलाकर केवल श्रवण, पठन को ही सब कुछ मान लेते हैं, तो गाड़ी मिथ्या दृष्टि के दलदल में फँस जाती है।

कोरा वाणी-विलास, बुद्धि-विलास धर्म नहीं है। जीवन में उतरा हुआ शील-सदाचार ही धर्म है। शील सदाचार की भी अलग-अलग श्रेणियाँ हैं। अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, सत्य और अग्रमाद, इन शीलो में से कोई एक कोई दो, कोई तीन, कोई चार और कोई पाँच का पालन करे तो एक से दूसरा क्रमशः अधिक धार्मिक है। इनमें भी कोई व्यक्ति किसी विशिष्ट शील का पालन इसलिये कर पा रहा है कि जिस परिवेश में वह जन्मा, पला और रहता है वह उस शील पालन के अनुकूल हैं। दूसरा व्यक्ति नितांत प्रतिकूल परिस्थिति में भी उस शील का पालन करता है, मन को वश में रखता है तो यह दूसरा व्यक्ति पहले से अधिक श्रेष्ठ है।

मन को वश में करना धर्म का महत्वपूर्ण अंग है। यही समाधि है। परन्तु एक व्यक्ति समाधि हासिल करने के लिये जिस आलंबन का प्रयोग करता है, वह राग, द्वेष या मोह बढ़ाने वाला हो तो वह व्यक्ति दूषित चित्त से समाधिस्थ होता है। दूसरा व्यक्ति ऐसे आलंबन अपनाता है जोकि राग, द्वेष और मोह को क्षीण करने वाले हैं, तो पहले की अपेक्षा यह दूसरा व्यक्ति अधिक उत्तम है। दूषित चित्त की एकाग्रता द्वारा मनोबल प्राप्त करके अनेक प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त की जा सकती हैं। इसके बल-पर-सामान्य लोगों को चकाचौंध करने वाले चमत्कार प्रदर्शित किये जा सकते हैं, परन्तु इसे धर्म मान लेना खतरनाक है। यह आवश्यक नहीं कि जिस व्यक्ति ने सिद्धियाँ प्राप्त कर लीं वह धर्मवान हो। अनेक दुःशील व्यक्ति चमत्कार प्रदर्शित करते हुए देखे जाते हैं। अतः चमत्कारों के आधार पर धर्म का मूल्यांकन गलत होता है। समाधि के साथ शील की भूमिका अनिवार्य है।

धर्म के प्रत्येक अंग का सही मूल्यांकन होने के कारण धर्म का सर्वांगीण एवं समुचित विकास होने लगता है। यही सम्यक् दृष्टि है— जिसका जितना मूल्य, उसका उतना ही महत्व। न अधिक न कम। धर्म की कसौटी एक ही है कि चित्त कितना निर्मल हुआ, कितना विकारों से मुक्त हुआ, कितना अहंकार से मुक्त हुआ और वह जीवन में उतरने लगा, एवं सुख, शान्ति देने लगा।

**स्मरण अभी से करोगे, तो अन्त समय में
भी रहेगा।**

—श्री श्री माँ

आश्रम-संवाद

कनखल—

देवतात्मा हिमालय के पाददेश में अवस्थित पवित्र कनखल के श्री श्री माँ के आश्रम में १३ अप्रैल, २००९ को श्री १००८ स्वामी मुक्तानन्दगिरिजी का संन्यासोत्सव अनुष्ठित हुआ। इस उपलक्ष में गिरिजी की षोडशोपचार पूजा एवं साधु भण्डारा का आयोजन किया गया था।

२६ अप्रैल अक्षय तृतीया की पुण्यतिथि पर एक नये अतिथि भवन तथा "श्री श्री माँ आनन्दमयी पुस्तकालय" सर्व धर्म सम्बन्धित एवं विशेष ग्रन्थालय का उद्घाटन किया गया। इस ग्रन्थागार में श्री श्री माँ का पूरा साहित्य एवं सभी धर्म सम्बन्धी पुस्तकों के संग्रह की परिकल्पना की गयी है।

२८ अप्रैल श्री शङ्कर जयन्ती के उपलक्ष में श्री शंकराचार्य हाल में जगद्गुरुशंकराचार्य की षोडशोपचार पूजा तथा वैशाख शुक्ल अष्टमी १ मई को बाबा भोलानाथ जी की तिरोधान तिथि के उपलक्ष में बाबा भोलानाथ जी की षोडशोपचार में विशेष पूजा तथा साधु भण्डारा अनुष्ठित हुआ।

२ मई से १० मई पर्यन्त श्री श्री माँ के १०६ वें शुभ जयन्ती-महोत्सव के उपलक्ष में २ मई की रात्रि के अन्तिम प्रहर में श्री श्री माँ की विशेष पूजा, भोग, व पुष्पाञ्जलि सम्पन्न हुई।

२ मई से १० तक प्रतिदिन-प्रातः काल वृन्दावन की सुप्रसिद्ध रासमण्डली द्वारा रासलीला होती थी। सायम् काल प्रवचनादि होते थे। ७ मई बुद्धपूर्णिमा को स्थानीय मन्दिरों में विशेष पूजा तथा १०८ कुमारी पूजा हुई। इस अवसर पर दरिद्रनारायण सेवा तथा कुष्ठ हास्पिटल में रोगियों को प्रसाद वितरण किया गया था।

आनन्द ज्योतिर्पीठ में प्रतिदिन एक एक देवता की सहस्रार्चन पूजा होती थी। जैसे श्री गणेश जी की रोली एवं अक्षत से, श्री गुरु की बेला एवं अन्यान्य सुगन्धित पुष्पों से इस प्रकार सूर्य, विष्णु, शिव, दुर्गा, माँ काली का वस्त्र, रुमाल, फल, मेवा, फल, मिठाई, दीप एवं दक्षिणा द्वारा प्रायः सभी देव, देवियों का सहस्रार्चन पूजा सुसम्पन्न हुई। प्रतिदिन सहस्रार्चन के उपरान्त षोडशोपचार पूजा, पादुकाभिषेक एवं आरती होती थी।

जुलाई की ५ तारीख को गुरुपूर्णिमा के दिने विशेष पूजा अनुष्ठित हुई।

वाराणसी—

३० मार्च को षष्ठी से ३ अप्रैल दशमी पर्यन्त श्री वासन्ती पूजा चण्डीमण्डप में प्रतिवर्ष की भाँति सुसम्पन्न हुई। बाँकुड़ा से आये ढाकियों (एक विशेष प्रकार के वाद्य के वादक) के ढाक की आवाज से पञ्चमी से ही आश्रम उत्सव मुखर हो उठा। इस क्षर इस चैत्र नवरात्र की वासन्ती पूजा में कलकत्ता, पटना, दिल्ली आदि स्थानों से काफी भक्त आये थे।

नवरात्र के अवसर पर कनखल के महानिर्वाणी अखाड़ा के वयोवृद्ध महन्त स्वामी गिरिधर नारायण पुरीजी की पूरी उपस्थिति से आश्रम में काफी रौनक रही ।

अप्रैल की पहली तारीख को महाष्टमी के दिन आश्रम में श्री माँ अन्नपूर्णा मन्दिर में विशेष पूजन तथा भोग का आयोजन किया गया था । नवरात्र के प्रतिदिन सायं काल ब्रह्मचारिणी गीता बनर्जी देवी भागवत पाठ एवं व्याख्या करती थीं । नवमी के दिन काशी के स्वनामधन्य विद्वान् डा. विश्वनाथ भट्टाचार्य ने देवी भागवत के माहात्म्य पर विशद चर्चा की ।

सप्तमी को सायंकालीन आरती एवं कीर्तन के उपरान्त काशी के सुप्रसिद्ध तबला संगतकार पाण्डित श्री ईश्वरप्रसाद मिश्र की सुपुत्री सुश्री आराधना तथा श्रीमती मनोरमा सरीन ने भजन सन्ध्या कार्यक्रम प्रस्तुत किया । संगत कर रहे थे पिता पं. श्री ईश्वरलाल मिश्र, अष्टमी को सायंकालीन शास्त्रीय भजन प्रस्तुत किये शास्त्रीय संगीत कलाकार सुश्री रेवती साकलकर ने । आपके भावपूर्ण मधुर स्वर ने एक अनोखा भावपूर्ण समा बाँधा ।

दो तीन वर्षों से प्रतिदिन सन्ध्या आरती में श्रीमान् काशीनरेश की महाराजकुमारियाँ तथा महाराज कुमार उपस्थित रहते आ रहे हैं तथा दशमी के दिन प्रातः महाराज श्री डॉ. विभूति नारायण सिंह जी स्वयं पुत्र कन्याओं के साथ उपस्थित रहते थे । गत वर्ष इसी दशमी के उपरान्त ही महाराज अस्वस्थ हुए थे एवं वर्ष के अन्तराल में आपने बाबा विश्वनाथ के चरणों में स्थान ग्रहण किया । इस बार महाराज का अभाव सभी महसूस कर रहे थे । यद्यपि यह परम्परा वर्तमान महाराज श्री अनन्त नारायण सिंह एवं महाराज कुमारियों ने पूर्ववत् निभायी ।

श्री रामनवमी की पूजा के समय भजनानन्द जी (पुष्पदी) के रामायण गान एवं भजन कीर्तन द्वारा एक अपूर्व भाव हुआ था । इस पुण्यमय क्षण में वाराणसी के कमिश्नर श्री मनोज कुमार भी उपस्थित थे ।

३ अप्रैल को सन्ध्या के समय प्रतिमा विसर्जन के उपरान्त श्री १०८ महन्त श्री गिरिधर नारायण पुरी जी ने सबको प्रसाद बाँटा ।

१३ अप्रैल चैत्र संक्रान्ति को श्री श्री स्वामी मुक्तानन्द गिरिजी का संन्यासोत्सव था इस उपलक्ष में षोडशोपचार पूजा और साधु भण्डारा सम्पन्न हुआ ।

१४ अप्रैल बंगला नववर्ष प्रारम्भ हुआ । १ वैशाख श्री श्री माँ के आनन्दज्योतिर्मन्दिर में श्री श्री माँ की षोडशोपचार पूजा हुई । २६ अप्रैल अक्षय तृतीया आनन्दज्योतिर्मन्दिर की प्रतिष्ठा के उपलक्ष में श्री श्री माँ, गोपालजी, योगमाया एवं गिरिजी की षोडशोपचार पूजा, कीर्तन एवं साधु भण्डारा सम्पन्न हुआ ।

वैशाख शुक्ला अष्टमी को बाबा भोलानाथ के तिरोधान तिथि के उपलक्ष में बाबा भोलानाथ की षोडशोपचार पूजा हुई ।

मई की २ तारीख को श्री श्री माँ के जन्मोत्सव के उपलक्ष में माँ के मन्दिर में पूजा का आयोजन हुआ । चण्डी पाठ के लिये घट बिठाया गया । पुजारी श्री भोलानाथ भट्टाचार्य ने चण्डी पूजाकर पाठ प्रारम्भ किया । दोपहर को भोग हुआ । रात को मन्दिर की फूलों से सजावट की

गयी । रात्रि के अन्तिम प्रहर में ठीक तीन बजे के पवित्र ब्राह्ममूर्त में श्री श्री माँ की पुण्यमयी जन्मवेला में शंख ध्वनि के साथ पूजन प्रारम्भ हुआ । ब्रह्मचारिणी जया भट्टाचार्य पूजा कर रही थीं । ब्रह्मचारिणी गीता बनर्जी के संचालन में कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणी वालिकाओं ने वेदपाठ, कीर्तन, ध्यान व आरती आदि का गान किया । पूजा की समाप्ति पर उषा कीर्तन प्रारम्भ हुआ ।

३ मई को मन्दिर में भोग आरती के उपरान्त ४८ संन्यासियों को सवस्त्र भिक्षा ग्रहण कराया गया ।

३ मई से ११ मई तक प्रतिदिन प्रातः मंगल आरती, उषा-कीर्तन, माँ की विशेष पूजा, वेदपाठ, श्रीमद्भगवद्गीता तथा चण्डी पाठ सम्पन्न हुआ । सायम् काल श्री श्री माँ की पुस्तक व सद्ग्रन्थ पाठ, साम्ब्य आरती एवं कीर्तनादि होते थे । कहना न होगा यह सभी कार्यक्रम कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियों द्वारा ही सम्पन्न हुए ।

१० मई दोपहर को चण्डी पाठ की पूर्णाहुति हुई । इस उपलक्ष में हवन आदि सम्पन्न हुए ।

आज तिथि पूजा थी । रात्रि को बेला की लड़ियों से मंदिर का गर्भगृह सजाया गया । मुख्य द्वार पर आम पत्ते के बन्दनवार, तथा फूलों की मालाओं से विशेष रूप से सजाया गया था । मुख्यद्वार के मध्य जमीन पर रँगोली दी गयी । रँगोली के मध्य श्री श्री माँ के जन्म वर्षीय संख्या के अनुसार १०६ दीप प्रज्ज्वलित किये गये ।

ब्राह्ममुहूर्त की अमृतरूपी वेला में पूजन प्रारम्भ हुआ । शंख घड़ियाल वेद मन्त्रों की ध्वनि से वातावरण मुखरित हो उठा । मंगलमय के आविर्भाव की मंगलमयी वेला में सुगन्धित फूलों की सुरभि एवं विचित्र वर्णों की रँगोली के मध्य झिलमिलाती दीपकों की आभा से एक अनुपम नैसर्गिक परिवेश की रचना हो रही थी जो कि श्री श्री माँ की दिव्य उपस्थिति का आभास दे रही थी ।

कीर्तन भजन का मधुर भावपूर्ण संयोग था । पूजा की समाप्ति पर श्री श्री माँ के चरणों में सबने पुष्पाञ्जलि अर्पित की ।

मध्याह्न को विविध प्रकार के व्यञ्जनों से युक्त भोग का आयोजन किया गया । विविध पकवान भी थे । यह सभी भोग सामग्री कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियाँ स्वयं ही बनाती हैं । भोग के उपरान्त भक्तजनों ने प्रसाद ग्रहण किया ।

गंगादशहरा पहली जून को था । प्रति वर्ष की भाँति गंगा के तट पर प्रातः सूर्योदय की वेला में पंचामृत, पुष्प फल एवं वस्त्रादि से षोडशोपचार विधि से गंगा पूजन हुआ । दूध की धारा एवं पायस चढ़ाया गया । पतितोद्धारिणी गंगे की ध्वनि मानो गंगा की लहरों में प्रतिध्वनित हो रही थी ।

आगरतला-

त्रिपुरा की राजधानी आगरतला के श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम में श्री श्री माँ के जन्मोत्सव के उपलक्ष में २ मई को विशेष पूजा एवं सत्संग का आयोजन किया गया था ।

१० मई को सन्ध्या आरती के माध्यम से कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ जो रात के १२ बजे तक चलता रहा। रात्रि के ३ बजे श्री श्री माँ की विशेष पूजा प्रारम्भ हुई। इस अनुष्ठान में अनेक स्थानीय भक्तों ने योगदान किया।

प्रातः ५ बजे से सायम् ६ बजे तक नाट मन्दिर में उदयास्त कीर्तन हुआ। दोपहर को भोग का प्रसाद भक्तों को वितरित किया गया। दरिद्रनारायण भोजन सवस्त्र कराया गया।

आगरपाड़ा (कलकत्ता)–

गत दिसम्बर महीने के अन्त में गंगा तट के आगरपाड़ा आश्रम में "वार्षिक नामयज्ञ" सम्यक् रूप से अनुष्ठित हुआ। भक्तों का समागम काफी मात्रा में हुआ था एवं सभी को अन्न प्रसाद वितरित किया गया।

आश्रम में वसन्त पञ्चमी, शिवरात्रि आदि सभी उत्सव भली भौति सम्पन्न हुए। ब्रह्मचारी निर्वाणानन्द जी की उपस्थिति में अध्यात्मके जिज्ञासु भक्तों को मार्ग-दर्शन प्राप्त हुआ।

श्री श्री माँ के जन्मोत्सव तथा बुद्ध पूर्णिमा को ध्यान पीठ में मातृमूर्ति प्रतिष्ठादिवस आदि विभिन्न अनुष्ठान अनुष्ठित हुए। १० मई को पश्चिमबंग विधानसभा निर्वाचन रहने पर भी श्री श्री माँ की तिथि पूजा के उपलक्ष में रात को काफी भक्तों की भीड़ थी। प्रायः १२०० भक्तों ने अन्न प्रसाद ग्रहण किया। स्वामी निर्मलानन्दगिरि ने श्री श्री माँ पर आधारित प्रवचन दिये।

उत्तरकाशी–

पहाड़ों से घिरी इस नगरी में स्थित श्री श्री माँ के आश्रम में १० मई की शाम से भजन पूजन एवं कीर्तन हुआ। रात्रि के अन्तिम प्रहर में श्री श्री माँ की पूजा हुई।

दूसरे दिन ११ मई के प्रातः ९:०० बजे साधु भण्डारा हुआ।

*

*

*

श्री श्री माँ के जमशेदपुर, डिब्रूगढ़, तारापीठ, देहरादून, भोपाल, पूना, राजगीर, विन्ध्याचल आदि प्रायः सभी आश्रमों में २ मई से ११ मई पर्यन्त श्री श्री माँ के १०६ ठे जन्मोत्सव के उपलक्ष में ब्राह्ममुहूर्त में श्री श्री माँ की पूजा, सत्संग, भजन, कीर्तन, दरिद्रनारायण सेवा, कुमारी पूजा तथा स्थानीय अस्पतालों में फल आदि वितरित किये गये।

श्री श्री माँ के सभी आश्रमों में उत्सव एवं पूजा आदि का विशेष महत्व रहता है। इन उत्सव आदि की तैयारी के माध्यम से व्यक्ति का ध्यान बारम्बार उस इष्ट की ओर जाता है जिनकी हम पूजा करेंगे। परम इष्ट उस परमात्मा को स्मरण करने का यह एक अनायास उपाय है। श्री श्री माँ की करुणा अपार है, आज के भौतिक सुख सुविधा में डूबे हुए जीव के लिए उनको पाने का यह एक अनूठा तरीका है। श्री श्री माँ कहती हैं— "सदा स में रहना संयम, स्मरण, और शरण।" श्री श्री माँ के आश्रमों का उद्देश्य है माँ के चरणों में आने वाले सभी व्यक्तियों को यही मार्ग-दर्शन दिया जाय।



श्रद्धाञ्जलि

रेणुका मुखर्जी

श्री श्री माँ एक किशोरी कन्या से पूछती हैं- "तुम क्या चाहती हो?" कन्या भोलेपन से अपने किशोर मन की इच्छा व्यक्त करती है-"जो करने पर मैं जीवन भर आपके पास रह सकूँ। आप का विछोह न हो, इसके लिये आप जैसा कहेंगी मैं वह सब करने को तैयार हूँ।" यह घटना चालीस के दशक की है। इलाहाबाद के जिला जज श्री नीरजनाथ मुखर्जी की ज्येष्ठ कन्या सुश्री रेणुका मुखर्जी ने यह भावना उस समय व्यक्त की थी जब माता-पिता पुत्री के प्रति अपने कर्तव्य के लिये व्यग्र हो रहे थे। श्री श्री माँ के चरणों में रहकर त्यागमय जीवन यापन के लिये अपना सर्वस्व श्री श्री माँ के चरणों में न्योछावर करने को कन्या तैयार थीं। श्री श्री माँ ने भी किशोरी की कोमल भावना को ठेस न पहुँचाकर ऐसी व्यवस्था रची जिससे माता-पिता भी कर्तव्य मुक्त हुए एवं किशोरी की अभिलाषा भी सफल हुई। भक्तमनोवाञ्छा को हर प्रकार से पूर्ण करने वाली करुणामयी श्री श्री माँ का कृपा पारावार अथाह है चाहे उनको अज्ञानी जीव दृष्टि के कितने ही कटु वचन क्यों न सुनने पड़े हों। धन्य है वह कन्या जो अपना सम्पूर्ण जीवन माँ के चरणों में समर्पण करने में सफल रहीं और अभी हाल में ही ३० मई को अपने इलाहाबाद स्थित वास भवन ३९, जार्ज टाउन में आपने माँ के नाम का ही स्मरण करते हुए अपनी इहलीला पूरी की।

चालीस का दशक है गुरुप्रिया दीदी महिला आश्रम की व्यवस्था में व्यस्त हैं दीदी के साथ किशोरी दीर्घकाया श्यामाङ्गी बाला रेणुका सभी कामों में हाथ बैटती नजर आती थीं। अपने गृह सुख को त्याग कर माँ के पास आनेवाले सभी भक्तजनों की सेवा-श्रुति आप तत्पर रहतीं। विशेषतः विशेष साधु-मण्डली की सेवा का कार्य श्री श्री माँ के निदर्शन में आप निपुणता से सँभाला करती थीं। आपके रहने से गुरुप्रिया दीदी को अन्यान्य कार्य सँभालने में काफी सहायता प्राप्त होती थी।

श्री श्री माँ के श्री शरीर की सेवा का सौभाग्य भी आपको वर्षों तक प्राप्त हुआ है, जिसका वर्णन आपने अपनी दैनन्दिनी में किया।

श्री श्री माँ अपने इलाहाबाद निवास के समय अक्सर ३९, जार्जटाउन में ही रहा करती थीं जो कि रेणुदीदी के पितामह द्वारा बनाया गया था। यह भवन एक विशाल परिसर में था यहीं पर एक ओर श्री श्री माँ के लिये सुरम्य कुटिया का निर्माण कराया गया था। श्री श्री माँ की उपस्थिति में यहां पर जन्मोत्सव, दुर्गा पूजा, विशेषतः ६ वर्षों के अन्तराल में होने वाले कुम्भ पर्वोत्सवों में आपका कर्मठ सहयोग सर्वविदित है। केवल कार्यक्षेत्र ही नहीं कला क्षेत्र में आपकी अत्यन्त रुचि थी। चित्राङ्कन आपको अत्यन्त प्रिय था। श्री श्री माँ की निर्मित कुटिया की दीवारों पर आपके द्वारा की गयी चित्रकारी की याद आज भी प्रत्यक्षदर्शियों की आँखों के सामने आती है।

श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ की शुरुआत में अध्यापिका के रूप में रेणु दीदी की भूमिका अविस्मरणीय है। आप शिल्प कला में भी प्रवीण थीं। कन्यापीठ में सञ्चालित श्री श्री माँ आनन्दमयी शिल्पप्रतिष्ठान मुख्यतः आपकी ही देन है।

श्री श्री माँ की सेवा में समर्पित यह महान् चरित्र आनेवाली पीढ़ियों के लिये आदर्श स्वरूप हैं। १४ वर्ष की आयु से ८१ वर्ष पर्यन्त एकनिष्ठ भाव से श्री श्री माँ के चरणों का आश्रय लेकर त्यागवैराग्य के पथ पर जीवन को समर्पित करने वाली ब्रह्मचारिणी रेणू दीदी को हम श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

नेपाल राजपरिवार के दुःखद क्षणों में

१ जून गंगा दशहरा २००१। कौन जानता था आज का दिन पूरे विश्व को दहला देगा। हिन्दू राष्ट्र नेपाल में घटित अजनबी हत्याकाण्ड को सुनकर ऐसा कौन होगा जो स्तब्ध न रहा हो! घटना चाहे राजनैतिक हो या पारिवारिक, विश्व के लिये दुःखद घटना है।

नेपाल राजपरिवार का श्री श्री माँ से सीधा सम्बन्ध न होने पर भी नेपालराज परिवार के अनेक सदस्य किसी न किसी तरह से श्री श्री माँ से जुड़े हैं। अतः इस दुःखद क्षण में श्री श्री माँ की अमर वाणी दुःख संतप्त जनों को सान्त्वना का संदेश दे सकती है- माँ कहती हैं-

"यह तो साँस का घर है, इसी से कष्ट है। यहाँ दो तरह के यात्री हैं। एक घूमने-भटकने वाले यात्री - देश देखने, तमाशा देखने के लिए ही वे माने हैं। और एक स्वभाव के यात्री हैं, अपना घर पाने के लिए अर्थात् अपने को जानना। घूमने-भटकने की यात्रा में दुःख होता है। जब तक अपना घर नहीं मिलता तब तक दुःख है। भिन्नरुचि दुःख देती है; दुःख देती है, दोष रहने से, दो का अस्तित्व रहने से। इसीलिये कही जाती है दुनिया।"

आज नेपाल शाही परिवार के कष्ट के क्षणों में श्री श्री माँ के चरणों में प्रार्थना करते हैं कि वे दिवंगत आत्माओं को बाबा पशुपतिनाथ के चरणों में परमशान्ति प्रदान करें।

**STATEMENT ABOUT OWNERSHIP & OTHER PARTICULARS
ABOUT NEWSPAPER ENTITLED "MA ANANDAMAYEE AMRIT
VARTA" AS REQUIRED TO BE PUBLISHED U/S 190 OF THE
PRESS AND REGISTRATION ACT. FORM IV (RULE 8)**

1. Title of Newspaper : Ma Anandamayee Amrit Varta
2. Place of Publication : Shree Shreee Anandamayee Sangha,
Bhadaini, Varanasi-1
3. Periodicity of Publication : Quarterly
4. Printer's Name : Panu Brahmachari
Whether citizen of India : Yes
Address : Shree Shree Ma Anandamayee
Ashram, Bhadaini, Varanasi-1
5. Publisher's Name : Panu Brahmachari
Whether citizen of India : Yes
Address : Shree Shree Ma Anandamayee
Ashram, Bhadaini, Varanasi-1
6. Editor : Panu Brahmachari
Whether citizen of India : Yes
Address : Shree Shree Ma Anandamayee
Ashram, Bhadaini, Varanasi-1
7. Name & address of the owner,
who owns the Newspaper : Shree Shree Anandamayee Sangha,
(Regd.) Bhadaini, Varanasi-1

I, Panu Brahmachari, hereby declare that the particulars given above
are true to the best of my knowledge and belief.

March 1,2001

(Sd) PANU BRAHMACHARI
Publisher.

● जय माँ श्री माँ जय जय माँ ●

"मैं तो सब समय तुम लोगों के साथ साथ ही हूँ, तुम लोग देखना नहीं चाहते हो तो मैं क्या करूँ।"

—श्री श्री माँ



Diamond Agricultural sprayers for Plant Protection

ESTD - 1984

Bharat Bhusan Gupta



(O) 7281330
(R) 3623348
(M) 9811236809

Gupta Agro Company

Manufacturers & Suppliers of :

AGRICULTURAL SPRAY PUMPS & SPARE PARTS FOR PLANT PROTECTION
P-31, Alipur Road, Narela, Delhi-110040

RAJ TRADERS

Manufacturers of Corrugated boxes

Sri Rajesh Gupta

A-109, Bhagawati Vihar, Uttam Nagar, New Delhi-110059
Ph. Off. 011-5631628, Res. 011-3541814

● जयजयमाँ

ॐ माँ

जयजयमाँ ●

"हरि कथा ही कथा और सब बृथा व्यथा ।"

—श्री श्री माँ



श्री श्री माँ के श्री चरणों में गुप्ता परिवार
की तरफ से शत शत नमन ।

श्रीचन्दभान गुप्ता
श्रीमती शकुन्तला गुप्ता

श्री भारत भूषण गुप्ता
श्रीमती साधना गुप्ता
श्री चेतन गुप्ता
श्री हर्ष गुप्ता

श्री राजेश गुप्ता
श्रीमती अनिता गुप्ता
श्री नितिन गुप्ता
श्री कार्तिक गुप्ता

125 विवेकानन्दपुरी, सरायरोहिला, दिल्ली-110007

Res. 011-3623348,

Res. 011-3541814

Off. 011-7281330,

Off. 011-5631628

व्यापारी मित्र

आयकर, बिक्रीकर और व्यापार संबंधी कायदेकानूनों के बारे में पूर्ण जानकारी देनेवाला केवल एकमात्र मराठी मासिक पत्रिका, सुवर्ण महोत्सव वर्ष में प्रकाशित !

" व्यापारी मित्र " की स्थापना १९५०

वार्षिक शुल्क केवल रु. १२०

पता :- "व्यापारी मित्र पब्लिकेशन्स प्रा. लि.

नरपतगीर चौक, साई निकेतन,

३९३ नया मंगलवार पेठ, पूना ४११ ०११.

फोन : [०२०] ६३७२००, ६३१३५५, ३३१०९४

फैक्स नं. : [०२०] ६३७३६८

With Best Compliments from

At the lotus feet of Shree Shree Ma

B.K. Jhala & Associates

"NIRMAL" Commercial Complex

*158, M.G. Road,
Pune.*

With Best Compliments From :

**"Endeavour to go through life
leaving your burdens in His
hands."**

—Ma Anandamayee

UNIQUE ELECTRONICS (Regd.)

16, Central Market,
Lajpat Nagar
New Delhi—110024
Phone : 6834559, 6836475

With best compliments from :

*"The pilgrimage to the goal
of human existence is the
only path to Supreme happiness."*

—Sri Ma

M/s. Sugam Parivahan Ltd.
43, Lekh Ram Road
Daryaganj, New Delhi-110002
Ph. 3257581/3268459 Fax : 3267462

With best compliments from :

**"Abandon yourself to God
in all matters without exception."**

—Sri Ma

M/s Anandamayee Forgings (Pvt) Ltd.
A-5, Site-IV, Industrial Area
Sahibabad, Ghaziabad-201010
Ph : 770064 - Fax : 770427

With best compliments from

RAM PANJWANI & COMPANY

Timber Importers & Financiers
1—Birla Road
Harwar—249401

 : 427266, 424272, Fax : 0133—426001

Suppliers of:
Best Quality Himalayan Pine Timbers

Branches :

Jammu (J & K)

Yamuna Nagar (Haryana)

Parwanoo (H.P.)

Gandhi Dham (Gujrat)



MA ANANDMAYEE MEMORIAL SCHOOL **RAIWALA—249205**

District : Dehradun

An English Medium Residential School for Boys only.
Affiliated to Council for the
Indian School Certificate Examination : New Delhi.

A complex for the Children from Standard 1 to XII.

The School is situated at a picturesque site. Enviably hostel facilities in a calm pleasant and pollution free *Vanasthali* setting 2 km away from Haridwar-Rishikesh Road. It is designated to impart integrated education to children, drawing the best from Indian culture and traditions of the past, instructing and helping them to acquire knowledge in Humanities, Arts, Science and co-curricular activities.

The campus was once Shree Shree Ma Anandamayee's Agnatavas (Retreat) and now a Memorial School.

Registration will soon open for the academic session 2001-2002 for the Classes 1 to XII.

Admission forms, Prospectus and other information can be had from the office on payment of Rs. 100/-.
Apply to Principal.

PHONE : 0135—484232/484292

FAX : 0133—426001

* Branch Ashrams *

15. NEW DELHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalkaji, New Delhi-110019 (Tel : 011-6826813)
16. PUNE : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Ganesh Khind Road, Pune-411007, (Tel : 020-5537835)
17. PURI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Swargadwar, Puri-752001, Orissa.
18. RAJGIR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Rajgir, Nalanda-803116, Bihar (Tel : 06112-55362)
19. RANCHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Main Road,
P.O. Ranchi-834001, Bihar (Tel : 0651-312082)
20. TARAPEETH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Chandipur-Tarapeeth, Birbhum-731233, W.B.
21. UTTARKASHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kali Mandir, P.O. Uttarkashi-249193,
22. VARANASI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhadaini, Varanasi-221001, U.P.
(Tel : 0542-310054+311794)
23. VINDHYACHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Ashtabhuja Hill,
P.O. Vindhyachal, Mirzapur-231307, (Tel : 05442-42343)
24. VRINDAVAN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Vrindavan, Mathura-281121 U.P. (Tel: 0565-442024)

IN BANGLADESH :

1. DHAKA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
14, Siddheshwari Lane, Dhaka-17 (Tel : 405266)
2. KHEORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Kheora, Via-Kasba, Brahmanbaria.



REGISTERED WITH THE REGISTRAR OF NEWSPAPERS
FOR INDIA AS NO. 65432/97



अमृत वार्ता



SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

* Branch Ashrams *

1. AGARPARA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P. O. Kamarhati ,
Calcutta-700058 (Tel : 033-5531208)
2. AGARTALA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Palace Compound,
P.O. Agartala-799001. West Tripura (Tel : 0381-208618)
3. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Patal Devi,
P.O. Almora-263602, (Tel : 05962-33120)
4. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Dhaul-China,
Almora-263881, (Tel : 05962-62013)
5. BHIMPURA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Bhimpura,
P.O. Chandod, Baroda-391105, (Tel : 02663-833208)
6. BHOPAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P. O. Bairagarh,
Bhopal-462030, M.P. (Tel : 0755-521227)
7. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Kishenpur,
P.O. Rajpur, Dehradun-248009 (Phone : 0135-734271)
8. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalyanvan, 176, Rajpur Road, P.O. Rajpur,
Dehradun-248009, (Phone : 0135-734471)
9. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram.
P.O. Raipur Ordnance Factory, Dehradun-248010
10. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
47/A Jakhan, P.O. Rajpur, Dehradun,
11. JAMSHEDPUR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Near Bhatia Park, Kadma, Jamshedpur-831005, Bihar
12. KANKHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Kankhal,
Hardwar-249408, (Tel : 0133-416575)
13. KEDARNATH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Near Himlok,
P.O. Kedarnath, Chamoli-246445,
14. NAIMISHARANYA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Puran Mandir,
P.O. Naimisharanya, Sitapur-261402, U.P.

माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता

श्रीश्री माँ आनन्दमयी के दिव्यजीवन
तथा
दिव्यवाणी की वाहिका त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष-५

अक्टूबर, २००१

सं.-४

सम्पादक मण्डली

- ✧ डा. श्रीनारायण मिश्र
- ✧ डा. राममोहन पाण्डे
- ✧ डा. वीथिका मुखर्जी
- ✧ डा. गायत्री शर्मा
- ✧ ब्रह्मचारिणी गुणीता



कार्यकारी सम्पादक
श्री पानु ब्रह्मचारी



वार्षिक चंदा (डाकव्यय सहित)

भारत में - ६० रुपये

विदेशों में - १२ डॉलर/या ४५० रुपये

एक प्रति - २०/- रुपये

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा—हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है। वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है। इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख, किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलयों का भी पत्रिका में स्वागत है।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकलित कर सकते हैं जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये। लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें। मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है। सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C". नाम पर भेजें।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"

माता आनन्दमयी आश्रम

भदौनी, वाराणसी - २२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :-

सम्पूर्ण पृष्ठ - २०००/- पूरे वर्ष के लिये

आधा पृष्ठ - १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदौनी, वाराणसी-२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमछा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित।
सम्पादक—श्री पानु ब्रह्मचारी।

विषय-सूची

१.	मातृ-चाणी		1
२.	नयी सदी की सनातन दिशा		3
३.	श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग —स्व. अमूल्य कुमार दत्तगुप्त		4
४.	श्री श्री माँ का स्नेह —स्वामी नारायणानन्द तीर्थ		8
५.	श्रीमद् भागवत महापुराण-माहात्म्य —श्री अशोक भाई कुलकर्णी		11
६.	आनन्दमयी स्मृति —चित्रा घोष		17
७.	माँ के संस्मरण —श्री शाम्ब सदाशिव उपाध्याय		22
८.	आवागमन का दुःख —डा. प्रेम नारायण सोमानी		24
९.	'कामधेनु कलि काशी' —स्वामी शिवानन्द सरस्वती		27
१०.	ईसा के जीवन सम्बन्धी नयी बातें —'लक्ष्मी'		30
११.	आश्रम संवाद		32

प्रकाशन-सूची

श्री श्री आनन्दमयी संघ द्वारा प्रकाशित श्री श्री माँ से सम्बन्धित हिन्दी भाषा में कुछ अमूल्य प्रकाशन संघ के प्रायः सभी शाखा आश्रमों में उपलब्ध हैं ।

१. आनन्दज्योति (शताब्दी स्मारिका) — यह एक उच्च कोटि का संस्करण है, जिसमें विभिन्न भाषाओं — संस्कृत, हिन्दी तथा अंग्रेजी में श्री श्री माँ की पवित्र जीवनानुक्रमणिका (१८९६ से १९८२), १०० अमूल्य वाणियों एवं श्री श्री माँ के विभिन्न आश्रम एवं संस्थाओं का इतिहास, साथ ही स्वनामधन्य विद्वानों के लेख, श्रद्धाञ्जलि सहित श्री श्री माँ के कतिपय मूल्यवान् चित्रों का संकलन है । अति उत्तम कागज पर छपा है । मूल्य रु. १००/- केवल हिन्दी खंड — मूल्य रु. ३०/-

२. श्री श्री माँ आनन्दमयी — परम श्रद्धेया दीदी गुरुप्रिया द्वारा लिखित श्री श्री माँ की अपूर्व लीला कहानी । २० भागों में सम्पूर्ण । प्रथम भाग पुनर्मुद्रित । पेपर बैक, मूल्य रु. ४०/-

३. मातृ दर्शन — श्रद्धेय ज्योतिष चन्द्र राय (भाईजी) द्वारा मूल बंगला में लिखित श्री श्री माँ के ऊपर अतुलनीय पुस्तक । हिन्दी संस्करण, पेपर बैक, मूल्य रु. २५/-

४. माँ आनन्दमयी — डॉ. पन्नालाल, आई. सी.एस. (रिटायर्ड) द्वारा लिखित श्री श्री माँ का अपूर्व जीवन चरित । पेपर बैक, मूल्य रु. ३०/-

५. सद्वाणी — हिन्दी में अनूदित श्री श्री माँ की मूल्यवान् वाणियों का संग्रह । श्री ज्योतिषचन्द्र राय द्वारा संकलित । पेपर बैक, मूल्य रु. १५ ।

६. माँ आनन्दमयी दिव्यालोक वार्ता — ब्र. गुणीता द्वारा लिखित श्री श्री माँ की जीवन-कथा का संक्षिप्त चित्रण तथा शतवाणी । पेपर बैक, मूल्य १०/-



मातृ-वाणी

संसार में भी रस्सी से किसी को बाँधते हो तो देखो न सड़ कर खिसक जाती है । लोहे की जंजीर अथवा सोने की जंजीर से बाँधो, वह भी एक न एक दिन टूट जाती है, नष्ट हो जाती है । ऐसा कौन सा जागतिक बन्धन है, जिससे तुम बाँधोगे वह कभी टूटेगा नहीं, नष्ट नहीं होगा ? सामयिक बन्धन में केवल हाहाकार होता है, मन का बन्धन इसी तरह का होता है । क्योंकि मन एक जगह बंधा रहने वाला नहीं है । वह चञ्चल बालक के समान है । उसमें भले बुरे का विचार नहीं है, केवल आनन्द ही उसका लक्ष्य है ।

*

*

*

गति का रुकना मृत्यु का पथ है । केवल उसके त्याग के लिये ही मनुष्य नाना उपायों का अवलम्बन करता रहता है । जो त्याग हो जाता है, वही तो त्याग करना है ।"

*

*

*

अभाव न रहे यह चाहना ही मानव स्वभाव है, किसी एक नूतन पदार्थ पर दृष्टि पड़ने पर, "यह क्या है," खोज करना तुम्हारा स्वभाव है ।

*

*

*

एक कपड़ा लाने पर यह अधिक दिन तक टिके, जल्दी नष्ट न हो—अनन्त चाहना स्वभाव है । तुम वास्तव में जो हो उसका प्रकाश होने के लिये तुम्हारा चाहने का स्वभाव है । वहाँ नित्य, सत्य, अनन्त ज्ञान है । उसके लिये तुम्हारे मन को अनित्य में, असत्य में, अज्ञान में, अन्त में अच्छा नहीं लगता । तुम हो जो, उसका प्रकाश चाहना ही तुम्हारा स्वभाव है ।

*

*

*

ज्ञान होने पर फिर सन्देह संसार नहीं रहता, शरीर भी नहीं रहता । जहाँ संसार नहीं रहता वहाँ पर शरीर भी नहीं रहता ।

*

*

*

विशेष बात यह है कि कर्म स्वयं ही साक्षात् होना चाहिये । देखने का किसी के ऊपर भार न देकर अपने हाथ से करना चाहिये । अन्य से कराने पर कार्य का हिस्सा उसमें भी चला जाता है । इसलिये यदि कुछ करो तो अपने हाथ से करो, देखो तो अपनी आँखों से, सुनो तो अपने कानों से किसी के ऊपर भार सौंप कर निश्चिन्त होना ठीक नहीं है ।

*

*

*

तुम लोगों के विविध संस्कारों के अनुसार एक-एक इष्ट हर एक के पृथक् पृथक् हैं । जिसका जितना भक्तिभाव है उसको उतना अपनी इष्टमूर्ति का विकास उसकी दृष्टि में अभिव्यक्त होगा । एकदम वह पृथक् नहीं रहेगा । भगवान् उसे अनन्त रूपों में अपने को पकड़ा देंगे । अपने संस्कारों के बल से जब पूर्व प्रकाश होगा तब फिर सबमें अपना संस्कार दीख पड़ेगा ।

*

*

*

भगवान् रूप में अनन्त हैं न, वे अन-अन्त हैं न । कोई भी उनके रूपों की गणना नहीं कर सकता । इसलिये उनके अनन्त रूप हैं, जितने रूपों की यह सृष्टि हो रही है, लय हो रहा है, सब मेरे उन भगवान् के ही रूप हैं । इस भाव से विशेष रूप से जितना विस्तार होगा उतने ही अनन्त रूपों में स्थिति होगी ।

*

*

*

जो रूप आते हैं उन्हीं का ध्यान करो, देखो भगवान् किस रूप में प्रकट होते हैं । सबके लिये सब रूप नहीं है । किसी के राम, किसी के शिव, किसी की पार्वती और किसी के निराकार । निराकार तो हैं ही, किन्तु स्वयं जिस आकार में हैं वही हमें मार्ग दिखलावें । इसलिये जो आता है, जाता है, एक-एक करके उनका ध्यान करना चाहिये ।

*

*

*

नेत्र दिये हैं कि एकमात्र तुम ही हो ऐसा देखें, हाथों से उनकी सेवा करनी चाहिये । पैरों से उनकी परिक्रमा । ऐसा होना चाहिये कि मन दिन भर उनकी सेवा करे । उनके सेवक होओ, उनका भजन करो और उन्हीं को आहुति दो ।

शैय्या छोड़ते समय सोचो कि तुम यन्त्र रूप में हो या मैं तुम्हारा यंत्र हूँ । इस यन्त्र से दिन भर शुभ कर्म हों । सब कर्म तुम्हारी सेवा है एवं सेवा में लगे । मन में शुभ संकल्प की धारा रहे । भगवान् का नाम-कीर्तन और प्रणाम करना चाहिये ।

रात्रि में सोते समय प्रार्थना करनी चाहिये कि दिन भर आपने जो कराया वह आपके चरणों में अर्पित है । फिर एक-एक करके सारे दिन के कर्मों को देखना चाहिये । यदि भूल-चूक हुई तो यह प्रार्थना करनी चाहिये कि क्षमा कीजिये, आगे फिर जिस तरह भूल न हो ऐसी कृपा कीजिये । सभी कार्य शुद्ध हों । नाम कीर्तन, प्रणाम करना, मन ही मन होने पर भी उनका ध्यान कर उनके चरणों में मस्तक टेकना चाहिये, अन्त में मेरा शरीर, मन सब कुछ आपके ही चरणों में अर्पित है । इस क्रम से चलते हुए सोना चाहिये ।

निरन्तर अर्पण भाव रखते-रखते कौन जानता है कि कब अर्पण हो जाय उनकी कृपा से उनकी दया से । इसलिये सदा अर्पण बुद्धि रखनी ही चाहिये ।



नयी सदी को सनातन दिशा

तुम माता हो, तुम पिता हो, तुम बन्धु हो, तुम स्वामी हो, तुम्हीं सब कुछ हो। सब नाम तुम्हारे ही नाम हैं, सब गुण तुम्हारे ही गुण हैं, सब रूप तुम्हारे ही रूप हैं। फिर वही अरूप में है, निराकार में है, जिस 'लाईन' में जो चलेगा उसी अनुसार। ऐसा लोग कहते हैं न शैवों का जो परम शिव है—वही ब्रह्म है। फिर आत्म-दृष्टि से एक आत्मा है। विरोध तो है ही नहीं। यदि बिन्दुमात्र भी भेद दृष्टि रहे तो वह स्थिति कहाँ ?

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

राजा और नौकर

एक राजा और रानी थे। मन्त्री, सिपाही, दरबारी, नौकर, चाकर से भरा दरबार था। एक दिन राजा के नौकर ने सोचा मैं जरा साधु का ढोंग रचूँ। वह ऐसा सोच कर एक जगह चुपचाप बैठा रहा। उसने खाना-पीना छोड़ दिया लोगों से बोलना मिलना छोड़ दिया। धीरे-धीरे लोगों में चर्चा छिड़ी। समाधिस्थ साधु को देखने सब आने लगे। वह आँखों के कोने से अपने पास आने वाले लोगों को देखता था।

एक दिन महारानी ने राजा से कहा, हमारे घर में गंगा वह रही है और हम ही उससे वञ्चित हैं। रानी की बात सुनकर राजा रानी को लेकर उसके दर्शनों को गये और नतमस्तक होकर प्रणाम किया। यह दृश्य भी उसने देखा।

नौकर के मन में सोच आया। मैं केवल भगवान् के भजन का ढोंग ही रच रहा हूँ उसी में मेरे स्वामी तक मेरी चरणवन्दना कर रहे हैं यदि मैं सच्चे दिल से उनकी शरण में जाऊँ तो फिर क्या कहना। उसके मन में स्वतः वैराग्य का भाव उदय हुआ वह सच्चे दिल से भगवद्भजन में लग गया।

यह है भगवन्नाम की महिमा।

[श्री श्री माँ के श्रीमुख से निःसृत कथा]

श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग

—स्व. अमूल्य कुमार दत्त गुप्त

किसी प्रकार की अनुभूति न होने पर भी गुरुनिर्दिष्ट पन्था ही अनुकरणीय—

२ भाद्र सोमवार (१८-८-५२)

आज प्रातः गीता पाठ के बाद माताजी से पूछा, "गुरु के निर्देशानुसार चलने पर भी किसी किसी को यदि अपने भीतर किसी प्रकार की अनुभूति या आनन्द का अनुभव न हो तो वह ठीक रास्ते पर चल रहा है यह कैसे समझा जायगा ?

प्रश्न को सुनते ही माताजी ने अवधूत जी से कहा, "पिताजी इस सम्बन्ध में आपलोगों के शास्त्र में क्या कहा है?" अवधूत जी ने उक्त सन्दर्भ में बहुत कुछ कहा । विशेषतः गुरु पर विश्वास रखना तथा सत्संग की उपकारिता पर अधिक जोर दिया ।

माताजी—(मुझसे) तुम्हारे प्रश्न का जवाब मिल गया है ?

मैं— उन्होंने जो कहा वह तो समझा । पर मेरे प्रश्न का जवाब कहाँ हुआ ? किसी प्रकार की अनुभूति न होने पर मैं सही मार्ग पर चल रहा हूँ यह कैसे समझूँगा ?

माताजी — यह जो सत्संग की बात कही गयी ।

मैं— मन्त्र शक्ति से जो नहीं मिला, वह सत्संग से मिलेगा ?

माताजी—तुम सत्संग करते रहो उसी से ही किसी समय कोई एक बात तुम्हें मिल जायगी और तुम खुद ही समझ जाओगे कि तुम सही दिशा में ही चल रहे हो ।

इसके अलावा तुमने तो नारायण शास्त्री की बात सुनी है । दीर्घ समय तक गुरु के उपदेशानुसार चलने पर भी जब किसी प्रकार की अनुभूति नहीं हुई तो वे किशोरी भगवान् के पास गये । उन दिनों काशी में किशोरी भगवान् की काफी प्रसिद्धि थी । लोगों से उन्होंने सुना था कि किशोरी भगवान् के उपदेशानुसार चलने पर थोड़े समय में ही आध्यात्मिक मार्ग में ऊँची अवस्था प्राप्त की जा सकती है । उसने किशोरी भगवान् के पास जाकर उपदेश की प्रार्थना की । उन्होंने उनका (अर्थात् किशोरी भगवान् के) नाम जप एवं मूर्ति के ध्यान करने का उपदेश दिया । ऐसा करने पर नारायण शास्त्री को तीन दिनों के भीतर ही एक आश्चर्यजनक अनुभूति हुई । वह जिधर भी-देखता था उसे भगवान् श्री कृष्ण की मूर्ति ही दिखाई पड़ती थी । घर मकान, पेड़ पौधे सब ही कृष्णमय । पर वह जो कृष्ण मूर्ति देखते थे, उनके आकार प्रकार सब ही कृष्णमय थे केवल मुख किशोरी भगवान् का था । इस प्रकार कुछ दिन चलता रहा । एक दिन वह अपने घर पर जप कर रहा था इतने में उनके सामने उनके गुरुदेव की मूर्ति प्रकट हुई । मूर्ति में उग्रता एवं क्रोध युक्त भाव प्रकट हो रहे थे । उन्होंने नारायण शास्त्री को उनका नया मन्त्र जप करने तथा ध्यान करने से मना कर दिया । गुरु की इस मूर्ति को देखकर नारायण शास्त्री डर गये और कुछ दिन के लिये

किशोरी भगवान् का ध्यान तथा नामजप छोड़ दिया। साथ ही साथ उसकी सारी अनुभूतियाँ भी बन्द हो गयीं। कुछ दिन इस प्रकार व्यतीत होने पर पुनः शुष्कता का अनुभव करने पर वह उसी अनुभूति के लिए व्याकुल हो उठा। गुरुदेव ने उसे किशोरी भगवान् के पास जाने से मना किया था। इस बात की अवमानना करते हुए वह पुनः किशोरी भगवान् के पास जा पहुँचा। किशोरी भगवान् ने सब कुछ सुनकर उसे ही दोषी ठहराते हुए पुनः उसे उनके पास आने तथा उनका नाम जप एवं मूर्ति ध्यान करने का आदेश दिया। नारायण शास्त्री किशोरी भगवान् के पास आने जाने लगा। एक दिन शाम को वह किशोरी भगवान् के पास जा रहा था, जिस मकान में किशोरी भगवान् रहते थे उस मकान में पहुँच कर सीढ़ियों से वह ऊपर चढ़ ही रहा था कि उसने देखा कि उसके गुरुदेव वहीं पर खड़े हैं। यह देखते ही नारायण शास्त्री सकपका गया। गुरुदेव ने बिना कुछ कहे उसकी गर्दन पकड़ कर ऐसा धकेला कि वह सीढ़ियों से छिटक कर सीधे रास्ते पर आ पड़ा। पास ही एक पान की दुकान थी। वह काँपते हुए उस दुकान पर जाकर बैठ गया। डर से उसके पैर नहीं उठ रहे थे। वहाँ थोड़ी देर बैठ कर जरा स्वस्थ होकर वे गोपी बाबा के पास गये और पूरी घटना सुनायी। सब सुनकर गोपीबाबा ने उन्हें किशोरी भगवान् के पास जाने से मना किया और कहा कि अपने गुरु दत्त मन्त्र को वे जैसा जप करते थे, वही उनके लिये उचित पन्थ है। अन्य पथ का अवलम्बन करना उनके लिये मंगलजनक नहीं है। इस प्रकार देख लिया न गुरुनिर्दिष्ट पथ पर चलते हुए किसी अनुभूति के न होने पर भी उसी पथ पर चलना ही शिष्य का कर्तव्य है। अनुभूति के न होने पर यह पथ ठीक नहीं है ऐसी आशंका का कोई कारण नहीं है। विपथ पर चलने से गुरु स्वयं ही शिष्य को ठीक मार्ग पर ले आते हैं यह तो नारायण शास्त्री की घटना से ही पता चलता है। इसके अलावा तुम स्वयं ही जानते हो कि तुम्हारे ही एक सम्बन्धी को सत्संग में आकर यह अनुभव हुआ था कि वह गलत मन्त्र जप कर रहा है।

मैं—माताजी आप जिस घटना की बात कह रही हैं उसे तो सत्संग का फल तो नहीं मान सकते।

माताजी—(हँसकर) ऐसा सोच सकते हो, कि वह सत्संग पाने आया था अतः उसकी यह गलती पकड़ में आयी।

आज दिन के १२ बजे तक यह प्रसंग ही चला।

८ भाद्र बुधवार (२०-८-५२)

पिछले सोमवार श्री श्री माँ की विन्ध्याचल जाने की बात थी, पर उसके पहले दिन से वर्षा प्रारम्भ होने के कारण सम्प्रति वहाँ जाना स्थगित है। श्री श्री मा के साथ अवधूत जी भी विन्ध्याचल जायेंगे। वर्षा होने पर विन्ध्याचल में एक प्रकार के कीड़े निकलते हैं जो बीमारी का कारण होते हैं।

शाम को आश्रम में पाठ होता है। अवधूत जी "साधन समर" का पाठ करते हैं। कभी-कभी इस मौके पर माताजी के साथ नाना प्रसंगों की चर्चा भी होती है। आजकल डा. पन्नालाल जी माताजी को उनके द्वारा संकलित माताजी की उपदेशावली सुना रहे हैं।

श्री श्री माँ के पास सिद्धि प्रदर्शन का प्रयास—

आज पाठ के बाद भाई जी का प्रसंग छिड़ा। माताजी ने कहा, "साधु महात्मा को देखने पर भाई जी बड़ी श्रद्धा के साथ उनकी सेवा करते थे। इसलिये अनेक साधु उनके पास आते थे। एकबार एक साधु ने उनके पास जाकर कहा कि लोगों के प्रार्थनानुसार वह किसी भी देव देवी का दर्शन उन्हें करा सकता है। भाई जी ने कहा, उनकी अपनी कोई इच्छा नहीं है दर्शन करने की, पर साधु यदि दूसरे किसी को दर्शन करवाने के लिये तैयार हैं तो वह तब देख सकते हैं। साधु ने कहा, वह किसी भी व्यक्ति को यह सब देव मूर्ति दिखा सकता है। भाई जी ने भोलानाथ जी से सलाह करके यह ठीक किया कि वे साधु को शाह बाग ले आयेंगे और मुझे इन सब मूर्तियों को दिखाने को कहेंगे।

इस तरह निश्चित कर साधु को शाम को वे शाहबाग ले आये तथा इस शरीर को दिखाते हुए कहा कि इन को दिखाना पड़ेगा। साधु ने कहा, वह दिखाने को राजी है पर इस शरीर को उसकी बातों पर चलना पड़ेगा। एक अन्धेरे कमरे में इस शरीर को उनके साथ बैठना पड़ेगा उस समय वहाँ दूसरा कोई नहीं रह सकेगा। यह सुनकर भोलानाथ जी डर गये, शायद यह साधु इस शरीर का किसी प्रकार अनिष्ट करे। भाई जी दुविधा में पड़ गये। तब मैंने उनको कहा, जब तुमलोग बात करके साधु को लाये हो तो उनकी बातों के अनुसार तुम लोगों को अवश्य ही चलना पड़ेगा। अब तुम उनकी बातों को अन्यथा नहीं कर सकते हो। मेरी बात को सुनकर भोलानाथ के मत में परिवर्तन हुआ। एक छोटे से कमरे में मैं और वह साधु बैठे। साधु ने इस शरीर के हाथ के पंजों पर, उँगलियों के नाखूनों में तथा आँखों में काजल लगा दिया और कहा, यह शरीर हाथ के पंजे तथा ऊँगलियों की ओर देखता रहेगा तो सब देव, देवी एवं मन्दिर इत्यादि के दर्शन होते रहेंगे। मैं स्थिर होकर हाथ के पंजों की तरफ देखती रही। साधु भी चुप करके बैठा रहा, घंटों व्यतीत हो गये। इस प्रकार बैठा रहना इस शरीर के लिये नई बात नहीं थी। पर साधु स्वयं और बैठा न रह सका उसने पूछा, मैं कुछ देख पा रही हूँ या नहीं। मैंने कहा, कुछ भी नहीं। साधु दृढ़ विश्वास लेकर आया था कि वह मुझे कितना कुछ दिखा देगा। बाद में उसने दूसरों से कहा इनको (अर्थात् माँ को) कुछ भी दिखाना सम्भव नहीं है। डा. पन्नालाल ने माताजी से पूछा, माताजी आपके सान्निध्य में आकर इस व्यक्ति का मंगल हुआ? माताजी कुछ बोलीं नहीं केवल मुस्करा कर रह गयीं।

चालना के पागल शिव— ११ भाद्र, बुधवार, २७-८-५२

कुछ दिनों से डा. पन्नालाल अपनी लिखी जीवनी एवं उपदेश पाठ करके माताजी को सुना रहे थे। इस पाठ का उद्देश्य यही था कि यदि उसमें कहीं कोई भूल है तो माताजी संशोधन कर देंगी। इस प्रकार का पाठ होने पर माताजी कभी-कभी कुछ कुछ संशोधन नहीं करतीं ऐसी बात नहीं है। पर पढ़ा जाने वाला विषय अधिकांश समय उनके कर्णगोचर होने पर भी उसको संशोधन करने का ख्याल ही नहीं होता। यह बड़ी विचित्र बात है। इसलिये यह कहा नहीं जा सकता कि माताजी के जीवन की घटना या उपदेश माताजी के सामने ही पढ़कर सुनाये गये पर माताजी ने इस बारे में

कुछ कहा नहीं अतः उन्हें अध्रान्त मान लिया । माताजी के सामने इस प्रकार के पाठ की कोई सार्थकता नहीं है ऐसा भी कहा नहीं जा सकता । कारण माताजी हमारी वर्णित घटनावलियों का सूत्र लेकर अनेक नयी बातें कहती हैं ।

डा. पन्नालाल ने अपनी पुस्तक से चालना के शिव की कथा माताजी को पढ़कर सुनायी । माताजी की उम्र जब ७-८ साल की थी उन दिनों अपनी एक सगी सम्बन्धी के साथ जिनको माताजी बड़ी माँ कहा करती थीं, चालना (एक गाँव) के शिव जी के दर्शनों को गयी थीं । इन शिव के बारे में तरह-तरह की किंवदन्तियाँ प्रचलित थीं इसलिये लोग इन्हें पागल शिव कहा करते थे । माताजी की आत्मीया महिला माताजी को शिव मन्दिर में रखकर मेला देखने गयीं तब माताजी ने देखा कि शिवलिङ्ग से महादेव प्रकट होकर नाच रहे हैं । डा. पन्नालाल जी ने जब यह घटना माताजी को पढ़ कर सुनायी और भी कुछ माताजी से सुनना चाहा । तब माताजी ने कहा, "बड़ी माँ इस शरीर को शिव मन्दिर में रखकर चलीं गयीं और वहाँ कोई मन्दिर भी नहीं था । एक टीन के कमरे में ही शिव प्रतिष्ठित थे । उस कमरे के सामने एक पेड़ था । इस शरीर की बड़ी माँ शरीर को पेड़ के नीचे रखकर मेला देखने गयी थीं । यह बात भी ठीक नहीं है कि इस शरीर ने शिवलिंग से महादेव को निकल कर नाचते हुए देखा था । कमरे में जो लिंग था वह उसी तरह ही था । उसके सामने महादेव को नृत्य करते देखा था । वहाँ एक तालाब भी था । जब इस शरीर की दृष्टि तालाब पर पड़ी तब देखा कि उस कमरे के शिवलिङ्ग ही तालाब के जल में भिन्न भिन्न जगहों पर एक बार डुबकी लगा रहे हैं और पानी से सिर उठा रहे हैं । इस प्रकार वे जल को उथल-पुथल कर रहे हैं ।

(क्रमशः)

श्री श्री माँ का स्नेह

—स्वामी नारायणानन्द तीर्थ

श्री श्री माँ के स्नेह की बात को इतने दिनों के बाद भी स्मरण करने से आनन्द एवं कृतज्ञता से मेरा हृदय गद्गद् हो उठता है। प्रथम दर्शन से ही श्री श्री माँ के सम्बन्ध में मैंने जो भविष्यवाणी की थी, वह मेरे जीवन में अक्षरशः सफल हो रही है यह मैं डंके की चोट से कह सकता हूँ। माँ के स्नेह और करुणा की बात यदि स्वीकार न करूँ तो कृतघ्नता के पाप में लिप्त होना पड़ेगा। संसार में कृतघ्नता अर्थात् उपकार पाकर उसे स्वीकार न करने के समान पाप दूसरा नहीं है। माँ हम में से प्रत्येक की सुख-सुविधा के बारे में कितना सोचती हैं उसके असंख्य प्रमाण मुझे जीवन में मिले हैं। वे हम लोगों के बारे में केवल चिन्ता करके ही शान्त नहीं होतीं अपितु नाना प्रकार के कौशल से सब तरह की सुख-सुविधा की व्यवस्था भी वे करती हैं। दूसरी बात यह है कि माँ कभी भी किसी का नियम भंग नहीं कराती हैं और नियम भंग करने का अवसर नहीं देती हैं। मेरा नियम था कि यात्रा के समय मैं कुछ नहीं खाता। गन्तव्य स्थान पर जाकर स्नान सन्ध्यादि समाप्त कर तब जलपान या कुछ भोजन करता था। माँ मेरे इस नियम को जानती थीं। मुझे माँ ने शरबत पीने को न कहकर कितने कौशल से पानी प्रस्तुत कर अपने हाथ की प्रसादी शरबत पिला कर मेरा नियम भंग भी नहीं किया और मुझे अधिक देर के लिए उपवास भी नहीं रखा। श्री श्री माँ के हाथों से उसको पीते हुए मेरे किसी प्रकार के संस्कार में बाधा नहीं आयी। मैं अपनी इच्छा से शायद कभी भी स्नानादि किये बिना शरबत नहीं पीता, मेरा संस्कार बाधा देता व विवेक का दंशन होता। श्री श्री माँ किसी को भी व्यक्तिगत नियम तोड़ने नहीं देतीं। इस बारे में एक उदाहरण दे रहा हूँ।

सन् 1936 के मई महीने में देहरादून शहर से पाँच मील उत्तर की ओर हिमालय के पाददेश में किशनपुर नामक स्थान पर श्री श्री माँ के शुभ जन्मोत्सव के पुण्य दिवस पर समारोहपूर्वक श्री श्री माँ आनन्दमयी विश्व मन्दिर की स्थापना हुई। इस प्रतिष्ठान के प्रधान उद्योगकर्ता थे श्री श्री माँ के विशिष्ट भक्त और भाई जी श्री ज्योतिषचन्द्र राय के मन्त्र शिष्य हरिराम जोशी। वे एवं उनके मित्र श्री हंस दत्त तिवारी के अथक परिश्रम से अल्प समय के भीतर यह तैयार हो सका, अन्यथा असम्भव था। आश्रम-प्रतिष्ठा के उपलक्ष में नाना स्थानों से माँ के भक्तगण आये थे। भाई जी के स्नेहिल आह्वान पर हम लोग भी वहाँ उपस्थित हुए। श्री श्री माँ के साथ निरवच्छिन्न आनन्द में हमारे दिन बीत रहे थे।

आश्रम के मध्यस्थल में 'हाल' है। इस कमरे में अनावश्यक बातचीत करना मना है। यहाँ भगवन्नाम कीर्तन और भागवत कथा के लिए दोनों समय ही देहरादून शहर से लोग आकर मिलते

हैं। इस हाल का नाम-मन्दिर रखा गया है। किसी कमरे का नाम 'मातृ-मन्दिर' किसी का नाम 'भोग मन्दिर' किसी कमरे का नाम 'स्वाध्याय मन्दिर' किसी कमरे का नाम 'सत्संग मन्दिर' रखा गया है। ऊपर की मंजिल में दो कमरे हैं, एक 'पितृ मन्दिर' दूसरा ध्यान मन्दिर या 'मौन मन्दिर'। बाद में मन्दिर और आश्रमवासियों के निवास के लिए और बहुत से कमरों का निर्माण हुआ है। इस सुन्दर और स्वच्छ चित्र के सदृश मनोरम आश्रम में केवल जप ध्यान, नाम, पाठ और सत्संग छोड़ दूसरी किसी आलोचना का निषेध है।

एक दिन दोपहर को 'भोग मन्दिर' - में माँ और बाबा भोलानाथ भोग में बैठे थे। हम लोग कई जन खड़े उनका भोजन देख रहे थे। श्री श्री माँ को खिला रही थीं दीदी माँ की बड़ी वहन श्रीमती सरोजनी देवी। बाबा भोलानाथ माँ के पास बैठकर स्वतंत्र रूप से आनन्द से भोजन कर रहे थे। माँ जब भोजन कर रही थीं इस समय हम में से कई व्यक्तियों द्वारा प्रसाद के लिए माँ के पास जाकर हाथ पसारने से माँ को जो खिला रही थीं वे ही हरेक को माँ की थाली से प्रसाद दे रही थीं। वे सब माँ का प्रसाद लेकर बाहर जाकर आनन्द से खा रहे थे, कारण कि भोग मन्दिर में माँ और पिताजी को छोड़कर और किसी का खाना मना था। मैं भी वहाँ खड़े होकर माँ की भोग-लीला का दर्शन कर रहा था। सब लोग माँ के पास जाकर प्रसाद ग्रहण कर रहे थे। मैं नहीं कर रहा था, क्योंकि मेरा नियम था कि मैं दिन में एक बार आचमनीय वस्तु अथात् चावल दाल रोटी तरकारी पूरी इत्यादि खाता था। उपनयन द्वारा संस्कृत ब्राह्मणों का यही शास्त्रीय नियम है। मेरे इस नियम के बारे में माँ जानती थीं। सब भक्ति सहित प्रसाद ले रहे थे और मैं एक ओर खड़ा था, यह बाबा भोलानाथ ने लक्ष्य किया। उन्होंने मुझसे इशारे से पूछा, मैं क्या करूँगा? माँ का प्रसाद लूँगा या नहीं? बाबा भोलानाथ उस समय माँ के निर्देशानुसार मौन रहते थे। विशेष प्रयोजन पर केवल माँ से बात करते थे। अपना मनोभाव वे लिखकर व्यक्त करते थे। मुझे संकेत करने मात्र से मैं घबड़ा गया और मैंने हाथ फैला दिया। मेरे हाथ फैलाने के साथ-साथ ही माँ ने अपने हाथों से मेरा हाथ हटा दिया। माँ जानती थीं कि मैं दिन में एक बार छोड़ अन्नादि नहीं लेता था। मेरे अपने नियम के भूलने से क्या होगा, माँ तो वह भूली नहीं वे कभी भी किसी के नियम को तोड़ने नहीं देतीं। किसी नियम को एक बार करके उसको भंग करना वे किसी प्रकार पसन्द नहीं करती थीं। पर विशेष विशेष क्षेत्र में माँ नियम भंग नहीं करातीं, ऐसा भी नहीं कहा जा सकता। वाराणसी में श्री श्री माँ के आश्रम निर्माण के बाद से मेरा हाथ हटा देने से मैं शर्मिन्दा होकर एक कोने में जाकर खड़ा रहा। श्री श्री माँ के प्रसाद से वंचित होने के कारण मुझे दुःख नहीं हुआ, ऐसी बात नहीं। थोड़ी देर बाद न जाने क्या सोचकर माँ ने अपनी बायीं ओर मुझे बैठने को कहा। उनके आदेशानुसार उनके पास बैठते ही उन्होंने कहा, 'मुहँ खोलो' माँ के निर्देशानुसार मेरे मुँह खोलते ही माँ ने अपनी थाली में से एक ग्रासा प्रसाद लेकर अपने हाथों के द्वारा मेरे मुँह में दूर से डाल दिया। श्री श्री माँ द्वारा अपने हाथों से खिलाये हुए प्रसाद को पाकर मैं अपने को धन्य व कृतार्थ समझने लगा। प्रसाद के लिए फैलाये हुए हाथ को हटा देने से मेरे मन में जो दुःख हुआ था, उसे माँ ने इस प्रकार दूर किया।

इस प्रकार मेरी प्रसाद पाने की इच्छा उन्होंने पूर्ण की और स्वयं अपने हाथों खिला कर मुझे नियम भंग के दोष से बचाया। अपने हाथों से खाने में शायद नियम भंग होता, इसीलिए परम कल्याणमयी माँ ने अपने हाथों से इस प्रकार खिला दिया। महापुरुषगण जो करते हैं उससे जीव का सर्वतोभावैत कल्याण ही साधित होता है। कभी भी किसी का अमंगल नहीं होता एवं उनके सामने भी अमंगल नहीं होने देती। इस प्रकार माँ कितने प्रकार से हम लोगों की धर्म संकट से रक्षा कर रही हैं वह लिखकर नहीं समझाया जा सकता। प्रति वर्ष ही वसन्तकाल में श्री वासन्ती देवी की पूजा होती आ रही है। माँ कभी वहाँ उपस्थित रहती हैं, कभी नहीं भी। एक बार माँ की उपस्थिति में वाराणसी आश्रम में पूजा हो रही थी। महाष्टमी के दिन दोपहर के भोग के बाद सब प्रसाद पाने बैठे थे, परम कल्याणमयी श्री श्री माँ अपने हाथों से भक्तों को महामाया का अन्न प्रसाद दे रही थीं। सब लोग महाष्टमी के दिन विश्व माता के हाथों से प्रसाद पाकर परम उल्लास से जय ध्वनि करते हुए श्रद्धा भक्ति सहित उसे ग्रहण करने लगे। प्रसाद वितरण के समय माँ के महाप्रसाद महाप्रसाद कहने पर सबके मन में भक्ति का संचार हुआ था। जो जो वहाँ उपस्थित थे सभी माँ के हाथों से प्रसाद पाकर अपने को धन्य समझ रहे थे। सबको 'महाप्रसाद' देकर करुणामयी माँ कन्यापीठ के दरवाजे पर आकर पहले दीदी को फिर कन्यापीठ की कुमारी कन्याओं को प्रसाद देने लगीं। उन सबने भक्ति सहित मस्तक से स्पर्श कर प्रसाद ग्रहण किया। श्री श्री माँ महाप्रसाद लेकर एकदम आश्रम के मुख्य दरवाजे पर आकर वहाँ जमीन पर बैठ गयीं। माँ को आज अन्नपूर्णा के रूप में सबको प्रसाद वितरण करते देख मेरे मन में आया कि 'माँ' आज मैं इस प्रसाद से वंचित कैसे रहा ? इस बात के सोचने के साथ साथ माँ ने इस महाप्रसाद से एक कण लेकर मेरे मुँह में डाल दिया। फिर स्वामी परमानन्द जी को बुलाकर उन्हें भी खिला दिया। वहाँ जितने लोग थे सब माँ के पास आकर मुँह खोलकर खड़े होने लगे। सन्तानवत्सलां जननी भी उनके मुँह में प्रसाद देने लगीं। जाति वर्ण निर्विरोध माँ ने मल्लाहों को भी अपने हाथों से महाप्रसाद खिला दिया। माँ के सामने आश्रम के पुराने ब्रह्मचारी श्रीमान् हीरू (वर्तमान में तन्मयानन्द) खड़े थे। न जाने उनके मन में क्या भाव उदय हुआ था। उन्होंने उस महाप्रसाद से एक ग्रास माँ के मुँह में डाला। माँ ने भी निःसंकोच उसे खाया। यह कहना न पड़ेगा कि वह प्रसाद सभी जातियों से छुआ गया था। श्री श्री माँ के परम भक्त गोपालदास गुप्त दुःख के साथ कहते थे कि माँ के आश्रम में छुआ छुई बहुत ज्यादा है, वे आश्रम के पास ही रहते थे। इसीलिए माँ ने पटलदा से उनको इस जगन्नाथ लीला का दर्शन करने के लिए बुलाया।

माँ जैसे वर्णाश्रम धर्म की अक्षरशः रक्षा करती हैं, बाद में उसे तोड़ते भी उनको कोई कठिनाई नहीं होती। माँ के लिए बनाना तोड़ना दोनों बराबर है शुचि अशुचि दोनों ही द्वन्द्व के बहुत ऊपर हैं और संस्कार मुक्त हैं।

श्रीमद् भागवत महापुराण - माहात्म्य

—श्री अशोक भाई कुलकर्णी

अनंत महिमा मंडिता परम आराध्या श्री श्री माँ के पावन चरणकमलों में बार-बार कोटि-कोटि प्रणाम करके प्रार्थना करता हूँ— "श्रुत्यगोचर परमात्मा की वाङ्मयी तनु बहुमुखी रूपकावगुठित श्रीमद् भागवत महापुराण की सरस बुद्धिगम्य व्याख्या इस अल्पमति द्वारा कराने में अमर्याद सामर्थ्यसंपन्ना केवल आप ही सक्षम हैं, इसलिए —

पदे पदे श्री भगवंत दर्शने तथा च तत्रैव निगूढज्ञाने ।

यद्यप्यशक्तोऽपि प्रवृत्तभूताय आशीष — आलंबनं देहि मातः ॥

श्रीमद् भागवत के पद्मपुराणान्तर्गत माहात्म्य में शिष्टसंप्रदायानुसार नमस्कारात्मक मंगलाचरण किया है ।

सच्चिदानन्दरूपाय विश्वोत्पत्त्यादि हेतवे ।

तापत्रय विनाशाय श्री कृष्णाय वयं नमः ॥

वन्दन करने वाले 'वयं' (हम) वक्ता और श्रोता हैं । इससे सूचित करते हैं कि यह ग्रंथ अकेले पारायण का नहीं । श्रवण और श्रावण विधि की यह अपेक्षा रखता है । सुनना और सुनाना रूप मंथन से शब्दों में छिपा हुआ बहुमुखी भाव-नवनीत प्रकट हो जाता है । (नवानां — श्रवणादिनवविधभावानां समूहः नवः तत्प्रति नीतं (अन्तरङ्गम्) नवनीतम्) ।

ग्रंथ का प्रधान विषय श्रीकृष्णलीला होने से वंदन उनको करते हैं 'श्रीकृष्ण' शब्द से उनका गोचारण करने वाला, वंशी वाला, असुरारि, कंसारि आदि अनेक रूप अंतरंग में उद्भासित होते हैं । लेकिन यहाँ उन्हें आकृतिबद्ध नहीं किया है । 'द्विभुज चतुर्भुज' आदि व्यक्तिरूप अथवा 'सहस्रभुज' आदि विराटरूप का संकेत यहाँ नहीं किया है ।

है सिर्फ आदिम तत्त्व का स्वरूप लक्षण "सच्चिदानन्द रूप" । भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों कालों में तथा कालपूर्व और कालोत्तर जो अक्षुण्ण अस्तित्व है उसे 'सत्' शब्द से निर्देशित किया । लेकिन यह कालातीत अस्तित्व (जड़) नहीं है । मायोपाधिक विश्व में प्रतीत होने वाला 'हिलना' "खाना" 'बोलना' आदि भासमान चैतन्यरूप भी नहीं है । यह इन भासमान क्रियाओं का प्रेरक चिद्रूप है । जड़ की व्यावृत्ति है । चिद्रूप होने पर भी "क्षुब्ध" अशान्त नहीं है आत्परतत्त्व आत्मक्रीडत्व आप्तकामत्व का अधिष्ठान और पर्यवसानरूपी 'आनन्दरूप' है । इसलिए "एकोऽहम् बहुस्याम्" इस संकल्प के उदय के साथ अनंतकोटि ब्रह्मांड की 'उत्पत्ति स्थिति लय रूपी लीलाविहार उसमें शुरू हो गया । इस चक्र में समाया 'जीव' प्रतिक्षण कुछ न कुछ पाप करता है । (जीवों का

जन्म मृत्यु रूप चक्र में परिभ्रमण कराने वाला प्रत्येक कर्म 'पाप' है। इस दृष्टि से कर्तृत्वबोध से किया हुआ शुभ कर्म भी 'शुभकर्मफलभोग' रूप जन्म का कारण होने से 'पाप' ही है। इन पापों का भोग करते समय त्रिविध तापों की उत्पत्ति होती है। (आधिदैविक - आधिभौतिक आध्यात्मिक ताप त्रिविध ताप हैं।) जब तक 'जीवत्व' है 'पाप' होता ही रहता है। किन्तु यहां निर्दिष्ट 'श्रीकृष्ण' उनके फलभूत तापों को मिटाने वाला है। (इस प्रकार 'तत्त्व' रूप श्रीकृष्ण भी सामान्य जीवों को प्रिय अपेक्षित कर्म करते हैं। इसलिए कि उनकी भक्ति में वह उद्युक्त होगा।)

मंगलाचरण के बाद अब माहात्म्य प्रारंभ होता है, पार्श्वभूमि इस प्रकार है— भगवान श्रीकृष्ण का स्वधाम गमन हो गया है। कलियुग प्रभावित होने लगा है। उससे बचने के लिए शौनकादि ऋषि नैमिषारण्य में एक दीर्घकालीन यज्ञ कर रहे हैं। सवन-अवकाश काल में सत्संग के अभिलाषी हैं। इसलिए वहीं आये सूतजी को देखकर वे आनंदित हुए।

यही भाव कहते हैं—

नैमिषे सूतमासीनमभिवाद्य महामतिम् ।

कथामृतरसास्वादः कुशलं शौनकोऽब्रवीत् ॥

नैमिषारण्य में आये महामति सूतजी को अभिवादन करके कथारूपी अमृत का आस्वादन करने में निपुण शौनक जी ने कहा— 'यह इस श्लोक का स्पष्टार्थ है। आगे कही गयी भागवती कथा के वक्ता सूतजी और प्रधान श्रोता शौनक जी हैं। इन दोनों के लिए उपर्युक्त विशेषणों द्वारा श्रीमद्भागवत का वक्ता और श्रोता कैसा होना चाहिए इस बात को सूचित कर रहे हैं। सूतजी महामति हैं। सकल शास्त्र के वेत्ता और उद्गाता होने के नाते उनकी बुद्धिमत्ता महान है। दूसरे अर्थ में 'महान' एकमात्र परमात्मतत्त्व है। उसमें जिसकी बुद्धि सदैव लगी है वह महामति है। (महति एव मतिर्यस्य सः महामतिः) एकमात्र परमात्मा में जिसकी बुद्धि स्थिर है वह महामति है। श्रीमद्भागवत के वक्ता का यह अनिवार्य लक्षण है भगवान श्रीकृष्ण को छोड़कर अन्य किसी विषय में उसका प्रवेश भी नहीं होना चाहिए। "अक्षण्वतां फलमिदं न परं विदाम्" (भा. १०.२९) के अनुसार प्रतिपल प्रतिपद उसकी बुद्धि कृष्णमय होनी चाहिए, उसी प्रकार शौनक जी को कथामृतरसास्वादः कुशलः विशेषण देकर श्रोता का अनिवार्य लक्षण बताया है। यहाँ वर्णित श्रीमद्भागवत कथा रूप में ये कथाएँ रस से सरोबार हैं। उस रस का आस्वादन — हरेक वृंद का माधुर्य अनुभव से प्राशन-मनन निदिध्यासन युक्त श्रवण आवश्यक है। दूसरे अर्थ में 'रसो वै सः' इस श्रुति के आधार पर वह परमात्मा ही रस मय है। कथा की घटनाएँ नहीं किन्तु पद पद से झरने वाला वही 'रस' अक्षरों की आड़ में छिपे हुए परमात्मतत्त्व - शाश्वत सिद्धान्त उन्हीं को दूढ़ निकालकर, स्थानकालातीत होकर उसी में डुबकी लगाने में श्रोता पूर्ण कुशल होना चाहिए। शौनकजी ऐसे हैं इसलिए कहते हैं "सूताख्याहि कथासारं मम कर्णरसायनम्"।

सकल शास्त्रवेत्ता सूतजी आप उनकी ऐसी सारभूत कथा सुनाओ जो कर्णद्वारा दवा की तरह मेरे अन्तरंग में जाएगी और वहाँ के काम क्रोधादि रोगों का नाश करेगी। हिणकस धातु से सोना

बनाने वाला 'द्रव' भी रसायन नाम से जाना जाता है। इस अर्थ में यह रसायन (कथामृतरूपी) कर्णद्वारा मेरे अन्तरंग में प्रवेश करके वहाँ की हीन साहंकार कर्म प्रेरणाओं को भगवद् कामनारूपी दिव्यता में परिवर्तित करेगा।

सूतजी जवाब देते हैं -

कालव्यालमुखग्रास त्रासनिर्नाशिहेतवे ।
श्रीमद्भागवतं शास्त्रं कलौ कीरेण भाषितम् ॥

कालरूपी सर्प के मुख का ग्रास सब है सामान्य जीव उसी का 'त्रास' महसूस करता है। इस त्रास से छुटकारा पाने के लिए इस कलियुग में श्री शुकाचार्य जी ने उपाय भूत श्रीमद्भागवतशास्त्र का उद्घोष किया है।

यह भागवती कथा श्री शुकाचार्य जी शापग्रस्त अनशनव्रती परीक्षित को सुनाना प्रारंभ कर ही रहे हैं इतने में हाथ में अमृत लेकर "स्वकार्यकुशलाः सुराः" अपना काम साध्य करने में कुशल देवता - वहाँ आ गये। श्री शुकदेवजी से कहते हैं "यह अमृत राजा को पिलाओ (इससे उसकी काया अमर हो जायेगी। आपकी कथा से नहीं); और बदले में (आप इसे जो श्रीमद्भागवत सुनाने वाले थे) हमें वही कथामृत दो," परीक्षित को मिलने के लिए कतिपय ऋषि मुनि महात्मागण, प्रजाजन आदि आये थे, वे सभी वहीं बैठे थे। उन्होंने भी राजा के लिए श्री शुकदेवजी द्वारा प्रदत्त कथामृत प्राशन किया। शुकाचार्य जी ने किसी को वहाँ से भगाया नहीं। इसी प्रकार देवता भी वहीं बैठ जाते तो कथामृत पान आकंठ कर सकते थे, किन्तु वे कहते हैं

"एवं विनिमये जाते" स्वर्गीय अमृत और कथामृत का विनिमय करके श्रीमद्भागवतकथा सिर्फ अपने लिए खरीदना चाहते हैं। यह बात श्री शुकाचार्य जी को संगत नहीं लगी। विनिमय की बात उठते ही श्री शुकदेव गरज पड़े "भाग जाओ स्वर्गलोक अपने स्थान में"।

"क्व कथा क्व सुधा लोके क्व काचः क्वमणिर्महान्" कहाँ भागवत कथा रूपी रत्न और कहाँ काच के टुकड़े के समान सुधा। मानो सूचित कर रहे हैं श्रीमद्भागवत कथा का दान हो सकता है विनिमय-विक्रय नहीं। श्रीमद्भागवत कथा का श्रवण हो सकता है, पर क्रय नहीं।

अब सूतजी शौनकादि महर्षियों को श्रीमद्भागवत माहात्म्य "भक्तियुक्तं कथानकं" सुनाना प्रारंभ करते हैं— एक बार 'विशाला' नगरी में बदरी विशाल क्षेत्र में सनकादि चार कुमार सत्संग के लिए इकट्ठे हुए इतने में दीनवदन नारदजी को उतावली से विचरण करते देखकर कारण पूछा।

नारद जी कहते हैं कलियुग अवतीर्ण हुआ जानकर मैं ने सर्वोत्तम लोक मृत्युलोक में इतस्ततः परिभ्रमण परिस्थिति जानने हेतु किया। कलि ने संपूर्ण धरातल पर अपना अमल जमाया है। कहीं भी "सत्यं नास्ति तपः शौचं दया दानं न विद्यते" आश्चर्य से कुमार पूछते हैं "फिर जीव करते हैं क्या?"

नारदजी जवाब में कलिग्रस्त जीवों का एक ही शब्द में यथार्थ वर्णन करते हैं।

"उदरंभरिणो जीवाः" जीव रात दिन एक ही कर्म के अनुष्ठान में लगे हैं— अपना और अपनों का पेट पालना । अपनी और अपनों की कामना तृप्ति । बाद में संत कहलाने वाले पाखंडी तथा विरक्त कहलाने वाले 'परिग्रही' आदि का वर्णन करके कहते हैं । "अंत में भगवत लीलाभूमि यमुना तट आया ।" वहाँ एक आश्चर्य देखा । एक युवती अत्यन्त शोकार्त है । आस-पास कई सुंदरियाँ खड़ी हैं । सामने दो वृद्ध निश्चेष्ट पड़े हैं । उन्हें जगाने का निष्फल प्रयत्न वह कर रही है । नारद जी को देखते ही पुकार उठी "भो भो साधो क्षणं तिष्ठ" रुककर नारद जी परिचय पूछते हैं तो जवाब देती है—

अहं भक्तिरिति ख्याता इमौ मे तनयौ मतौ, "ज्ञान वैराग्यनामानौ" "मुझे भक्ति कहते हैं । ये दोनों (निश्चेष्ट पुत्र) ज्ञान और वैराग्य नामक मेरे पुत्र हैं । ये गंगादि नदियाँ (युवती रूप में) मेरी सेवा में उपस्थित हैं । फिर भी मैं अशान्त हूँ । इसकी वजह मेरी कथा जानने से आप जान जायेंगे ।" अब वह अपनी पूर्व कथा सुनाती है ।

"उत्पन्ना द्रविडे साहं वृद्धिं कर्णाटके गता ।
 क्वचित्क्वचिन्महाराष्ट्रे गुर्जरे जीर्णतां गता ॥

इस परिचय का भौगोलिक अर्थ कुछ असंगत मालूम पड़ता है । शब्दार्थ इस प्रकार है—

"मैंने द्रविड़ देश में (केरल प्रांत में) जन्म लिया । मैं कर्णाटक में पली । (बढ़ गयी) । महाराष्ट्र में भी किसी-किसी जगह मेरी पुष्टि हुई । लेकिन गुजरात में जाकर मैं जर्जर-वृद्ध हो गयी" ।

वस्तुतः भक्ति सार्वकालिक और सार्वदेशिक है । इसलिए उपरोक्त भौगोलिक दृष्टि से "द्रविड़" आदि शब्दों का अर्थ तर्क विसंगत लगता है । एक बात विचार से स्पष्ट है कि भक्ति का जन्म वर्धन तथा जीर्णत्व अंतःकरण विशिष्ट है । प्रदेश विशिष्ट नहीं । इस दृष्टि से उपरोक्त द्रविड़ कर्णाटक महाराष्ट्र गुर्जर से भारत भू के प्रदेश विशेषों का नहीं किन्तु जीव के अन्तःकरण स्थिति विशेषों का निर्देश है —

i — उत्पन्ना द्रविड़े— इडा माने ब्रह्मविद्या यह जब अनुभाव्य है— अनुभूत नहीं है— तब शब्द रूप में ही अन्तरंग में विद्यमान रहती है । यह जड़ ही है । द्रव द्रवति माने द्रवीभूत होना । सत्संग से भगवत्कृपा से अथवा महात्माओं की करुणा से जब भगवद्भाव उदित होता है— ईश्वर मिलन की अभीप्सा जागृत होती है — तब यही जड़ शब्द विद्या पिघलने लगती है । द्रवीभूत होने लगती है । यही द्रविता इडा द्रविडा भक्ति का उत्पत्ति स्थान है । (इसका पूर्णांगीरूप द्रविड़) ।

ii — वृद्धिं कर्णाटके — उद्भूत भक्ति की विकास-वृद्धि तब होती है जब उसे व्याधि, कर्तव्य, अरुचि अन्य प्रलोभन आदि अन्य किसी से प्रतिरोध न होगा । कृ (करोति) माने करना । "अटकम्" माने प्रतिरोध प्रतिबन्ध ।"

"करोति न अटकम्" (ईदृशी स्थिति वृत्ति अवस्था) कर्णाटका उसी का पूर्णांगीरूप कर्णाटक इसलिए "कर्णाटके वृद्धि" बतायी ।

iii — क्वचित्क्वचिन्महाराष्ट्रे — प्रायः देखा जाता है कि धन, मान, बल, सौंदर्य आदि की प्रचुर मात्रा में प्राप्ति जीव के अहंकार की पुष्टि करती है । यह अहंकार भक्ति वर्धन में बाधक है । 'राष्ट्र' शब्द स्वत्व विशिष्ट समूह को सूचित करता है । लक्षणा से व्यक्ति के संबन्ध में "स्व"

विशिष्ट वृत्तिसंघात को राष्ट्र कह सकते हैं। किसी का स्वत्व धन से मैं धनी हूँ, इस भाव से, किसी का विद्या से मैं पंडित हूँ इत्यादि, किसी का शारीरिक बल से मैं बलवान हूँ इत्यादि तथा किसी का अन्य किसी से जुड़ा रहता है। यह उसका 'राष्ट्र' है। उपरोक्त निरीक्षण के विपरीत किसी व्यक्ति के संबन्ध में देखा जाता है कि उसका 'राष्ट्र' महान् होते हुए भी उसके अंतरंग में भक्ति वर्धित होती है। हनुमान शारीरिक तथा बुद्धि बल में अजोड़ होते हुए भी महान भक्त, अम्बरीष सम्राट होते हुए भी भक्त, परीक्षित ज्ञान बल ऐश्वर्य गुण भंडार और भगवल्लीलानुरागी इसलिए 'क्वचित्क्वचिन्महाराष्ट्रे वृद्धिं गता कहा।

iv - गुर्जरे जीर्णतां गता - 'गुर' माने (सत्व) 'गा' 'भा' लक्षणा से- (अस्तित्वावश्यकतत्त्व) भक्ति का गुर है शुद्ध सरल भाव। अगर पूजा में कहीं देखा जाय कि शास्त्र विधान से पूजा सामग्री जुटाई है नेम दीपक विद्युत से रोशनाई की है। अन्य अजोड़ सजावट सजाई है। बैंड और पटाकों का आसमानभेदी नाद हो रहा है लेकिन भगवान के प्रति भाव शिथिल होगा तो भक्ति का यह गुर जडित-जर्जरित ही कहलायेगा। धीरे-धीरे ऐसी भक्ति जीर्ण हो जाएगी। इसलिए 'गुर्जरे जीर्णतां गता' कहा।

भक्ति आगे कहती है ज्ञान वैराग्य इन दोनों पुत्रों के साथ वृद्धत्व प्राप्त होने से मैं दुःखित हुई। हम तीनों हमेशा एकत्र ही रहते हैं इन्हीं को साथ लेकर मैं वृन्दावन आयी। यहाँ पर मैं पुष्ट हुई किन्तु ये दोनों वृद्ध ही रहे। महर्षे ! इसकी वजह बताइये (ताकि वृद्धत्व का इलाज कर सकूँ)। नारदजी कहते हैं कि इसकी वजह एक ही है "युगोऽयं दारुणो कलिः" अब किसी को पुत्र के साथ तुम्हारा दर्शन नहीं होगा।

कलिग्रस्तों की भक्ति का यहाँ यथार्थ वर्णन है। वृन्दावन में (1) वृ (वृणीते) माने स्वीकारना (2) दा (यच्छति) माने देना (3) वन-यह 'परमात्मा' वाचक है। (तद्धि, तद्धनं नाम...केनोपनिषद्। यहाँ भक्ति उसी वन का (अनंत रूप विलसित परमात्मा के उसी विशेष रूप का) निर्देश कर रही है जो अभिलाषाओं की पूर्ति करता है। (वृणीतात् ददाति इति वृंदः ईदृशं वनं वृन्दावनम्)। यहाँ साधक सिर्फ सकाम भक्ति को स्वीकार करता है। इसलिए वह अंशतः पुष्ट होती है। किन्तु ज्ञान और वैराग्य वृद्ध ही रहे। "अत्रेमौ ग्राहकाभावात्रजरामपि मुंचतः"।

नारदजी भक्ति को बहुत समझाते हैं-कलिग्रस्त धरातल का वर्णन करते हैं और प्रतिज्ञा करते हैं कि ऐसे घोर युग में भी "त्वां स्थापयिष्यामि गेहे गेहे जने जने" यह आश्वासन सुनकर भक्ति "सर्वांग पुष्टि संयुक्ता" हो गयी और नारदजी को वरदान दिया "मैं तुम्हारे अन्तरंग में सदा रहूँगी।" आगे कहती है तथापि 'पुत्रयोश्चेतना नास्ति' मेरे पुत्रों को ज्ञान वैराग्य को जागृत करो। उन्हें जगाने के लिए नारद जी द्वारा किया गया प्रयत्न जीव के अन्तरंग स्थित ज्ञान वैराग्य जागृत करने का सही रास्ता सूचित करता है।

१. कराग्रेण विमर्दनम्- नारदजी ने पहले हाथों से हिलाकर जगाने का वृथा प्रयत्न किया।

२. मुखं संयोज्य कर्णति- कानों में पुकारा लेकिन जागृति नहीं आयी।

३. गीता पाठैर्मुहुर्मुहुः— कानों में ब्रह्मसूत्र, गीता आदि का जोर जोर से बार बार उच्चारण किया इससे दोनों को तनिक जागृति आयी। किन्तु फिर से अचेत हो गये।

४. अन्त में विवश होकर नारद जी ने "गोविन्दं स्मारयामास" भगवान की शरण ली।
यहाँ हाथ (कर) कर्म का प्रतीक है। ज्ञान वैराग्य किसी कर्म का प्रतीक नहीं है। "कान में शब्द" दीक्षा का प्रतीक है। "किसी महान विभूति से दीक्षा प्राप्त की" इतना ही ज्ञान वैराग्य अन्तरंग में जागृत करने में समर्थ नहीं। गीतापाठादि "शब्दज्ञान" से उन्हें क्षणिक जागृति आती है। अन्तरंग में अन्य व्यवहार उद्भूत होते ही वे फिर सुप्त होते हैं। तीव्रभाव से भगवत् शरणागति यह एकमात्र उपाय ज्ञान वैराग्य के उत्थान के लिए आवश्यक है। नारदजी ने जब भगवत्स्मरण किया तब आकाशवाणी हुई "एतदर्थं तु सत्कर्म सुरर्षे त्वं समाचर" यह सत्कर्म क्या है तुझे "साधवः साधुभूषणाः" बतायेंगे। आकाशवाणी के अनुसार नारदजी इन साधुओं की खोज में निकले और अंत में उपरोक्त रीति से कुमारों के पास पहुँचे। उन्होंने बताया सत्कर्म माने "श्रीमद्भागवतालापः स तु गीतं शुकादिभिः"।

वेद उपनिषदों की सारभूता होने से इस कथा में उनसे विलक्षण "ज्ञान वैराग्य" जागृति का सामर्थ्य है। तब नारदजी ने गंगाद्वार 'हरिद्वार' के समीप आनन्दवन में श्रीमद्भागवत कथा कुमार द्वारा माहात्म्य के साथ करायी। सुनते ही चमत्कार हुआ—'भक्ति सुतौ तौ तरुणौ गृहीत्वा' प्रेमैकरूपा सहसाविरासीत् ॥"

फिर से तारुण्य प्राप्त अपने प्रिय पुत्रों के हाथ पकड़कर भक्ति उनके सहित "श्रीकृष्ण गोविन्द हरे मुरारे" का उच्चारण करते करते बेहोश नृत्य करने लगी। यह देखकर नारदजी कुमारों से पूछते हैं। "सप्ताह यज्ञ की अलौकिक महिमा तो मैंने देखी। लेकिन इससे 'के के पुनर्ति' सप्ताह यज्ञ द्वारा कलियुग में कौन-कौन पावन होते हैं ? जवाब में कुमारों ने अनेक पातकों का निर्देश करके एक पुरातन इतिहास बताया उसे 'गोकर्ण उपाख्यान' नाम से जाना जाता है। जीवों के उद्धार की यह अद्भुत रूपक कथा है।

(क्रमशः)

आनन्दमयी स्मृति

— चित्रा घोष

महात्मागण श्रीवास अंगन में लौट आये। हमलोग माँ को लेकर गोविन्द जी के मन्दिर में आये। लौटने के बाद छत पर बैठने का ख्याल होने के कारण तख्तपोश छत पर बाहर निकाल कर माँ का बिछौना कर दिया गया। माँ कमरे में एकबार जाकर तुरन्त बाहर निकल कर तख्त पर आकर बैठीं। आसमान साफ होने के कारण चारों ओर निर्मल चाँदनी छिटक रही थी। माँ का तख्त हमने चाँद के नीचे ही बिछाया था। माँ थोड़ी देर चादर ओढ़ कर स्थिर बैठी रहीं। मैं माँ को पंखा झल रही थी। इस चाँदनी रात में श्वेत वस्त्रपरिहिता श्री श्री माँ की अतुलनीय शोभा हो रही थी। माँ के काले काले केश-गुच्छों पर बिखरती चाँदनी की एक अलग ही ज्योतिर्मण्डल की रचना हो रही थी। धीरे-धीरे नवद्वीप के और लोग भी एकत्रित होने लगे। एक ओर पुरुष तथा दूसरी ओर महिलायें बैठीं। हमने एक चटाई महिलाओं की ओर बिछा दी। चाँदनी रात की चुप्पी को तोड़ती हुई एक महिला बोल उठी "माँ आपको तो किसी तरह पाया नहीं जाता-कितना पुकारती हूँ कुछ भी नहीं होता - और कर नहीं सकती माँ।"

कुछ देर चुप रहने के उपरान्त माँ ने कहा, माँ, नहीं कर सकती ऐसा नहीं कहना, करना ही पड़ेगा, छाँड़ने से नहीं चलेगा, उनको पकड़ना ही पड़ेगा। पुनः सब चुपचाप। अचानक मुझसे कहा, "कल कलकत्ते का कीर्तन खूब सुन्दर हुआ था - तुम्हारी माँ को देखा - देखते ही ख्याल हुआ - चित्रा को भेज दिया, वह कीर्तन न सुन सकी, हरिबाबा का शरीर अस्वस्थ होने के कारण अवधूत जी आना नहीं चाहते - मुझसे कहते हैं "माँ जो कहें" - मैंने कहा- बाबा लोग जो करें।"

कुछ देर चुप रह कर फिर बोलीं "पुरी (जगन्नाथ) जाओगी क्या ?" मैंने कहा, "माँ आपकी जैसी इच्छा," माँ सुनकर हँसने लगीं।

इसी समय सपरिवार एक वैष्णव आये। माँ ने उनको देखते ही पूछा, "पिताजी अच्छे तो हो ? बैठो।" मैंने माँ से पूछा, "माँ आप दक्षिण भारत में कितने दिन रहेंगी ?" माँ ने कहा, "बाबालोगों को लेकर यह छोटी लड़की आयी है। इस बार बाबालोग ले जा रहे हैं।" मैंने कहा, "आपका दक्षिणभारत में आश्रम है क्या ?" जवाब में माँ ने कहा, "माँ, तुम्हारा घर ही तो मेरा आश्रम, आश्रम माने क्या ? श्रम नहीं है जहाँ, यह छत ही मेरा आश्रम है। पेड़ के नीचे मेरा आश्रम। तुमलोग मुझे जहाँ रखोगे, वहीं मेरा आश्रम।"

माँ आगे कहने लगीं, "तीन वर्ष पूर्व हरिबाबा इस शरीर को दक्षिण भारत ले जाना चाहते थे, तब जाना नहीं हुआ इस बार योगायोग हो गया।" काफी देर तक पंखा झलते रहने के कारण मैं हाथ बदल रही थी। माँ ने समझते हुए कहा - "हवा है।" इस बार माँ ने विभुदा से कीर्तन करने को कहा। छोटा Portable हारमोनियम लाकर विभुदा "जय हृदयवासिनी शुद्धा सनातनी श्री

आनन्दमयी माँ भाईजी का लिखा यह भजन गाने लगे। भजन इतना सुन्दर भावपूर्ण था सुनने में बड़ा ही अच्छा लग रहा था। भजन के बीच ही माँ अचानक तख्त से उठ पड़ीं और कहा, "तख्त जरा इधर हटा दो मैं जरा लेटूंगी।"

हमलोगों ने जल्दी से तख्त हटा दिया, माँ छोटे से तकिये पर सिर रखकर एक तरफ करवट लेकर लेट गयीं। लम्बे बाल जमीन तक लटक रहे थे, यह देख मैंने धीरे-धीरे बालों को ऊपर उठा दिया। माँ का अलौकिक भाव था, नेत्रों से जल की धारा प्रवाहित हो रही थी चाँदनी में यह धारा चाँदी के समान चमक रही थी। मेरी दशा भी संगीन थी। जिन आँखों को रगड़ने पर कभी पानी नहीं निकलता वही मेरी आँखें स्वतः ही पानी बहाने लगीं। माँ की कैसी अद्भुत लीला—

विभुदा का गाना समाप्त होते ही माँ ने कहा, "तुम गा सकती हो ? मुझे एक सुनाओगी ?" मैं भली भाँति जानती थी कि मेरी जो हालत उस समय थी गले से आवाज निकलना नामुमकिन था, फिर भी माँ से कुछ कह न सकी। "भज राधे कृष्ण" गाने की कोशिश की पर कण्ठ मोटा फटा किसी प्रकार की भी आवाज न निकली। किसी तरह अपने को सँभाल कर पुनः कोशिश की। कुछ स्वर निकला। दो तीन पंक्ति गाकर उसे छोड़ दिया। अब की बार "भज राधे कृष्ण गोविन्दम्" यह पंक्तियाँ गाने लगी, पद के समाप्त होते माँ ने कहा, "मोहनानन्द के पद, बड़े सुन्दर हैं।" इसके बाद माँ ने पुष्प को गाने को कहा, "उसने बड़े ही सुन्दर दो भजन गाये। मेरी आँखों से तब आँसुओं की धारा बह रही थी। यह दुःख का या आनन्द का वेग था अभी भी नहीं जानती।

मन्दिर की घंटी सुनकर हम नीचे प्रसाद लेने गये, प्रसाद पाकर ऊपर आकर देखा माँ ने भी रात्रि भोग ग्रहण कर लिया है। दीदी ने माँ का प्रसाद दिया। मैंने ऊपर आकर देखा, माँ दीदी से बच्चों की भाँति कह रही हैं, "दीदी, मैं छत पर सोऊँगी। यह लोग मच्छरदानी नहीं लगा रहे हैं, मैं भी मच्छरदानी नहीं लगाऊँगी।" हमने पहले से ही निश्चित किया था कि हम भी माँ के साथ छत पर ही सोयेंगे। माँ अब सबके सोने की जगह निश्चित करने लगीं।

मुझसे कहा "तुम इस चटाई पर सोना। मेरे तख्त के पास, बुनि, गंगा, पुष्पा और बिन्दु पास पास तथा दीदी मेरे तख्त के पीछे border पर सोयेंगी।"

मैं अपनी चटाई थोड़ी दूर पर बिछा रही थी यह देख माँ ने कहा "और पास ले आओ। अब सब सो जाओ।" माँ बिछौने पर बैठी रहीं। लम्बी लम्बी चार बाँस की खटियों को माँ के तख्त के चारों ओर लगा दिया गया। माँ मच्छरदानी के बाहर आसन पर बैठी रहीं। माँ का मुख हमारी तरफ था, मैंने माँ से कहा, "आपने क्यों मेरी आवाज छीन ली ? माँ ने कहा, "नहीं री, हवा लग के गला बैठ गया था।" स्वामीजी आकर कल सुबह लड़कियों को ले जाने की बात कर रहे थे। अचानक हवा से चारों बाँस खुल कर गिर पड़े। भाग्य से चारों बाँस माँ के तख्त के पीछे जाकर गिरे, स्वाभाविक रूप से अथवा इधर उधर जैसे तैसे एक भी न गिरा था। यह देख कर माँ खिलखिला कर मधुर हँसने लगीं। स्वामी जी ने अब की बार तख्त के पायों के साथ बाँसों को बाँध दिया।

मैंने मच्छरदानी व तकिये के बदले तौलिया लपेट कर साड़ी की पोटली बना कर सिरहाने रखा। माँ को रात में भली भाँति देखूँगी इसलिये चशमा भी पहना था। माँ अभी लेट गयीं। हम लोगों ने माँ की मच्छरदानी के पीछे से एक सफेद चादर का घेरा बना दिया। क्योंकि दूसरी तरफ लड़के लोग सो रहे थे। बुनि दी कल माँ को छोड़कर चली जायेंगी इसलिये लम्बी-लम्बी साँस ले रही थीं। यह सुन कर माँ ने कहा, "बुनि, ऐसी साँसें मत छोड़ो"।

हम लोग थोड़ी देर तक माँ के तख्त के चारों ओर चुपकरके बैठे रहे माँ भी लेटी रहीं। माँ ने कहा, "तुम लोग सो जाओ। चित्रा तुम मच्छरदानी ओढ़ कर सो जाओ।" मैं चदर की तरह मच्छरदानी लपेट कर सो गयी। थोड़ी देर बाद दीदी आकर लेटीं। चारों ओर स्तब्धता थी केवल दूर से हरि संकीर्तन सुनाई पड़ रहा था।

अचानक माँ बोल उठीं, "दीदी, चित्रा की कुछ पूरी हुई क्या कहती हो" ? इसके बाद कोई बात नहीं हुई। माँ मेरी तरफ करवट लेकर एक हाथ सिर के नीचे और दूसरा हाथ मुँह पर रखकर लेटी थीं।

मैं अपना नित्यकर्म (जप) करने लगी तो देखती हूँ कि मेरा जप रुक ही नहीं रहा है। घड़ी की Pendulum की तरह नाम हो रहा है। ऐसे समय तो मन में न जाने कितनी बातें आती हैं। पर उस समय मन स्थिर शान्त था नाम के सिवाय और कुछ भी याद नहीं आ रहा था। हाथ पैरों में मच्छर काट रहे थे पर मेरा काम ठीक हो रहा था। अवश्य ही यह माँ की ही कृपा होगी। अन्यथा सैंकड़ों प्रयास करने पर भी साँसों में नाम जप नहीं सकती।

मच्छरों के कारण हाथ पैर मलते देख माँ ने कहा— "चित्रा तुझे तकलीफ हो रही है तो अन्दर जाकर सो जाओ।" मैंने कहा, "नहीं माँ ठीक है, अन्दर बहुत गर्म है।" मैंने अपने हाथ की घड़ी में देखा रात के डेढ़ बजे हैं, माँ सोयी नहीं थीं।

इस बार माँ की ओर देखने पर देखा कि इतनी चाँदनी में भी माँ काली दीख रही हैं। साथ ही आकृति भी स्थूल प्रतीत हो रही थी। माँ करवट लेकर लेटी थीं। मैंने आँखें बन्द कर ली थीं पर मैं यह समझ रही थी कि माँ मेरे हावभाव सब लक्ष्य कर रही हैं। थोड़ी देर बाद आँखें खोल कर देखती हूँ कि माँ मानो बिछौने पर नहीं हैं। पर माँ इस प्रकार लेटी थीं मानो माँ बिछौने से लगी हुई हों थोड़ी देर पहले देखा विराट और अभी क्षीण।

मच्छरों के कारण दीदी अन्दर चली गयीं। दीदी का बिस्तर करने के लिये गंगा भी भीतर गयी। उनके जाते ही माँ बिछौने से उठकर भीतर गयीं और थोड़ी देर में दीदी के साथ लौट आयीं, माँ थोड़ी देर बैठी रहीं। मैं आँख बन्द करके पड़ी रही, माताजी कब लेट गयीं पता नहीं, मेरी आँखें बन्द रहीं मैं चाहकर भी माँ की ओर देख न सकी।

ब्राह्ममुहूर्त ३ बजे मन्दिर की घंटी सुनकर उठने का सोच रही थी, गंगा, बिन्दुदी तथा पुष्पा के उठने के बाद मैं उठी। माँ करवट लेकर लेटी हैं, आसमान में चन्द्रदेव अस्ताचल की ओर रवाना हो रहे हैं।

मैंने नाम जप प्रारम्भ किया । पर मच्छरों के कारण स्थिर बैठ न सकी । थोड़ी देर बाद जाकर देखा कि पुष्प और गंगा मधुर स्वर से प्रभात कालीन कीर्तन गा रही हैं । कीर्तन के बाद हमलोगों ने स्नान किया । तब चार बजे थे । लौट कर आकर देखा कि माँ तब भी लेटी हैं । मैं थोड़ी देर माँ के तख्त के पास आकर कुछ देर बैठकर फिर अन्दर गयी । बाहर आकर देखा तो माँ बैठी थीं । माँ को प्रणाम करते ही माँ ने पूछा, "स्नान कर लिया ? प्रातः काल यहाँ बैठी थीं न ?

बिछौने से उठकर अस्तगामी चाँद की ओर थोड़ा देख कर दोनों हाथों की मुट्ठी बाँध कर खड़ी हुई । थोड़ी देर चुपचाप टहलने लगीं पीठ पर दीर्घ केश लहरा रहे थे । बुनिदी वगैरह माँ को प्रणाम करके चली गयीं । माँ उसके बाद जाकर कमरे में लेट गयीं । दीदी ने कहा, माँ विश्राम कर रही हैं । अभी दो घंटा शरीर इस प्रकार पड़ा रहेगा ।

नवद्वीप वासी वैष्णवीगण माँ के दर्शनों के लिये आयी हैं, वे लौट जा रही हैं देखकर मैंने धीरे से दरवाजा खोल कर उन्हें माँ का दर्शन कराया । थोड़ी देर बाद मैं दीदी के साथ बैठकर बात कर रही थी और हवा कर रही थी, इतने में देखती हूँ कि माँ बालों को समेट कर माथे पर जूड़ा बाँधे हुए दरवाजे के पास आकर खड़ी हो गयीं, कहा— "दीदी तुझे बुलाया, तू सुन नहीं पायी ।" दीदी झट से उठ पड़ीं, माँ आकर हमारे तख्त पर बैठ गयीं । आसन बिछाने तक का समय नहीं दिया ।

नीचे से कुछ लड़के आकर गीता पाठ करेंगे ऐसा कहने पर माँ ने कहा— "मैं इस कमरे में बैठकर सुनूँ, खिड़की खोल दो वे लोग देख सकेंगे" ।

दीदी माँ को जल व सेब खिलायेंगी अतः दरवाजा पुनः बन्द कर दिया गया, हमने गीता पाठ प्रारम्भ किया । मैंने तो स्वर युक्त गीता पाठ कभी नहीं किया अतः इन लोगों का सुनकर गुन-गुनाने लगी । गंगा माँ के कमरे से आकर हमारे साथ पाठ करने लगी, गंगा का साथ पाकर मुझे पाठ करने में सुविधा हुई । छठे अध्याय से आठवें अध्याय तक पहुँचते ही देखा अचानक माँ कमरे से निकल आयीं और जिस तख्त पर हम टेक लगा कर बैठे थे उसी तख्त पर आकर बैठीं । जल्दी से स्वामीजी ने चादर बिछा दी । माँ अपने छोटे से तकिये पर सिर रखकर हमारी तरफ करवट लेकर लेट गयीं ।

आँख खोलकर देखती हूँ कि माँ मानो किसी भाव राज्य में विराजमान हैं । अष्टम अध्याय के अन्त में माँ ने कहा एक भजन गाकर शीघ्र समाप्त करो— नीचे कीर्तन करेंगे । गंगा का भजन समाप्त होते ही माँ नंगे पैर शीघ्रता से नीचे जाकर नाट मन्दिर में बैठीं । गंगा और दीदी महात्मा गणों का भोजन तैयार करने में व्यस्त हो गयीं ।

(माँ को) पंखा झलने के लिये माँ ने मना कर दिया । भगवान् के सामने थोड़ी सी सेवा भी नहीं ली । पर आरती के समय जब पंखा झला जा रहा था तब निषेध नहीं किया ।

विभुदा ने कीर्तन प्रारम्भ किया, "दीनबन्धु दीनदयाल" इत्यादि—अचानक माँ गाने लगीं । "जगन्नाथ दीन बन्धु" "दीनानाथ दीनबन्धु" "गोविन्द गोपाल गोविन्द गोविन्द गोविन्द" घुमा फिरा कर इन पदों को विविध सुरों में घुमा फिराकर गाने लगीं । राखाल ने आकर माँ के गले में गोविन्दजी की प्रसादी माला पहना दी । हरसिंगार की लहरदार माला थी बीच-बीच में कमल

के फूल लगे थे। कीर्तन की समाप्ति पर माँ ने माला खोल दी। हमलोगों को इशारे से बुलवाया। मेरे सामने आते ही माला मेरे गले में डाल दी। मैं हतप्रभ होकर वहीं बैठ गयी। माँ ने कहा, "प्रसादी माला है, ठाकुर को प्रणाम कर आओ।" मैंने तब अपने "सचलविग्रह" (श्रीश्री माँ) को प्रणाम किया। आरती प्रारम्भ हुई।

एक बड़े वैष्णव संत ने आकर माँ को प्रणाम किया। उन्होंने माँ से प्रश्न किया, माँ मेरे इष्टदेव शिव हैं। आप कहती हैं, सब ही एक हैं, पर मैं तो ध्यान में बैठकर सैकड़ों कोशिश करने पर भी दूसरी मूर्ति की धारणा नहीं कर सकता। माँ ने कहा, "बाबा, तुम एक के पिता हो, दूसरे के पति, तथा किसी के पुत्र हो। तीन होकर भी तुम तुम हो। उसी प्रकार वह भी एक। इस छोटी बच्ची को तो लिखाई पढ़ाई नहीं सिखायी। केवल पहला भाग थोड़ा बहुत पढ़ाया है। इस छोटी लड़की को दीदी ने महाभारत जरूर सुनाया है—वहाँ कहा जाता है जो कृष्ण हैं वे ही काली बाबा तुम ही शिव।" यह कहकर माँ खिलखिलाकर हँस पड़ीं। माँ ने कहा, छोटी लड़की कभी भी झूठ नहीं बोलती। ठाकुर के सामने बैठ कर यह शरीर कह रहा है सब ही एक।

पौने ग्यारह बजते देख रवाना होने की तैयारी करने ऊपर आयी, इतने में माँ भी ऊपर आ गयीं।

दीदी अवधूत जी को खिलाकर लौट आयी हैं। माँ को अवधूत जी के मिजाज की कथा सुना रही हैं। माँ खड़ी-खड़ी सब सुन रही हैं। भोजन के समय जल देखकर उसे हटाकर उन्होंने पीने के लिये नारियल का पानी माँगा। दीदी ने इतना सब कुछ बनाया था पर उनका मिजाज देख जरा दुःखित हुई और माँ को सब सुनाने लगीं। माँ भी सब सुनने लगीं।

हमारे रवाना होने का समय हो रहा था। माँ को प्रणाम करके मैं बाहर निकल आयी। मन में सोचा माँ ने जाते समय कुछ कहा नहीं, सोचते सोचते ही माँ ने दरवाजे से हँसते हुए कहा, "तुमलोग जा रहे हो, अच्छा, आओ।"

रविवार, ५ अक्तूबर १ बजे की गाड़ी से कलकत्ते की ओर रवाना हुई। Ladies Inter class में मैं अकेली ही आयी। नवद्वीप की यादें यहीं पूरी हुईं।



माँ के संस्मरण

— श्री साम्ब सदाशिव उपाध्याय

[लेखक श्री उपाध्याय जी १९८० के आस पास श्री श्री माँ के सम्पर्क में आये । श्री श्री माँ की कृपा से आपके जीवन में काफी अनहोनी घटनायें घटी हैं । आप अस्वस्थता के कारण स्वयं लिपिबद्ध नहीं कर सकते अतः अपनी भावनाओं को वे टेप रेकार्ड के सामने कहते गये, उनके स्वजनों ने उनकी भावना को व्यक्त करने में सहयोग दिया तथा वह टेप कैसेट के रूप में हमारे पास आया । उसी के आधार पर निम्नांकित घटनायें उद्धृत की गयी हैं— सम्पादक]

मेरे पिताजी—

मेरे पिताजी गृहस्थधर्म के कर्तव्य को पूरी तरह निभाकर कालान्तर में वाराणसी आये थे, वे स्वभाव से ही आध्यात्म प्रेमी थे । कहीं संत महात्मा का पता चल जाय तो वे उनके पीछे चल देते थे । उन्हें एक दिन पता लगा कि दालमण्डी मुहल्ले में एक फकीर आये हैं, जो बहुत उच्च कोटि के साधु हैं । पिताजी उनके पास पहुँचे । फकीर के बारे में सुना जाता था कि वे जब खुश होते थे तो किसी दर्जी से कहते थे कि "लाओ एक पजामा लाओ", फिर दूसरे दर्जी से भी पजामा लाने को कहते थे और एक पजामा के ऊपर दूसरा पहन लेते थे । जब उनको पैसा मिलता तो दर्जी को पैसा दे देते थे, और पजामा भी खोल कर दे देते थे । दर्जी भी खुश हो जाता था वह इसे बाबा की कृपा मानता था । उनके आगे पीछे घूमने वालों से कहते थे "अजी मेरे आगे-पीछे क्यों घूमते हो" । एक दिन ऐसा कहने पर मेरे पिताजी ने कहा— "महाराज मुझे मार्ग दर्शन दीजिये ।" उन्होंने कहा— तुम यहाँ क्या कर रहे हो? तुम्हारा समय आ गया है । तुम सीधे विश्वनाथ के मन्दिर में चले जाओ वहाँ तुम्हें मार्गदर्शन मिलेगा । बाबा के वाक्यों को शिरोधार्य कर मेरे पिताश्री विश्वनाथ मन्दिर में पहुँचे पिताजी हनुमान जी के भक्त थे । वहाँ उनको एक गैरिक वस्त्रधारी महात्मा दिखाई दिये । उन्होंने कहा, "शिशु विहारी तुम आ गये ।" इतना कहकर उन्होंने पिताजी के मस्तक पर हाथ रख दिया और वे मूर्च्छित हो गये तथा वहीं पर गिर पड़े । होश आने पर वे महात्मा को इधर उधर ढूँढ़ने लगे पर वह नहीं मिले । एक दिन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर याज्ञिक से पिताजी की भेंट हुई । प्रोफेसर याज्ञिक ने पिताजी के कानों में द्वादश अक्षर का मन्त्र दे दिया । अब मेरे पिताजी दुविधा में पड़े क्योंकि वे हनुमान जी के भक्त थे । इस ऊहा-पोह में पड़े पिताजी को एक महात्मा ने समाधान बताया वह यह कि आप अपनी दुविधा को दूर करने के लिये यहाँ के हनुमान जी को अपना गुरु मान लें और संकट मोचन में बैठकर एक सौ आठ बार हनुमान चालीसा का पाठ करें । मेरे पिताजी ने वैसा ही किया । उन्हें समस्या का समाधान भी प्राप्त हो गया । इसके बाद ही श्री श्री माँ की उन पर कृपा हुई ।

पिताजी को हृदयाघात हुआ था तथा वे अधिक चल फिर नहीं सकते थे। हमारे कमरे में माँ का एक चित्र था। जिस दिन २७ अगस्त १९८२ को श्री श्री माँ ने अपने व्यक्त शरीर को त्यागकर अव्यक्त में पदार्पण किया उसी दिन मेरे पिताजी देख रहे थे कि माँ उस चित्र में से निकल कर बाहर जा रही हैं और कमरे से गेट की ओर गयीं। पिताजी उनके पीछे-पीछे चले और माँ को "रुकिये रुकिये मत जाइये" यह शब्द कहने लगे। माँ ने कहा "बाबा, अब यह शरीर अव्यक्त में मिलने जा रहा है, अब शरीर में नहीं रहना है।" यह सुनकर मेरे पिताजी रोने चिल्लाने लगे और थोड़ी ही देर में ऑल इण्डिया रेडियो ने रात्रि समाचार में श्री श्री माँ का भौतिक देह से विदा लेने का संवाद प्रसारित किया। यह थी मेरे पिताजी की आत्मकथा।

मेरे घर में पूजा के स्थान पर लाल कपड़ा बिछाकर श्री श्री माँ का चित्र रखा हुआ है। चित्र फ्रेम में मढ़ा हुआ नहीं था। मैं और मेरी पत्नी प्रतिदिन वहाँ अगरबत्ती जलाते थे। मेरी लड़की स्वप्ना मेरी नकल उतारती थी। एक दिन वह मेरी अनुपस्थिति में अगरबत्ती जलाकर उसे लाल कपड़े के पास रख कर चली गई। मैं जब पूजा के कमरे में गया तो देखा जिस पर माँ के चित्र रखे थे वह कपड़ा तो लम्बाई चौड़ाई में पूरा ही जलकर राख हो गया। लेकिन चित्र को कहीं से भी तनिक भी दाग न लगा था। वहाँ और भी कुछ चित्र थे जो आज भी हमारे पूजागृह की शोभा बढ़ा रहे हैं। ऐसा ही अनुभव मोर्वी की रानी साहिबा को हुआ था। जब वह लन्दन में थीं तो उनके बंगले में आग लग गयी थी। आग जलते देख वे मन ही मन यह प्रार्थना करने लगीं कि माँ सब कुछ जल जाये पर सोने के डिब्बे में जो तुम्हारा चित्र रखा है उस पर आँच न आये। फायर ब्रिगेड आयी उसने आग बुझाई। घर जल कर राख हो गया था। जले हुए सामानों को जब देखा जा रहा था तब वह डिब्बा मिला और उसमें श्री श्री माँ का चित्र मुस्कुरा रहा था यह है माँ की शक्ति जो इस प्रकार भक्तों की रक्षा करती है।

(क्रमशः)

आवागमन का दुःख

— डा. प्रेम नारायण सोमानी

दुःखमय भव संसरण अनादिकाल से चला आ रहा है। जो भी आध्यात्मिक परंपरायें भारत में जन्मीं और पनपीं, उन सबकी यही मान्यता है कि बार-बार जन्मने और मरने के दुःख से छुटकारा पाना श्रेयस है। संभवतः वेदों में यह मान्यता रही होगी। इसीलिये यजुर्वेद में कहा गया है —

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्, आदित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति, नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥

यजुर्वेद 31-18

—मैं उस महान पुरुष को जानता हूँ जो कि आदित्य-वर्णा हैं और अविद्या के अंधकार से सर्वथा परे हैं। उसे जानकर ही मृत्यु का अतिक्रमण किया जाता है। इसके सिवाय अन्य कोई पन्थ विद्यमान नहीं है। मृत्यु के पार जाने का अर्थ पुनर्जन्म से मुक्त हो जाना ही है, क्योंकि पुनः जन्म होगा तो पुनः मृत्यु होगी ही। इस वैदिक ऋचा में एक बार के नहीं बार-बार के जन्म-मरण से मुक्त होने का भाव ही व्यक्त किया गया है।

अश्मन्वतीर् ईयते संरमध्वम् उत्तिष्ठत प्रतरता सखायः ।
अत्रा जहाम ये असन्नसेवाः, शिवान् वयम् उत्तरेभाभिवाजान् ॥

यजुर्वेद 31-18

—हे मित्रों! उठो और सब मिलकर दुःखरूपी पथरों से भरी हुई इस तीव्रगामिनी नदी को वलपूर्वक तैरकर पार करो। जो असेवनीय सांसारिक पदार्थ हैं, उनको यहीं छोड़ दो। जब हम परले तीर पर पहुँचेंगे तब सब प्रकार की ऊर्जा प्राप्त करेंगे। यहां जीवन की दुःखदायी नदी को पार करके परले तीर पर स्थित शिव यानी अमर अवस्था को प्राप्त करने का संकेत स्पष्ट है।

अपने यहां पुरातन काल में और अब भी मनुष्य लोक को मर्त्यलोक कहते हैं और देवलोक को अमर लोक। मर्त्यलोक का प्राणी किसी भी उपाय से देव लोक में जन्म पा ले तो अमर हो जाता है। विष्णु पुराण का कहना है कि स्वर्ग में भी वहां से नीचे गिरने के भय से प्राणी सदा अज्ञात आतंकित रहता है —

स्वर्गेऽपि पातभीतस्य क्षयिष्णोनीरित निवृत्तिः ।

आवागमन के इस दुःख को हमारे यहां के सभी मत-मतान्तरों ने स्वीकार किया है। इससे छुटकारा पाने की तड़पन सबने प्रकट की है। भिन्न-भिन्न मत-मतान्तरों के छुटकारे के उपाय भिन्न-भिन्न हैं पर लक्ष्य तो सबका एक है। आदि शंकराचार्य ने भी इसे स्वीकारा है—

नास्ति ततः सुखलेशः सत्यम् ।

—यानी सच्चाई यही है कि इस संसार में लेशमात्र भी सुख नहीं है, अर्थात् दुःख हैं । कहीं इस संसार को सुखद मान कर अपना अनर्थ न कर लें ।

विष्णु पुराण में जन्म, बुढ़ापे एवं मृत्यु का घोर दुःखमय विवरण दिया गया है—

(1) गर्भ की झिल्ली से लिप्त सुकुमार देहवाला जीव, मल-मूत्र रूप घोर कीचड़ में पड़ा हुआ माता के खट्टे, कड़वे, चरपरे, खारे और गर्म पदार्थों के सेवन से और पीठ तथा ग्रीवा की हड्डियों के कुंडलाकार मुड़ी रहने से अत्यंत पीड़ा को प्राप्त होकर और चेतनामय होते हुए भी श्वास लेने में असमर्थ रह कर अपने पूर्व जन्मों का स्मरण करता हुआ गर्भवास के दुःखों को भोगता है । जन्म के समय भी उसका मुख मल-मूत्र, रक्त-वीर्य आदि से सना रहता है तथा संपूर्ण अस्थिवंधन प्राजापत्य वायु से संतप्त होते हैं । सूतिकावात उसके मुख को नीचे कर देता है और जीव अत्यंत क्लेशपूर्वक माता के गर्भ से निकलने में समर्थ होता है । उत्पन्न होने पर बाहरी वायु के स्पर्श से अत्यंत मूर्च्छा को प्राप्त होता है । उस समय जीव दुर्गन्धित व्रण से गिरे या आरे से चीरे हुए कीड़े के समान ही गर्भाशय से पृथ्वी पर गिरता है । वह स्वयं कुछ भी कर सकने में असमर्थ रहता तथा स्नान और दुग्धाहार के लिए भी पराधीन रहता है । अपवित्र विछौने पर पड़े रहने पर मच्छर आदि उसे काटते हैं । उन्हें भी वह नहीं हटा सकता । इस प्रकार उत्पत्ति के समय और बाद में जीव आधिभौतिक दुःखों को भोगता है ।

(2) जब बुढ़ापा आता है तब अंग शिथिल होते, दांत उखड़ जाते और देह पर झुर्रियां तथा नस-नाड़ियां उभर जाती हैं । नेत्र दूर तक नहीं देख पाते और उनमें गढ़े पड़ जाते हैं । नासिका छिद्रों से रोम बाहर निकलते और देह कांपती रहती है । रीढ़ की हड्डी झुक जाती और सभी अस्थियां दिखायी देने लगती हैं, जठराग्नि मंद होकर पाचन शक्ति और पुरुषार्थ में न्यूनता आ जाती है । चलने-फिरने, उठने-बैठने आदि में भी कठिनाई होती है, कान और नेत्र अशक्त हो जाते हैं, और लार निकलने से मुख भी मलिन हो जाता है । इंद्रियां अपने अधीन नहीं रहतीं और मरणासन्न अवस्था की प्राप्ति होती है तथा अपने देखे-सुने पदार्थों की भी याद नहीं रहती । एक वाक्य कहने में भी कष्ट होता तथा श्वास-खांसी के प्रकोप से जागता रहता है । दूसरों के द्वारा उठाया बैठाया जाता है, स्वयं कुछ कर नहीं सकता ।

(3) मृत्यु के समय उसकी वाणी और हाथ पांव शिथिल हो जाते हैं, देह काँपती है बार-बार मूर्च्छा या अर्धमूर्च्छा के बीच कभी-कभी चेतनता आ जाती है । उस समय वह अपने धन-धान्य स्त्री-पुत्र, भृत्य और नर आदि के प्रति मोह करता हुआ व्याकुल हो जाता है तभी मर्मभेदी आरे और भयंकर वाणों के समान भीषण रोगों के बंधन काटने लगते हैं । नेत्र चढ़ जाते हैं और तालु तथा ओष्ठ शुष्क होने लगते हैं । दर्द के कारण हाथ-पांव पटकता है और फिर दोनों के कारण कंठ रुद्ध होकर घर्घर करने लगता है । महान ताप, ऊर्ध्व श्वास और भूख-पिपासा से व्याकुल हो जाता है । ऐसी दशा में भी यम-यातना प्राप्त करता हुआ बड़े क्लेश से देह त्याग करता है ।

मूर्खतावश मनुष्य भूख, प्यास और शीतादि की शान्ति को सुख समझते हैं। परन्तु यथार्थ में वह दुःख मात्र ही हैं और अंत में विष्णु पुराण कहता है—

—सारा संसार दुःखमय है।

सम्राट् पुष्यमित्र शुंग के पुरोहित महर्षि पतंजलि ने तो दुःखमेव सर्वं विवेकिनः (योग सूत्र 2-15) का उद्घोष किया है। उन्होंने दुःख के स्थान पर हेय, दुःख के कारण के स्थान पर हेतु और उसे दूर करने को हान (प्रहाण) कहा है।
आदि शंकराचार्य ने आवागमन के दुःख को इन शब्दों में व्यक्त किया है—

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननी जठरे शयनम् ।
अंगं गलितं पलितं मुण्डं दशनविहीनं जातं तुण्डम् ।
वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं तदपि न मुञ्चत्याशापिण्डम् ॥
अर्थमनर्थम् भावयनित्यम् ।
नास्ति ततः सुखलेशः सत्यम् । सर्वं दुःखमयं जगत् ।

बार-बार जन्मना, बार-बार मरना, बार-बार जननी की कोख में शयन करना। अंग-अंग जराजीर्ण हो गये, सिर के बाल पक गये, मुख दंतविहीन हो गया। इतना बूढ़ा हो गया कि लाठी लेकर भी कठिनाई से चल पाता है तिस पर भी घनीभूत तृष्णा (आशा) नहीं छूटती। उसे छुड़ाने के लिए अर्थ क्या है? और अनर्थ क्या है? सार क्या है? और निस्सार क्या है? इसकी साधना करे और यह समझता रहे कि इस संसार में लेशमात्र भी सुख नहीं है।

परवर्ती सतों ने भी इसे अपने ढंग से प्रकट किया है।

जैसे मीरा कहती हैं —

यो संसार बह्यो जात है, लख चौरासी री धार ।

.....आवागमन निवार ॥

तुलसीदास जी कहते हैं :

घोर भव नीर निधि नाम निज नाव रे ।

संत कबीर कहते हैं :

कहत कबीर सुनो भाई साधो आवागमन मिटाऊँ ।

उनका एक शिष्य कहता है :

लख चौरासी भटक मनुज तन पायल हो ।

चौरासी लाख योनियों की भटकन से छुटकारा पाने के लिये इस मानव जीवन का उपयोग करें ।



"कामधेनु कलि काशी"

—स्वामी शिवानन्द सरस्वती

"लोपामुद्रे सामुद्रा कापीह जगतीतले ।

वाराणस्याः प्रदश्येत तत्कर्ता न यतो विधिः ।"

काशीखण्ड के ५वें अध्याय के ७१ वें श्लोक में अगस्त्य जी कहते हैं हे लोपामुद्रे काशी जैसी रचना परिपाटी तो और कहीं भी भूतल में दृष्टिगोचर नहीं होती, फिर हो कैसे? जगत रचयिता ब्रह्मा की सृष्टि में तो उसकी रचना ही नहीं हुई है । महाराज भर्तृहरि ने अपने वैराग्य शतक में लिखा है—

उद्यानेषु विचित्र भोजन विधिस्तीव्रार्तितीव्रतपः ।

कौपीनं वरणं सुवस्त्रमनितं भिक्षाटनं मण्डनम् ।

आसन्नं मरणञ्च मंगलं समं यस्यां समुत्पद्यते तां काशीं परिहृत्य हन्त !

विवुधैरन्यत्र किं स्थीयते ?"

अर्थात् जहां पर बगीचों में नाना प्रकार के भोजन बनाकर खाने की विधि है । फिर कठिन से भी कठिन तप जहां पर हो जाता है, यों ही जहां कौपीन का पहनना ही उत्तम वस्त्र समझा जाता है, फिर भीख मांगना जहां आभूषण है एवं जिसमें मृत्यु का पहुंच जाना ही परम मंगल के समान माना जाता है, उस काशीपुरी को छोड़कर बुद्धिमान लोग दूसरे स्थानों पर क्यों रहते हैं ।

काशी का महत्व लोक और वेद दोनों में प्रसिद्ध है । यहां के निवासी श्री शंकर एवं माता पार्वती हैं । कालभैरव यहां के कोतवाल हैं । दण्डपाणि भैरव जैसे दण्ड देने वाले जज हैं तथा गणेश जी जैसे अनेक अनुपम सभासद हैं । पांचकोश के बीच में बसा हुआ काशी क्षेत्र पुण्य का खजाना और स्वार्थ एवं परमार्थ दोनों का साधक है । कल्याणयुक्त काशी पंचक्रोशी धर्म अर्थ और कर्म के गुणों का सम्यक ज्ञान है, जिसके माध्यम से व्यक्ति मुक्त होता है । स्वार्थ या परमार्थ कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो काशी पंचक्रोशी से प्राप्त न की जा सके । भुक्ति मुक्ति प्राप्ति के अनेक साधन हैं जिसे साधक अपने सामर्थ्यानुसार अन्तर्निहित कर सफल होने की चेष्टा करता है । युग-युग से जन्म जन्मान्तरों से जीव अपनी मुक्ति के लिए न जाने कहां-कहां भटकता है । परन्तु साधन का ठीक-ठीक ज्ञान न होने से लक्ष्य की प्राप्ति में विलम्ब होना स्वाभाविक है । मुक्ति के अन्यतम साधनों में काशी की पंचक्रोशी प्रामाणिक एवं मुख्य है ।

"काशी प्रदक्षिणा येन कृता त्रैलोक्यपावनी-सप्तद्वीपा ।

सात्वि शैला भूः परिक्रमातिऽमुना" ॥

हे भवानी जिसने काशी की प्रचक्रोशी प्रदक्षिणा दर्शन यात्रा की है उसने त्रैलोक्य पावनी सप्तद्वीप सप्त समुद्र सम्पूर्ण पर्वतों के सहित पृथ्वी की प्रदक्षिणा दर्शनयात्रा सम्पन्न कर ली है, वह पुरुष निष्पाप और पुण्यवान होकर कृतार्थ होता हुआ चौरासी लाख योनियों से छूटकर शिव सायुज्य मुक्ति प्राप्त करता है ।

"प्रत्यब्द ये प्रकुर्वन्ति पञ्चक्रोश प्रदक्षिणाम् ।

जीवन्मुक्तास्तु ते ज्ञेया निष्पापाः काशिवासिनः ॥

जो मनुष्य प्रतिवर्ष पञ्चक्रोशी की प्रदक्षिणा दर्शन यात्रा करते हैं वे मनुष्य जीवन्मुक्त हैं और काशी-वासी निष्पाप हैं ।

"यावज्जीवं वसेत काश्यां प्रत्यब्दं सुप्रदक्षिणाम् ।

कुर्यादेव निरालस्याः आनन्द सदन स्याहि ॥"

जन्म भर जब तक काशी में वास करे तब तक आनन्द सदन काशी की वार्षिक पंचक्रोशी की प्रदक्षिणा दर्शन यात्रा करे । आलस्य को छोड़कर पञ्चक्रोशी यात्रा अवश्य करनी चाहिए ।

भूत भावन भगवान शंकर मांगने वाले से किसी भी वस्तु की इच्छा नहीं रखते हैं । वे तो केवल देना ही जानते हैं । यह उनकी स्वभाव सिद्ध आदत है । यदि शिवलिंग पर पानी की चार बूंदें भी डाल दी जायं तो उसे ही वे सच्ची सेवा मान लेते हैं और उसके बदले में चारों फल दे डालते हैं । कोई करोड़ों क्लेश करे और खाक छान कर मर जाय पर कुछ भी पल्ले पड़ने वाला नहीं है । इस संसार में शूलपाणि श्री महादेव जी के समान दारिद्र्य को दूर करने वाला तथा दुःख और दोषादि का दहन करने के लिए दावानल रूप कोई दूसरा दयालु नहीं है । सुख के लिए काशी सदृश गृह नहीं है विश्वनाथ के समान पिता नहीं है । जगज्जननी भवानी के सदृश माता नहीं है और काशी वासियों के लिए जनार्दन ही कुटुम्बजन हैं ।

"गृहं न काशी सदृशं सुखाय पिता न विश्वेश समः क्वचिद् भवेत् ।

माता भवानी सदृशी न गर्भदा कुटुम्बमन्त्रत्यजनयो जनार्दनः ॥"

भगवान विष्णु कहते हैं— इस जगत में मेरा नाम अनन्त ऐसा कीर्तित होता है पर मैं भी काशी की गुणावली का अन्त नहीं पाता हूँ । मैं जगत पूज्य विश्वेश्वर की पूजा करने के लिए उनमें भी पूजित काशी में वैकुण्ठ नगर से नित्य ही आता हूँ । मुझमें यह जो त्रैलोक्य रक्षण में समर्थ परमाशक्ति है उसके कारण महेश्वर ही हैं क्योंकि वे ही सुदर्शन चक्र के दाता हैं ।

वैकुण्ठ नगरात् काशी नित्य विश्वेशमर्चितुम् ।

अहमायामि नियमाज्जगर्थं तदर्चिताम् ॥

मयि सा परमा शक्तिस्त्रिलोक्यारक्षणक्षमा ।

तत्र हेतुमहेशानः स सुदर्शनचक्रदः ॥"

ऐसे महिमामण्डित बाबा विश्वनाथजी भी माता पार्वती से कहते हैं कि हे देवि मैं काल भैरव के डर से दोनों अयानो में काशी की पंचक्रोशी यात्रा करता हूँ ।

काशी पंचक्रोशी प्रदक्षिणा यात्रा करने वालों को कोई भी पाप छू नहीं सकेगा उन पर पापजनित आपत्तियाँ भी नहीं आयेंगी । उनके घर में कभी दरिद्रता नहीं होगी । सभी भक्तों के शत्रु नष्ट हो जाते हैं, उन्हें कल्याण की प्राप्ति होती है तथा उनका कुल आनन्दित रहता है इससे सभी तरह के विघ्न भयंकर ग्रह पीड़ाएं शान्त हो जाती हैं । "हर हर महादेव शम्भो काशी विश्वनाथ गंगे" कीर्तन समस्त आपदाओं से रक्षा करता है तथा विभिन्न प्रकार के रोगों को नष्ट करके आरोग्य प्रदान करता है । काशी तथा काशी पंचक्रोशी का प्रचार-प्रसार करने वालों को एवं काशी पंचक्रोशी सहित काशी की अन्य प्रदक्षिणा दर्शन यात्रा करने वालों को भगवान शिव अपनी गोद में रखते हैं ।

ईसा के जीवन संबन्धी नयी बातें

—'लक्ष्मी'

सन् १९६६ में धार्मिक इतिहासविद् जर्मन लेखक होल्गर कर्स्टन (Holger Kersten) ने एक बहुचर्चित पुस्तक को प्रकाशित किया, जिस के अनुवाद यूरोप तथा एशिया की विभिन्न भाषाओं में हुए हैं। पुस्तक का नाम है — Jesus Lived in India "ईसा भारत में रहे थे।" इसी पुस्तक के बारे में कुछ जानकारी दी जा रही है।

लेखक के मतानुसार Christian Church (Vatican) ने गलत चित्रण किया है, जिस में ईसा की महानता तथा उनके मूल सिद्धान्तों को सही रूप में पेश नहीं किया गया है। ईसा के जन्म के बाद से लेकर उनके धर्मप्रचार प्रारम्भ करने तक के संपूर्ण काल के बारे में बाइबल मौन है। वह समय ईसा ने कहाँ पर बिताया, क्या किया, वह वधस्तम्भ से उतारे जाने के पश्चात् क्या हुआ, कहाँ गये, इस विषय में बाइबल अनभिज्ञ है।

सन् १८८७ में निकोलाइ नोटोविच नामक एक रशियन इतिहासविज्ञ ने कश्मीर के श्रीनगर से लेकर लद्दाख एवं तिब्बत तक की यात्रा कर के अमूल्य जानकारी इकट्ठी कर के एक पुस्तक प्रकाशित की। लद्दाख के एक बौद्ध मठ में वे जब गये तो वहाँ के लामाओं ने उनका आश्चर्यजनक उत्साह से स्वागत किया। लामा लोग मुसलमान यात्रियों से बचते थे, जिसका कारण उन के प्रधान लामा ने यह बताया कि उनके असंख्य बौद्धों को जबरन इस्लाम में खींच लिया गया है, परन्तु ईसाई लोगों ने वैसा नहीं किया, तदुपरांत "आप के ईसाई दुलाई लामाने हमारे बौद्ध मत का ही तो प्रचार किया है।"

यह ईसाई दुलाई लामा कौन थे ?

उनके इस अज्ञान पर लामा स्तम्भित रह गये। उन्होंने कहा, "बाइस बुद्धों के बाद ईसा प्रथम बुद्ध और महान धर्मप्रचारक हैं। दुलाई लामा से भी वे महान हैं, क्योंकि हमारे भगवान (बुद्ध) के आध्यात्मिक ज्ञान के वे एक हिस्सरूप हैं..... उनके नाम को और उनके कार्यों को हमारे धार्मिक पुस्तकों में (हस्तपत्रों में) सम्मिलित कर रखा गया है।"

यह सब सुनकर नोटोविच अवाक् रह गये। पूछा, "ये हस्तपत्र किस समय कहाँ पर पाये जा सकते हैं, और सर्वप्रथम किसके द्वारा लिखे गये थे?"

"भारत और नेपाल की प्रधान हस्तलिखित पुस्तकों में से शताब्दियों पूर्व अनेक ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित ये हजारों पुस्तकें इस समय ल्हासा (तिब्बत) में हैं। उनकी अनेक प्रतियाँ बनाकर ल्हासा से हमारे लामा लोग लाये हैं।"

उन्होंने आगे बताया कि ये सब पवित्र पुस्तकें हैं और आप इन्हें और कहीं भी देख नहीं पाएंगे। नोटोविच ने निश्चय किया कि इस विषय में अधिक संशोधन करेंगे। तब वे स्वयं लेह

पहुँचे और कुछ दिन ठहर कर तिब्बत के विश्वविद्यालय मठ हेमिस पहुँच गये । वहाँ पर उन्हें वस्तुतः यह ज्ञात हुआ कि उस 'रहस्यमय बौद्ध ईसा' का जीवन 'इजरायल के ईसा' से हুবहू मिलता था ।

ईसामसीह इति च मम नाम प्रतिष्ठितम् ॥ ३१ ॥

इति श्रुत्वा स भूपालो नत्वा तं स्लेच्छपूजकम् ।

स्थापयामास तं तत्र स्लेच्छस्थाने हि दारुणे ॥ ३२ ॥

(भविष्यपुराण - द्वितीयोऽध्यायः)

ईसा-सम्बन्धी अनेक स्थानों की तस्वीरें खींचीं । ये सारी बातें उस पुस्तक में हैं । हिन्दुओं के मनु ऋषि ही इजिप्त के Manes, ग्रीकों के Minos, हिब्रुओं के Moses हैं । सृष्टि-प्रलय में मनु की मत्स्य-नौका की कथा ही बाइबल में आती है । वेदों के विशेषतः ऋग्वेद के सिद्धांत Moses के पास है । मोज़िस की समाधि के स्थान का भौगोलिक वर्णन नामों सहित बाइबल में है, परंतु उस स्थान का पता ईसाइयों को नहीं है, जिसको उस लेखक ने प्रमाणों के साथ कश्मीर में खोज निकाला । सभी वर्तमान नाम बाइबल के नामों से पूर्णतः मिलते हैं ।

ईसा की माता मेरी ने भी अंत में उनके साथ कश्मीर आते हुए रास्ते में (आज के पाकिस्तान में) प्राण छोड़े थे । तक्षशिला के पास उनकी समाधि है । ईसा की पवित्र समाधि श्रीनगर में है । मुसलमान लोग ईसा को युज़ आसफ़ नाम से जानते हैं । उन की कब्र में कीलों से घायल पदचिह्नों के निशान भी हैं । वधस्तम्भ प्रसंग के बाद ईसा अपने अंतरंग शिष्यों एवं माता के साथ कश्मीर आए और अंतिम समय तक वहीं रहे ।

पुस्तक में ऐतिहासिक, भौगोलिक, धार्मिक एवं वैज्ञानिक दृष्टि से सत्य को सबूत सहित प्रामाणिक रूप से दर्शाया गया है । चर्चित विषय हैं : ईसा का अज्ञात जीवन, वे कौन थे, मोज़िस व हिब्रू जाति संबन्धी चर्चा, ईसा का बचपन, तीन सितारे व तीन सयाने पुरुषों के बारे में इजिप्त के इजराइली लोग, पाश्चात्य देशों पर पूर्व के वैदिक तथा बौद्ध धर्म के दर्शन व संस्कारों का प्रभाव, ईसा का भारत आगमन व निवास कब कहाँ और कितनी बार, ईसा के शरीर को आवृत करने वाले वस्त्र की वैज्ञानिक आलोचना, वधस्तम्भ पर जीवित रहना तथा तत्पश्चात् की अंतिम समय तक की समग्र घटनाएँ जो कि भारत की यात्रा से लेकर भारत पहुँच कर बसने तक घटी थीं, राजा कनिष्क के साथ मुलाकात । इन सभी का सन्दर्भ बाइबल से लेकर किया गया है । भौगोलिक नकशों व स्थानों के नाम भी दिये गये हैं । प्रारंभिक भूमिका के रूप में दिये गये नोटोविच के लेखों का भी ऐतिहासिक एवं वास्तविक स्तर पर परीक्षण किया गया है । उक्त पुस्तक में काल्पनिक मनगढ़ंत बातें न होकर प्रत्येक घटना व निर्णय का वास्तविक प्रमाण प्रस्तुत किया गया है ।*



विशेष — लेखिका की स्वतन्त्र विचारधारा के लिए संपादक मण्डली किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है ।

— कार्यकारी संपादक

आश्रम-संवाद

१) कनखल:—

कल कल निनादिनी, स्रोतस्विनी, अमृत निर्झरिणी ब्रह्मद्रवा जाह्नवी की शीतल जलधारा से अभिषिक्त, गिरिराजनन्दिनी शैलजा के चरणचिन्हों से चिह्नित मायापुरी तीर्थ कनखल में श्री श्री माँ की दिव्य समाधि में ५ जुलाई सन् २००९ को गुरुपूर्णिमा महोत्सव अनुष्ठित हुआ। इस अवसर पर श्री श्री माँ के समाधि-मंदिर में श्री श्री माँ की विशेष समारोह से पूजा हुई एवं गिरिजी के मंदिर में १००८ स्वामी मुक्तानन्द गिरिजी की पूजा सुसंपन्न हुई। अशरण-शरण, भव ताप निवारण, श्री गुरु के चरण का स्मरण ही गुरु पूर्णिमा महोत्सव का प्रधान ध्येय है। आगामी २२ अक्टूबर से २६ अक्टूबर नवरात्र पर श्री शारदीया दुर्गापूजा अनुष्ठित होगी।

आगड़पाड़ा, कनखल तथा राँची इन स्थलों पर श्री श्री माँ के आश्रम में प्रतिवर्ष ही दुर्गापूजा विशेष समारोह के साथ अनुष्ठित होती है।

२) वाराणसी:—

वाराणसी आश्रम में भी ५ जुलाई को मातृमंदिर में श्री श्री माँ की पूजा एवं गिरिजी के मंदिर १००८ स्वामी मुक्तानन्द गिरिजी की पूजा हुई। स्वामी मुक्तानन्दगिरिजी की महानिर्वाणतिथि के उपलक्ष्य में २७ जुलाई को गिरिजी की विशेषपूजा तथा साधु भंडारा हुआ।

यह दिव्य धाम वाराणसी श्री श्री माँ की अन्यतम लीलाभूमि है। आज से ५६ वर्ष पूर्व इस वाराणसी धाम में गंगा के तट पर श्री श्री माँ का आश्रम निर्मित हुआ। अन्नपूर्णा जी का मंदिर चण्डी मंडप यज्ञशाला आदि प्राचीन तपोवन की स्मृति को संजीवित करते हैं। परन्तु काल के सुदीर्घ अन्तराल में आश्रम के उत्तर की ओर अवस्थित चंडी मंडप तथा सामने का बरामदा अपने आप ही नीचे की ओर धँसता जा रहा था। यह देख बड़े-बड़े इंजीनियर तथा आश्रम के प्रबन्धक चिन्तान्वित हुए। आश्रम की सुरक्षा के लिए अविलम्ब जीर्ण-संस्कार आवश्यक था। मातृ भक्त कुशल इंजीनियर श्री सोमेश चन्द्र बैनर्जी के निर्देशानुसार तथा श्रद्धेय ब्र. पानूदा की देख-रेख में प्रायः एक लाख रुपये से कुछ महीनों के भीतर ही, श्री श्री माँ के चरण चिह्नित चंडी मंडप, पूजा की वेदी, नैवेद्य घर सामने का बरामदा संगमरमर द्वारा नवनिर्मित होकर चित्र की भाँति सुंदर एवं दर्शनीय बन गया।

इस नवनिर्मित चंडीमंडप का उद्घाटन विगत ३० जुलाई को हुआ। इस उद्घाटन समारोह में झूलन एकादशी के पावन अवसर पर प्रातः काल श्री राजराजेश्वर नारायण शिला, शिवलिङ्ग एवं श्री श्री माँ को कीर्तन एवं वेदध्वनि के साथ प्रवेश कराने के पश्चात् नव निर्मित वासन्ती वेदी पर श्री नारायण एवं श्री श्री माँ को विराजित कर पूजा की गई। चण्डी मंडप में प्रतिष्ठित श्री राधा गोविन्दजी की भी पूजा हुई शिवजी की पूजा के पश्चात् रुद्राभिषेक एवं रुद्रीपाठ हुआ। सायंकाल सत्यनारायण पूजा हुई।

सावन का झूलन एवं सावन की घन घोर घटा प्रसिद्ध ही है इस महीने की अलग पहचान है। इस महीने में ठाकुरजी राधिका जी के साथ झूला झूलते हैं। उस मधुर लीलाको स्मरण करके हम यह झूलनोत्सव मनाते हैं। ३० जुलाई से ३ अगस्त तक प्रतिदिन सायंकाल फूलों से सुसज्जित हिंडोले में श्री गोपाल जी को झुलाते हैं, एवं कीर्तन करते हैं। कन्यापीठ के ठाकुर घर में भी खूब सजाकर झूलनोत्सव मनाया जाता है।

झूलन द्वादशी के दिन श्रीभाईजी की तिरोधान तिथि की विशेष पूजा एवं साधु भंडारा हुआ।

३ अगस्त झूलन पूर्णिमा के दिन श्री गोपालजी की विशेष पूजा एवं रात को श्री श्री माँ की स्वयं दीक्षा के उपलक्ष्य में पौने बारह से सवा बारह बजे तक ध्यान हुआ।

प्रतिवर्ष ही झूलन जन्माष्टमी के बीच में तीन चार दिन कन्यापीठ की कन्यायें लीला करती हैं। इस वर्ष भी कन्याओं ने रामचरितमानस के सीतान्वेषण में हनुमान जी का लंका गमन, भक्त रहमान, भक्त गोबर्द्धन डाकू, एवं श्रीकृष्ण की निकुंज लीला का सुन्दर प्रदर्शन किया।

११ अगस्त रात के १२ बजे श्री गोपालजी का दुग्ध, दधि, घृत, शहद, शर्करा पञ्चामृत से अभिषेक शृंगार एवं षोडशोपचार पूजा संपन्न हुई। कीर्तन हुआ। कन्यापीठ के हाल में मिट्टी के खिलौने से झाँकियाँ सजायी गयी थीं। दूसरे दिन नन्दोत्सव के दिन कन्यापीठ की छोटी कन्यायें गोपालजी के सामने ग्वाल बाल तथा नन्दबाबा के वेष में सिर में दही लेकर नृत्य करती हैं, दही की हांडी तोड़ते हैं। इस प्रकार हम लोग खूब आनन्द मनाते हैं।

कलकत्ता के श्री श्री माँ के पुरातन भक्त श्री अपूर्व कुमार वन्द्योपाध्याय तथा श्री तरुणेन्द्रनाथ ठाकुर एवं श्रीस्वपन कुमार गांगुली के स्वर्गीय माता-पिता की मोक्ष प्राप्ति के लिए विगत २३ अगस्त से श्रीमद्भागवत सप्ताह प्रारंभ हुआ। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध वक्ता मातृभक्त श्री अशोक भाई कुलकर्णी जी ने श्रीमद्भागवत की सुललित व्याख्या की। प्रथम दिन प्रातःकाल भागवत के आनुष्ठानिक कृत्यों के साथ श्री श्री माँ एवं गोपालजी तथा अन्नपूर्णा जी की विशेष पूजा की गई। शाम को भागवत की व्याख्या प्रारंभ हुई। श्री अशोकभाई ने भागवत के माहात्म्य का वर्णन करते हुए खूब सुन्दर माँ की बातें कहीं। किस प्रकार एक मातृभक्त के जीवन में भागवती कथा के श्रवण का फल प्रत्यक्ष फलित हुआ। प्रसंग में आपने कहा "जो जुड़ता है वह भक्त है जो विखरता है वह भक्त नहीं है।" अर्थात् जिनका मन भगवान के चरणों में युक्त रहता है वे ही भक्त हैं तथा जिनका मन भगवान के चरणों में युक्त नहीं रहता है वह अभक्त है।

श्रीमद्भागवत का हृदय है भागवत का दशम स्कन्ध। दशम स्कन्ध का हृदय है, दशम स्कन्ध का पूर्वार्द्ध। दशम स्कन्ध के पूर्वार्द्ध का हृदय है रासपंचाध्यायी और रासपञ्चाध्यायी का हृदय है गोपीगीत। माखन चोर का आध्यात्मिक वर्णन अतीव मनोग्राही था। नन्दनन्दन भगवान् श्रीकृष्ण ग्वाल बालों के साथ ब्रजभूमि में गोचारण करने जाते हैं साथ में वन भोजन के लिये कलेवा ले जाते हैं। श्रीकृष्ण की यह गोपबालकों के साथ वनभोजन की लीला को ही मराठी में 'गोपाल काला लीला' कहते हैं। झाँकी प्रदर्शन के साथ इस लीला का सुंदर ढंग से वर्णन किया गया। गोवर्द्धन धारण लीला के दिन भी भागवत मंच के सामने एक नातिविशाल गोवर्द्धन पर्वत मिट्टी गोवर, फूल

पत्नी आदि से सजाया गया है। पर्वत के चारों ओर रंगोली से सजावट की गई। भागवत व्याख्यान के उपरान्त सबने निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करते हुए गोवर्द्धन की परिक्रमा की—

"गोवर्द्धनधराधार गोकुलत्राणकारक।

विष्णुबाहुकृतच्छाय गवां कोटि प्रदो भव ॥

भागवत के अन्तर्गत रासलीला, कंसबध, उद्धव-संवाद, रुक्मिणी-हरण, रुक्मिणी विवाह, आदि का सुंदर ढंग से वर्णन किया। ३० अगस्त भागवत की समाप्ति हुई। ३१ ता. को संपूर्ण गीता एवं विष्णु सहस्रनामपाठ, होम, पूर्णाहुति ब्राह्मण भोजन हुआ।

भागवत सप्ताह के बीच में २५ ता. को ललिता सप्तमी तिथि में श्री गुरुप्रियानन्दजी की तिरोधान तिथि के उपलक्ष्य में श्रीगुरुप्रियादीदी का षोडशोपचार से पूजन एवं साधुभंडारा हुआ एवं २६ अगस्त को राधाष्टमी के दिन श्री श्री माँ का ध्यान हुआ।

८ सितम्बर उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री विष्णुकान्त शास्त्रीजी की उपस्थिति में महामहोपाध्याय पद्मविभूषण श्री गोपीनाथ कविराजजी का ११५ वां शुभ जन्मदिवस मनाया गया। इस सुअवसर पर सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के प्राक्तन कुलपति पदमविभूषण डॉ. विद्यानिवास मिश्र एवं प्रो. विश्वनाथ वेङ्कटाचलम जी, वर्तमान कुलपति डॉ. राममूर्ति शर्मा तथा अनेक विद्वद्गण ने महामनीषी के चरणों में श्रद्धांजलि समर्पित की।

अनुष्ठान के प्रारंभ में कन्यापीठ की कन्याओं ने वेदपाठ द्वारा वैदिक मंगलाचरण किया। काशी के प्रसिद्ध विद्वान् डॉ. विश्वनाथ भट्टाचार्य ने स्वागत भाषण दिया। कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियों के द्वारा 'गोपीनाथ वन्दना' के उपरान्त श्रद्धांजलि ज्ञापन करते हुए राज्यपाल श्री विष्णुकान्त शास्त्री ने कहा — "धन, मान प्रतिष्ठा के प्रति आप पूर्ण रूप से अलिप्त थे, जिसे देखकर आश्चर्य होता था। आपने अपने को निश्छल रूप से श्रीगुरुदेव के चरणों में तथा श्री श्री माँ के चरणों में समर्पित कर दिया था। अतः उनका आशीर्वाद आपके जीवन में पूर्णरूप से प्रतिफलित हुआ। आप महार्पाडित होते हुए भी महासाधक थे।" स्वामी जगदीश्वरानन्दजी ने धन्यवाद दिया।

३) श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ, वाराणसी :-

श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ में प्रतिवर्ष ही कई उत्सव विशेष रूप से मनाये जाते हैं जैसे— वार्षिकोत्सव, संस्कृतदिवस, गणतन्त्रदिवस, स्वतन्त्रतादिवस, आदि। इस वर्ष भी १५ अगस्त को स्वतन्त्रतादिवस मनाया गया।

इस अवसर पर २१ अगस्त को कन्यापीठ में संस्कृत दिवस समारोह समनुष्ठित हुआ। इस सभा के अध्यक्ष काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्राध्यापक प्रो. डॉ. श्री नारायणमिश्रजी थे। मुख्यातिथि के पद पर प्रसिद्ध भामवर्तवर्मा श्री अंशोकभाई कुलकर्णी जी समासीन थे। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डॉ. श्री कमलेश झा सिम्हानीय विशिष्ट अतिथि थे। कन्याओं ने सुचारु रूप से संस्कृत भाषा में कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

कार्यक्रम के पश्चात् पंडित डॉ. कमलेश झा जी ने संस्कृत भाषा की महिमा के बारे में बताया । श्रद्धेय श्री कुलकर्णी जी ने कहा- "भाषा भावों की अभिव्यक्ति करती है । श्री श्री माँ कहती हैं कि "ऐसी एक स्थिति है जहाँ पहुँचने पर स्वतः ही सब भाषाओं की उत्पत्ति होती है" उस अवस्था को प्राप्त करने में संस्कृत भाषा ही सर्वाधिक सहायक है । संस्कृत भाषा का यह वैशिष्ट्य है कि विभिन्न उपसर्गों के द्वारा एक शब्द के अनेक अर्थ होते हैं ।" आगे आपने कहा कि जैसे माँ की एक वाणी की अनेक व्याख्या की जा सकती है वैसे ही संस्कृत भाषा के एक शब्द में अनेक अर्थ निहित हैं । उदाहरणतः आपने श्रीमद्भागवत के गोपीगीत का उल्लेख किया । आदरणीय डॉ. श्रीनारायण मिश्र जी ने कहा- "यहाँ कन्याओं की संस्कृत भाषण की पटुता को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि संस्कृत भाषा शाश्वत काल तक अमर रहेगी । परा विद्या (उपनिषद विद्या) अपरा विद्या (विज्ञान आदि अर्थकरी विद्या)- इन दोनों के लिए ही संस्कृत भाषा समान रूप से उपयोगी है ।" धन्यवाद ज्ञापन के उपरान्त सभा की समाप्ति हुई ।

४) श्री श्री माता आनन्दमयी चिकित्सालय, वाराणसी :-

१५ अगस्त स्वतन्त्रता दिवस के शुभ असर पर माता आनन्दमयी चिकित्सालय में विशेष कार्यक्रम अनुष्ठित हुआ इसमें उत्तर प्रदेश के वित्तमन्त्री श्री हरीशचन्द्र श्रीवास्तव जी ने मुख्यातिथि के रूप में तिरंगे झंडे को फहराया, कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियों ने 'वन्दे मातरम्' देशगीत एवं राष्ट्रीयगीत गाया । श्री हरीशचन्द्र जी ने कहा- "आज वन्दे मातरम् गा रहे हैं झंडे फहरा रहे हैं एक दिन ऐसा था जब कि मात्र एक बार वन्दे मातरम् कहने से एक युवक को अपने प्राणों की बलि देनी पड़ी । वे थे भारत माता के वीर पुत्र श्रीचन्द्रशेखर आजाद । भारतमाता के कितने वीर पुंगवों को तिरंगे फहराते हुए अपने प्राणों की बलि देनी पड़ी । आज हम स्वतन्त्र भारत के स्वतन्त्र नागरिक हैं । अतः हमें ऐसा काम नहीं करना चाहिए जिससे हमारे बीच परस्पर प्रेम की भावना विच्छिन्न हो । आज हमें लौह पुरुष श्री वल्लभभाई पटेल को भी श्रद्धा के साथ स्मरण करना चाहिये । क्योंकि उन्होंने ही सर्व प्रथम भारत को एक संघराज्य के रूप में संगठित किया । आज रोम ग्रीक, आदि प्राचीन समृद्ध देश धूमिल हो चुके हैं किन्तु प्रायः १२ सौ वर्ष तक पराधीन रहकर भी संघर्ष करते हुए उन्नत मस्तक होकर आज भी भारत सबके सम्मुख गौरवान्वित होकर खड़ा है यही भारत की महानता है ।" विधायक श्री श्यामदेव रायचौधरी ने भी 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा' इस पर सुन्दर भाषण दिया ।

विगत ६ सितम्बर को Inner Wheel Club Varanasi North द्वारा स्त्रीरोग विभाग के लिए प्रायः ४०,०००/- रु. के यन्त्रादि एवं विभिन्न उपकरण प्रदान किए गए । इस उपलक्ष्य में एक विशेष कार्यक्रम का आयोजन किया गया । इस कार्यक्रम में अनेक लोग उपस्थित थे ।

विगत १२ सितम्बर को Varanasi Metro Junior Chamber ने निर्धन रोगियों के लिए कई हजार रुपये की मूल्यवान दवाइयाँ तथा इंजेक्शन प्रदान किया । साथ ही दो Oxygen cylinder भी प्रदान किये । श्री श्री माँ की श्रीमुख निःसृत वाणी "काशी विश्वनाथ धाम मुक्तिक्षेत्र - जन

जनार्दन सेवा" ही इस चिकित्सालय का मुख्य आदर्श है। हर महीने नियमित रूप से अस्पताल की ओर से प्रायः पन्द्रह हजार रुपये की दवा आदि साधु संन्यासी-तथा गरीब रोगियों को निःशुल्क प्रदान की जाती है। इसे जानकर समागत अतिथियों ने अस्पताल की निःस्वार्थ सेवा की प्रशंसा की एवं जूनियर चेम्बर की ओर से अस्पताल के अधिकारी को स्मारक चिह्न प्रदान किया गया।

५) तारापीठ :-

प्रसिद्ध साधक श्री वामाखेपा की तपोभूमि श्री श्री तारा माँ की सिद्ध पीठस्थली तारापीठ में आश्रम में विगत ४-५ जुलाई गुरुपूर्णिमा का उत्सव धूमधाम से अनुष्ठित हुआ। इस अवसर पर गुरुपूर्णिमा के पहले दिन सायंकाल अधिवास तथा आरती के पश्चात् सत्संग, भक्तवृन्दों के द्वारा भक्तिगीति, नामकीर्तन तथा रामायण गान अनुष्ठित हुए। ५ जुलाई गुरुपूर्णिमा के दिन स्थानीय मंदिरों में विशेष पूजा, नगर भ्रमण तथा कीर्तन श्री श्री माँ की विशेष पूजा हवन, भोग, आरती, गीताचण्डी पाठ, कीर्तन एवं शिवमंदिर में वेदपाठ, रुद्राभिषेक, साधुभंडारा तथा दरिद्रनारायण सेवा आदि सुन्दर ढंग से संपन्न हुए। सायंकाल भक्तवृन्दों के द्वारा भक्तिगीति माँ नाम कीर्तन, सत्संग के बाद आनन्द सम्मेलन की समाप्ति हुई।

६) पूना :-

श्री श्री माँ के ग्रीष्मकालीन विश्रामस्थलों में अन्यतम; सुंदर जलवायु के लिए प्रसिद्ध इस पूना नगरी में श्री श्री माँ के आश्रम में, गुरुपूर्णिमा के शुभ अवसर पर गुरुपूर्णिमा महोत्सव खूब धूमधाम से मनाया गया। इस उपलक्ष में माँ की विशेष पूजा, भजन, कीर्तन हवन के बाद सबने महाप्रसाद ग्रहण किया।

विगत ११ अगस्त की रात को जन्माष्टमी की विशेष पूजा अनुष्ठित हुई। इस उपलक्ष्य में रात को ठीक बारह बजे भगवान श्रीकृष्ण चन्द्र के आविर्भाव के क्षण में मंदिर में प्रतिष्ठित श्री राधागोविन्द जी तथा गोपाल जी की विशेष पूजा अनुष्ठित हुई। रात के नौ बजे से मध्यरात्रि तक कीर्तन चलता रहा। पूजा के बाद प्रसाद वितरण किया गया। पूना आश्रम में सभी उत्सवों की विशेष पूजा श्री श्री माँ के पुरातन भक्त श्री अशोकभाई कुलकर्णी जी करते हैं।

७) वृन्दावन :-

रास रासेश्वर ब्रजेश्वर नन्दनन्दन भगवान श्रीकृष्ण की चिन्मयी लीलाभूमि श्रीधाम वृन्दावन में श्री श्री माँ के आश्रम में विगत २३ जुलाई से ४ अगस्त तक श्री राधा कृष्ण छलिया जी का झूलनोत्सव सुंदर ढंग से सम्पन्न हुआ। इस उपलक्ष में २३ जुलाई से ४ अगस्त तक प्रतिदिन प्रसिद्ध रासलीला मंडली द्वारा रासलीला तथा सायंकाल श्री राधाकृष्ण छलिया जी की विशेष झूलन पूजा अनुष्ठित हुई। ३१ जुलाई को श्रद्धेय श्री भाई जी की तिरोधान तिथि पूजा हुई। ४ अगस्त झूलन पूर्णिमा के दिन सूर्योदय से सूर्यास्त पर्यन्त अखंड श्री हरिनाम संकीर्तन प्रातः वेदपाठ, श्री विष्णुसहस्रनाम पाठ भजन कीर्तन, श्री श्री राधाकृष्ण, श्री श्री मां, श्री नित्यानन्द गौरांग महाप्रभु एवं भगवान शिवजी की षोडशोपचार से विशेष पूजा, मध्याह्न भोग, आरती, साधु भंडारा इत्यादि सम्पन्न हुए।

११ अगस्त जन्माष्टमी के दिन प्रातः श्रीकृष्ण छलिया जी का पाटोत्सव, तथा रात को श्री कृष्ण जन्माष्टमी की विशेष पूजा हुई । आश्रम के वरिष्ठ ब्रह्मचारी श्री शिवानन्द जी (श्री शैलेशदा) प्रतिवर्ष झूलन जन्माष्टमी तथा अन्य सभी उत्सवों की विशेष पूजा करते हैं ।

२६ अगस्त को मंदिर में श्री राधाष्टमी की विशेष पूजा हुई ।

८) दिल्ली :-

भारत के केन्द्र-बिन्दु दिल्ली नगरी में कालकाजी स्थित श्री श्री माँ के आश्रम में स्वामी आशीषानन्द जी की पुण्य स्मृति में विगत २६ अगस्त से २ सितम्बर तक श्रीमद्भागवत सप्ताह ज्ञान महायज्ञ आयोजित हुआ । श्रीधाम वृन्दावन के सुप्रसिद्ध भागवत वक्ता स्वामी रुद्रप्रदेवानन्दजी ने भागवत की सुललित व्याख्या की । ३ सितम्बर को प्रातः हवन, साधुभंडारा ब्राह्मण भोजन आदि सम्पन्न हुए ।

९) कोलकाता :-

कला-कृतियों की नगरी कोलकाता के आगड़पाड़ा आश्रम में २६ अगस्त से २ सितम्बर तक भागवत जयन्ती सप्ताह पारायण हुआ । आश्रम के स्वामी निर्मलानन्द जी ने मधुर वंगभाषा में भागवत की सुललित व्याख्या की । भागवत श्रवण से सब आनन्द विह्वल हो गये ।

१०) राँची :-

झाड़खंड की राजधानी राँची नगरी में श्री श्री माँ के आश्रम में ५ अक्टूबर से १० अक्टूबर तक पंचदिवसीय ज्ञानयज्ञ पारायण आयोजित हुआ । कैलास पीठाधीश्वर महामण्डलेश्वर स्वामी विद्यानन्द गिरि जी महाराज श्रीमद्भगवद्गीता का शांकरभाष्य पारायण, श्री विष्णु सहस्रनाम भाष्य पारायण, एवं कठोपनिषद का विद्वत्तापूर्ण प्रवचन करेंगे ।

११) जमशेदपुर :-

उद्योग नगर जमशेदपुर में श्री श्री माँ के आश्रम में विगत ४ जुलाई को सायंकाल मातृनाम सङ्कीर्तन एवं श्रीसुजीत कुमार चक्रवर्ती (दादाजी) की उपस्थिति में सत्संग सम्पन्न हुआ । ५ जुलाई को गुरुपूर्णिमा के शुभ अवसर पर श्री श्री माँ तथा स्वामी मुक्तानन्द गिरिजी की विशेष पूजा अनुष्ठित हुई । २७ जुलाई को गिरिजी महाराज की निर्वाण तिथि के उपलक्ष पर उनकी विशेष पूजा हुई । २७ अगस्त को श्री श्री माँ का ध्यान सत्संग मातृवाणी का पाठ, नाम कीर्तन आदि सुंदर ढंग से संपन्न हुए ।

आश्रम प्राङ्गण में नवनिर्मित अतिथि भवन का उद्घाटन, स्वामी भूमानन्दजी का आश्रम में पदार्पण तथा अन्यान्य सन्त महात्माओं का सत्संग आदि अनुष्ठित हुए प्रत्येक पूर्णिमा में नियमित रूप से सत्यनारायण पूजा, प्रति अमावस्या में विशेष काली पूजा, तथा प्रति शनिवार श्रीशनि पूजा, अनुष्ठित होती हैं ।

माँ आनन्दमयी विद्यालय, आगरतला

श्री श्री माँ के दिव्य ख्याल से त्रिपुरा की राजधानी आगरतला में राजप्रसाद के परिसर में नवप्रतिष्ठित आश्रम भवन में जो अपूर्व सुन्दर सरस्वती की मूर्ति आज से उन्नीस वर्ष पूर्व श्री श्री माँ ने अपने श्रीहस्तों से प्रतिष्ठित की थी, उसी का मूर्त प्रकाश है यह माँ आनन्दमयी विद्यालय ।

त्रिपुरानरेश महाराजा वीर विक्रम किशोर माणिक्य बहादुर के एकान्त आग्रह से 'त्रिपुरा कन्या' विश्ववन्दिता श्री माँ के श्री चरणों में प्रासाद-संलग्न सरोवर के तट पर अवस्थित प्रसिद्ध उमा-महेश्वर मन्दिर के साथ जो विस्तृत भूखंड अर्पित किया गया था, उसी भूमि पर श्री श्री माँ के एक अपूर्व ख्याल से आश्रम भवन के भित्ति-स्थापन के साथ ही क्रमशः तीन बार वसन्त-पंचमी की शुभ-तिथि में मृन्मयी सरस्वती प्रतिमा की विशेष समारोह के साथ पूजा सम्पन्न हुई थी । इसके बाद ही सन् १९८२ में चैत्र नवरात्र के अवसर पर श्री श्री माँ ने स्वयं पधार कर ठीक उसी स्थल पर अति गुप्त रूप से अपने साथ लायी हुई देवी सरस्वती की संगमरमर की मूर्ति को अपने हाथों से स्थापित किया । अनगिनत भक्त उनका दर्शन कर कृतार्थ हुए । किन्तु इस दिव्य ख्याल का मूल सूत्र क्या था । यह आज भी सबके निकट अज्ञात ही रहा । त्रिपुरा महाराज की ही उदारता से आश्रम के अति सन्निकट स्थित और एक भूखंड श्री श्री माँ के चरणों में अर्पित किया गया । आगरतला से लौटते समय उस भूमि की ओर देखकर श्री श्री माँ के श्रीमुख से यह वाणी निःसृत हुई - "देखो इस स्थान पर भी बाद में कोई शुभकार्य हो सकता है ।"

पराविद्यादायिनी माँ सरस्वती ने स्थानीय भक्तों को यह अन्तःप्रेरणा दी कि श्री श्री माँ के आदर्शानुसार एक विद्यालय की स्थापना से ही इस स्थान का यथार्थ सदुपयोग हो सकता है । सब भक्तों के अथक प्रयत्न से एवं स्थानीय एम. पी. श्री सुधीर रंजन मजुमदार की सहयोगिता से एम. पी. फांड से प्राप्त दो लाख रुपये से विद्यालय-भवन का निर्माण कार्य सन् १९९९ की सरस्वती पूजा के बाद प्रारम्भ हुआ । मात्र चार कमरे के निर्माण के बाद ही अगले वर्ष रथयात्रा के दिन ३ जुलाई, सन् २००० को इस विद्यालय का शुभारम्भ हुआ है । सम्भवतः अब तक साढ़े तीन लाख रुपये खर्च हुए, पर अभी भी अनेक कार्य असम्पूर्ण हैं । इस महत् कार्य में जिन्होंने स्वतः प्रेरित होकर सहायता की है उनमें विशेष उल्लेखनीय हैं—श्रद्धेय स्वामी भास्करानन्दजी महाराज ब्र. निर्वाणानन्द जी, स्वामी निर्गुणानन्दजी, माँ आनन्दमयी सेवा समिति (अमेरिका), डॉ. विपिन भट्ट (अमेरिका), स्वामी सत्यानन्दजी (हवाई आश्रम), श्री मोहन मुरजानी परिवार (इंग्लैंड), श्री भूपेन्द्र सिंह राठौर (अहमदाबाद), श्रीमती शुभ्रा मुखर्जी, श्री चित्तरञ्जन दास, श्री वाणीव्रत साहा, श्री कुमुदबन्धु साहा, श्री प्रियव्रत भट्टाचार्य, श्री मधुसूदन चक्रवर्ती, श्री तडित् मोहन दास गुप्त, श्री विद्युत कान्ति राय, श्री अनिल साहा, श्री केशव साहा, श्री वासुदेव भट्टाचार्य, श्री देवु बनर्जी आदि ।

वर्तमान में श्री श्री माँ के नाम से संचालित इस विद्यालय में नर्सरी से पाँचवीं कक्षा तक छोटे छोटे बालक-बालिकाओं को पढ़ाया जाता है। छात्र तथा छात्राओं की संख्या कुल मिलाकर २८ एवम् अध्यापक तथा अध्यापकों की संख्या कुल ८ है। प्रधान शिक्षक के रूप में कार्यरत हैं श्री श्री माँ के परम भक्त श्री प्रियव्रत भट्टाचार्य जी। सभी दृष्टि से इस विद्यालय का परिचर्यन अत्यन्त आवश्यक है। फर्निचर तथा पुस्तकालय के उपकरण एवम् और भी कुछ कमरों का निर्माण हो - इस उद्देश्य से जो लोग स्वेच्छा से आगे आकर सहायता करेंगे वे अवश्य ही माँ सरस्वती तथा श्री श्री माँ के कृपापात्र होंगे। अति सामान्य दान भी अत्यन्त आदर के साथ ग्रहण किया जायगा एवम् कोई भी बड़ा अनुदान स्वतः ही आयकर नियमानुसार कर मुक्त होगा।

पत्र व्यवहार तथा कोई भी सहायता प्रेषित करने का पता :

सचिव

श्री श्री आनन्दमयी संघ

(माँ आनन्दमयी आश्रम स्कूल फण्ड)

पैलेस कम्पाउण्ड,

पो. आगरतला - ७९१००९

त्रिपुरा राज्य (पश्चिम)

शोक-संवाद

१. स्वामी देवानन्द गिरि :-

आश्रम के स्वामी निर्मलानन्द जी की माता स्वामी देवानन्द गिरि जी का विगत ९ जुलाई को ९४ वर्ष की अवस्था में चन्दन नगर में महाप्रयाण हुआ ।

आपकी दीक्षा स्वामी मुक्तानन्दगिरि (दीदीमा) से हुई थी एवं संन्यास दीक्षा स्वामी भास्करानन्दजी से हुई थी ।

२. श्री अमूल्य चक्रवर्ती :-

आश्रम के अति प्राचीन साधु श्री शाश्वतानन्दजी महाराज का भतीजा श्री अमूल्य चक्रवर्ती का ७४ वर्ष की अवस्था में ७ अगस्त २००९ को कलकत्ते में देहावसान हो गया ।

श्री श्री माँ के निर्देश से वाराणसी आश्रम में अखंड सावित्री महायज्ञ में आपने एक 'होता' के रूप में अंश ग्रहण किया था ।

श्री श्री माँ के पावन चरणों में आपकी आत्मा सतत लीन हो यही प्रार्थना है ।

३. श्रीमती उमा त्रिवेदी :-

श्री श्री माँ के अति पुरातन भक्तों में विशेष सुपरिचित काशी वासी आदरणीय महावीर प्रसाद त्रिवेदीजी की पुत्रवधू श्रीमती उमादेवी लखनऊ में विगत १५ अगस्त के प्रातःकाल इष्टमन्त्र का जप करते-करते इष्ट के चरणों में सदा के लिये विलीन हो गई हैं ।

आदरणीय त्रिवेदीजी ने आध्यात्मिक जीवन यापन करते हुए ज्योतिष विद्या में गहन अध्ययन रत होकर लम्बे समय तक जीवन की अन्तिम घड़ी पर्यन्त वाराणसी आश्रम में ही निवास किया । उनके सुपुत्र श्री किशीरीलाल त्रिवेदीजी, जो कि ७० के दशक में वाराणसी में Chief Judicial Magistrate के पद पर आसीन थे, आप और आपकी धर्मपत्नी श्रीमती उमादेवी का उसी समय से आश्रमवासियों के साथ घनिष्ट सम्बन्ध हुआ । आप दोनों निरन्तर आश्रम में आते जाते रहते थे ।

श्रीमती उमा देवी अपने पति के देहावसान के बाद प्रायः २० वर्ष से भी अधिक समय तक श्रद्धेय त्रिवेदीजी के द्वितीय पुत्र गुजरात के प्राक्तन राज्यपाल तथा भारत के अवकाश प्राप्त Chief Election Commissioner श्री रामकृष्ण त्रिवेदीजी के निकट लखनऊ में उनके निवास स्थल पर ध्यान-जप में रत होती हुई अपने जीवन के अन्तिम समय पर्यन्त रहीं । आप अतिशय निष्ठावती तथा धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थीं । अधिक अस्वस्थ होने पर भी आप दिन भर पूजा, पाठ, जप,

ध्यान में ही लगीं रहती थीं। मृत्यु के समय भी आपकी अंगुलियां जप की मुद्रा में थीं। आपको सबसे अपार प्रेम तथा श्रद्धा प्राप्त हुई।

श्री श्री माँ के चरणों में दृढ़ निष्ठा रखने वाली श्रीमती उमादेवी की दिवंगत आत्मा श्री श्री माँ के दिव्य चरण-कमलों के ध्यान में सदा के लिये विलीन हुई, इसमें कोई सन्देह नहीं। आप के परिजनों के ऊपर श्री श्री माँ के अमोघ आशीर्वाद का वर्षण हो यही माँ के चरणों में प्रार्थना है।

आगामी उत्सव-तालिका

- | | | |
|----|-------------------------------|-----------------|
| १. | श्री श्री शारदीया दुर्गा पूजा | — २२-२६ अक्टूबर |
| २. | श्री श्री लक्ष्मी पूजा | — ३१ अक्टूबर |
| ३. | श्री श्री कालीपूजा (दीपावली) | — १४ नवम्बर |
| ४. | अन्नकूट उत्सव | — १५ नवम्बर |
| ५. | संयम सप्ताह | — २३-२९ नवम्बर |
| ६. | रास पूर्णिमा | — ३० नवम्बर |
| ७. | गीता जयन्ती | — २६ दिसम्बर |

"हरि कथा ही कथा, और सब वृथा व्यथा"

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

अमेरिका के पेन्सिलवेनिया राज्य में स्थायी रूप से पंजीकृत संस्था माँ आनन्दमयी सेवा समिति (Mass, INC) के स्वयं सेवकों की ओर से परमाराध्या श्री श्री माँ के सभी भक्तजनों को सप्रेम "जय माँ" ।

इस संस्था का उद्देश्य श्री श्री माँ की जीवन लीला रहस्य की सेवा, धार्मिक कार्य, सत्संग एवं जनसेवा सहित सनातन धर्म तथा श्रीमद् भागवत् धर्म युक्त प्रक्रिया है ।

अमेरिका सरकार द्वारा इस समिति के लिये सम्पूर्ण कर मुक्ति (Tax - exemption) प्राप्त है । जिसका नम्बर है 23-2967597 जो IRS Code 501 (C) (3) के अनुसार कार्यों के लिये है ।

अमेरिका एवं आस-पास के देशों में स्थायी रूप से निवास करने वाले मातृभक्तों से विनती है कि "माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता" (त्रैमासिक पत्रिका) जो चार भाषाओं (हिन्दी, बंगला, गुजराती एवं अंग्रेजी) में श्री श्री माँ की दिव्य जीवन लीला सम्बन्धी गाथा एवं अमूल्य वाणी के संकलन के रूप में प्रकाशित होती है MASS, INC से प्राप्त कर सकते हैं । पत्रिका का वार्षिक चन्दा 12/- बाहर डॉलर मात्र है ।

अन्य विस्तृत जानकारी के लिये निम्नलिखित पते पर कृपया सम्पर्क कीजिये :-

Mahadev R. Patel
President, Ma Anandamayee Seva Samiti, INC
212, Moore Road
Wallingford, PA 19086-6843
Tel : 610-876-6862 Fax : 610-876-1351
email : maha devpatel @ netscape. net.

जय माँ

AN APPEAL TO DEVOTEES

CONCERT FOR A CAUSE A SANTOOR RECITAL

In aid of

MA ANANDAMAYEE

KANYAPEETH & VIDYAPEETH

To be held at Mumbai on Friday, 11th January, 2002.

featuring

Padmabhushan Pt. Shivkumar Sharma

with

Ustad Zakir Hussain
(tabla)



SOUVENIR-2002

To be released on this occasion.

Generous donations towards this noble cause
through advertisements/donations will be greatly appreciated.

Please contact :

Anand Trust : Sadhana Rayon House, Dr. D.N. Road, Fort,
Mumbai - 400 001. Tel. 261 4922

With best compliments from :

*"The pilgrimage to the goal
of human existence is the
only path to Supreme happiness."*

—Sri Ma

M/s. Sugam Parivahan Ltd.
43, Lekh Ram Road
Daryaganj, New Delhi-110002
Ph. 3257581/3268459 Fax : 3267462

With best compliments from :

**"Abandon yourself to God
in all matters without exception."**

—Sri Ma

M/s Anandamayee Forgings (Pvt) Ltd.
A-5, Site-IV, Industrial Area
Sahibabad, Ghaziabad-201010
Ph : 770064 - Fax : 770427

● जय माँ श्री माँ जय जय माँ ●

"मैं तो सब समय तुम लोगों के साथ साथ ही हूँ, तुम लोग देखना नहीं चाहते हो तो मैं क्या करूँ।"

—श्री श्री माँ



DIAMOND SPRAYERS

for Plant Protection

ESTD - 1984

Bharat Bhushan Gupta

☎ (O) 7281330
(R) 3623348
(M) 9811236809

Gupta Agro Company

Manufacturers & Suppliers of :

AGRICULTURAL SPRAY PUMPS & SPARE PARTS FOR PLANT PROTECTION

P-31, Alipur Road, Narela, Delhi-110040

RAJ TRADERS

Manufacturers of Corrugated boxes

Sri Rajesh Gupta

A-109, Bhagawati Vihar, Uttam Nagar, New Delhi-110059

Ph. Off. 011-5631628, Res. 011-3541814

व्यापारी मित्र

आयकर, बिक्रीकर और व्यापार संबंधी कायदेकानू के बारे में पूर्ण जानकारी देनेवाला केवल एकमात्र मराठी मासिक पत्रिका, सुवर्ण महोत्सव वर्ष में प्रकाशित !

"व्यापारी मित्र" की स्थापना १९५०

वार्षिक शुल्क केवल रु. १२०

पता :- "व्यापारी मित्र पब्लिकेशन्स प्रा. लि.

नरपतगीर चौक, साई निकेतन,

३९३ नया मंगलवार पेठ, पूना ४११ ०११.

फोन : [०२०] ६३७२००, ६३१३५५, ३३१०९४

फैक्स नं. : [०२०] ६३७३६८

With Best Compliments from

At the lotus feet of Shree Shree Ma

B.K. Jhala & Associates

"NIRMAL" Commercial Complex

*158, M.G. Road,
Pune.*

● जयजयमाँ

ॐ माँ

जयजयमाँ ●

"हरि कथा ही कथा और सब बृथा व्यथा ।"

—श्री श्री माँ



श्री श्री माँ के श्री चरणों में गुप्ता परिवार
की तरफ से शत शत नमन ।

श्रीचन्दभानु गुप्ता
श्रीमती शकुन्तला गुप्ता

श्री भारत भूषण गुप्ता
श्रीमती साधना गुप्ता
श्री चेतन गुप्ता
श्री हर्ष गुप्ता

श्री राजेश गुप्ता
श्रीमती अनिता गुप्ता
श्री नितिन गुप्ता
श्री कार्तिक गुप्ता

125 विवेकानन्दपुरी, सरायरोहिला, दिल्ली-110007

Res. 011-3623348,

Res. 011-3541814

Off. 011-7281330,

Off. 011-5631628

With Best Compliments From :

**"Endeavour to go through life
leaving your burdens in His
hands."**

—Ma Anandamayee

UNIQUE ELECTRONICS (Regd.)

16, Central Market,

Lajpat Nagar

New Delhi—110024

Phone : 6834559, 6836475

MA ANANDMAYEE MEMORIAL SCHOOL

RAIWALA—249205

District : Dehradun

An English Medium Residential School for Boys only.
Affiliated to Council for the
Indian School Certificate Examination : New Delhi.

A complex for the Children from Standard 1 to XII.

The School is situated at a picturesque site. Enviably hostel facilities in a calm pleasant and pollution free *Vanasthali* setting 2 km away from Haridwar-Rishikesh Road. It is designated to impart integrated education to children, drawing the best from Indian culture and traditions of the past, instructing and helping them to acquire knowledge in Humanities, Arts, Science and co-curricular activities.

The campus was once Shree Shree Ma Anandamayee's Agnatavas (Retreat) and now a Memorial School.

Registration will soon open for the academic session 2001-2002 for the Classes 1 to XII.

Admission forms, Prospectus and other information can be had from the office on payment of Rs. 100/-.
Apply to Principal.

PHONE : 0135—484232/484292

FAX : 0133—426001

With best compliments from

RAM PANJWANI & COMPANY

Timber Importers & Financiers

1—Birla Road

Harwar—249401

 : 427266, 424272, Fax : 0133—426001

Suppliers of :

Best Quality Himalayan Pine Timbers

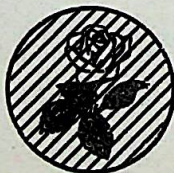
Branches :-

Jammu (J & K)

Parwanoo (H.P.)

Yamuna Nagar (Haryana)

Gandhi Dham (Gujrat)



❀ Branch Ashrams ❀

15. NEW DELHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalkaji, New Delhi-110019 (Tel : 011-6826813)
16. PUNE : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Ganesh Khind Road, Pune-411007, (Tel : 020-5537835)
17. PURI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Swargadwar, Puri-752001, Orissa.
18. RAJGIR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Rajgir, Nalanda-803116, Bihar (Tel : 06112-55362)
19. RANCHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Main Road,
P.O. Ranchi-834001, Bihar (Tel : 0651-312082)
20. TARAPEETH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Chandipur-Tarapeeth, Birbhum-731233, W.B.
21. UTTARKASHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kali Mandir, P.O. Uttarkashi-249193,
22. VARANASI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhadaini, Varanasi-221001, U.P.
(Tel : 0542-310054+311794)
23. VINDHYACHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Ashtabhuja Hill,
P.O. Vindhyachal, Mirzapur-231307, (Tel : 05442-42343)
24. VRINDAVAN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Vrindavan, Mathura-281121 U.P. (Tel: 0565-442024)

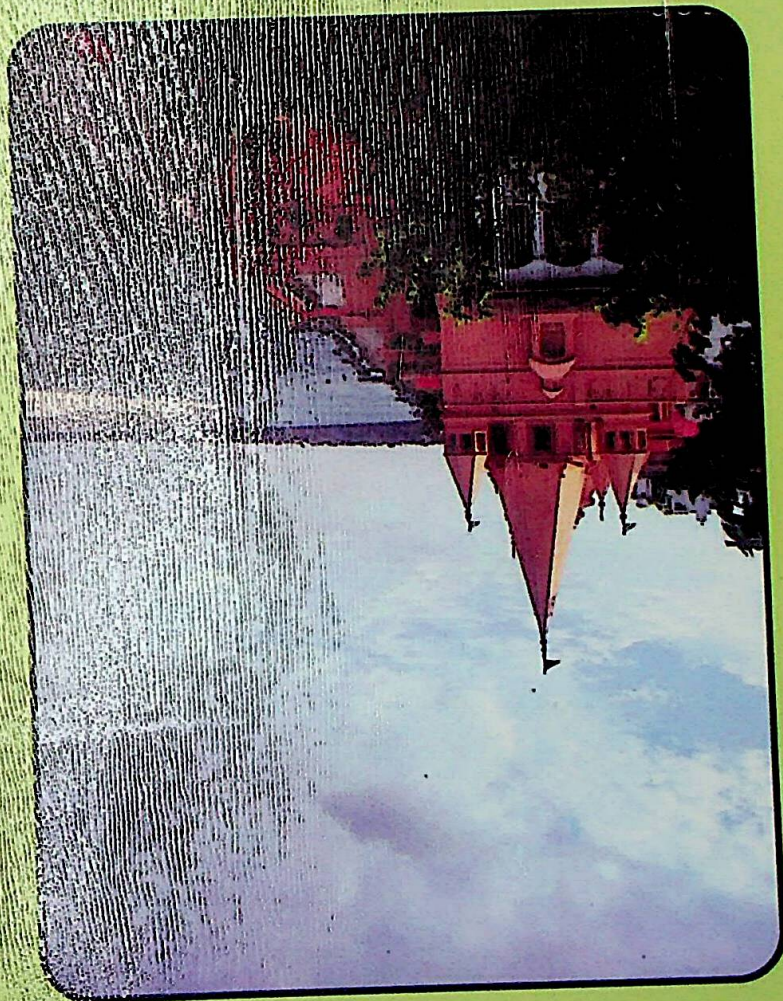
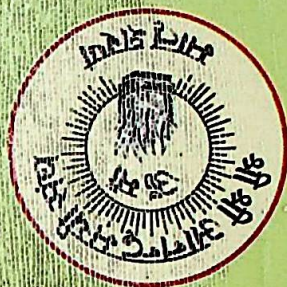
IN BANGLADESH :

1. DHAKA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
14, Siddheshwari Lane, Dhaka-17 (Tel : 405266)
2. KHEORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Kheora, Via-Kasba, Brahmanbaria.

REGISTERED WITH THE REGISTRAR OF NEWSPAPERS
FOR INDIA AS NO. 65432/97



Printed by : Ratna Offsets Ltd., Kamachha, Varanasi. Mob. 09696156790



REGISTERED WITH THE REGISTRAR OF NEWSPAPERS
& INDIA AS RNI NO. 65432/97 (HINDI), 65433/97 (GUJARATI),
65434/97 (ENGLISH), 65438/97 (BANGLA)